गजराज

तरुण भारती

गजराज

रामेश बेदी

छायांकन
राजेश बेदी

एकः सूते सकलम्

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

यह पुस्तक पुनर्निर्मित पर्यावरण-मित्र कागज पर मुद्रित है।

आवरण : हाथी के गण्ड-प्रदेशों में अवस्थित एक छोटे प्राकृतिक छिद्र में से बहता हुआ काला द्रव्य अथवा मद

ISBN 81-237-1686-9

पहला संस्करण : 1969
पहला संशोधित संस्करण : 1996 (*शक 1917*)

ELEPHANT : LORD OF THE JUNGLE (*Hindi*)

रु. 36.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क,
नयी दिल्ली-110016 द्वारा प्रकाशित

विषय सूची

प्राक्कथन

रामेश बेदी और उनके छायाकार पुत्रों, नरेश तथा राजेश, ने हाथियों को निकट से देखने तथा पुस्तक के अनुरूप छायाचित्र खींचने के लिए जंगलों में भटकते हुए अनेक कठिनाइयों का सामना किया।

श्री विनोद ऋषि, भारतीय वन सेवा, के महत्वपूर्ण सुझावों के प्रति लेखक अत्यंत कृतज्ञ है।

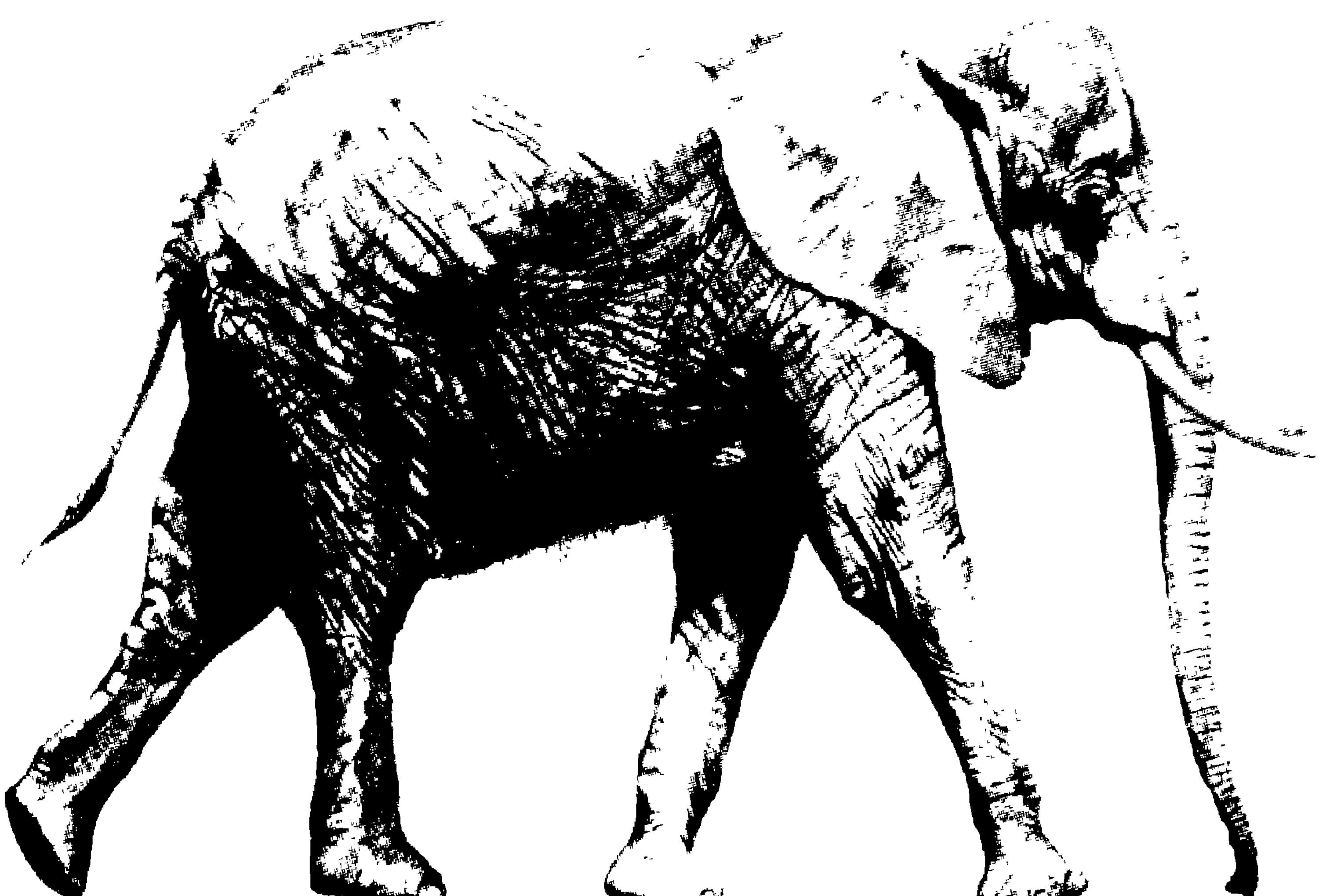


1

परिचय

अगर आप हरिद्वार के जंगलों में काम करने वाले बसेलों और लकड़हारों से पूछें कि वे किस जानवर से सबसे ज्यादा डरते हैं तो वे तुरंत उत्तर देंगे, हाथी! उनके आसपास बाघ, गुलदार, भालू, सूअर आदि वन्य पशु जंगलों को रौंदते-फिरते हैं, परंतु उनसे उन्हें कोई खतरा नहीं लगता। चरते हुए हाथियों का झुंड जब उनके डेरे के पास से गुजरता है, तब वह उनकी झोपड़ियों को उजाड़कर छोड़ता है। उनका आटा व राशन खा जाता है और उनके बिस्तरों तथा बरतनों को बुरी तरह रौंद डालता है।

कश्मीरी गूजरों को इसका खूब अनुभव है। ये लोग इस प्रदेश में लंबे अरसे से सैलानियों का जीवन बिता रहे हैं। दिन के समय परिवार का कोई भी बड़ा सदस्य डेरे पर नहीं रहता; भैंसें चराने के लिए वे तंग व घनी घाटियों के अंदर दूर तक निकल गए होते



हैं। ऐसी हालत में यदि डेरे पर हाथी आ जाएं तो छप्परों को तहस-नहस करने के साथ साथ वे सुकुमार कटरों को भी रौंद डालते हैं।

मुझे याद है कि शेरबोजी (कार्बेट नेशनल पार्क, उत्तर प्रदेश) में एक बार चारे के लिए बांधे गए पड्डे पर शेर की बजाय हाथी आ गए। सरकंडे के ऊंचे झुंडों के बीच में एक खाली जगह पर शाम को पड्डा बांधा गया था। चरते हुए हाथियों का झुंड उस दिन वहां से गुजर रहा था। मौत के पंजे का इंतजार करते हुए पड्डे को मस्त हाथियों की सूंडों ने पकड़ लिया, फिर पैरों की ठोकरों से उसका भुरता बना दिया।

हाथी सौम्य, शांत स्वभाव और यूथ में रहनेवाला प्राणी है, जो 10 से 100 तक के झुंडों में विचरण करता है। इसमें अधिकतर मादा और कुछ नर रहते हैं। प्रत्येक यूथ की नेता एक हथिनी होती है। नेता के चिंघाड़ने पर यूथ के सभी सदस्य एक जगह इकट्ठे हो जाते हैं। झुंड से बिछुड़ने पर हथिनियां त्रस्त हो जाती हैं और सहम जाती हैं। हथिनियां प्रायः झुंड से दूर जाने की हिम्मत नहीं करतीं। हाथी अक्सर चले जाते हैं, परंतु बहुत दूर नहीं। सबसे अधिक बलशाली दंतुर को झुंड का स्वामी स्वीकार कर लिया जाता है। जब कोई दूसरा नर उसका प्रतिस्पर्द्धी बनकर सिर उठाता है, तब दोनों में डटकर युद्ध होता है। जिसकी हार होती है उसके आगे दो ही रास्ते होते हैं या तो वह विजेता की अधीनता स्वीकार करके झुंड में ही रहे और या फिर उस झुंड को छोड़कर अलग रहने लगे। दूसरे प्रकार का मार्ग अपनाने वाले को क्योंकि अकेला ही रहना पड़ता है, इसलिए उसे आत्मरक्षा के लिए अधिक सजग रहना पड़ता है। अकेले विचरने की आदत के कारण वनवासी इसे इक्कड़ हाथी कहते हैं।

यह आवश्यक नहीं कि इक्कड़ सदा बहिष्कृत हाथी ही हो। यह भी हो सकता है कि एकांत जीवन शुरू करने से पहले वह एक शक्तिशाली झुंड का नेता रहा हो और मस्ती में, स्वेच्छा से, उसने यह स्वच्छंदता और निरंकुशता का रास्ता अपना लिया हो।

इक्कड़ हाथी वनों के किनारे रहने की कोशिश करते हैं जहां से खेतों में आसानी से घुस सकें। वनवासियों के डेरों के पास ये आटा, चावल और गुड़ मिलने की आशा से चक्कर लगाते हैं। साग-सब्जी बाहर रह जाए और रात को हाथी उधर निकल आए तो कुछ नहीं छोड़ते। मुर्चिसन पार्क में एक हाथी 18 किलोग्राम आलुओं को पांच मिनट में खा गया था। उसके बाद उसने रेंजर की झोपड़ी की खिड़की में सूंड डाली और 23 लीटर पौम्बे नामक देसी शराब को सुड़क गया। अगला सारा दिन उसने एक पेड़ के सहारे सोते हुए गुजारा। एक बार हाथी को केले, आलू, मकई, गन्ना आदि फसल खाने का चस्का लग जाए तो वह टलता नहीं और जान-माल के लिए एक खतरा बन जाता है। लोग इसे डराने और भगाने के अनेक उपाय करते हैं। मनुष्य के साथ इक्कड़ का सदा संघर्ष बना रहने से यह निडर, गुस्सैल, साहसी और खतरनाक बन जाता है। जब यह अकारण ही

राहगीरों पर हमला करने लगे तब इसे लागू हाथी कहने लगते हैं।

मनुष्य द्वारा सताए जाने या जख्मी किए जाने पर ये हाथी लागू बन जाते हैं। फसलों को बचाने की कोशिश में चलाई गई गोलियों के शिकार बनकर घावों से पीड़ित हो जाते हैं और बहुत गुस्सैल हो जाते हैं। फिर तो बदला लेने के लिए ये किसी भी इंसान को मार डालते हैं। प्रायः निर्दोष घसियारे, लकड़हारे और दूसरे राहगीर उनके क्रोध का शिकार बन जाते हैं।

एक इक्कड़ तो इतना धूर्त था कि सूंड में लक्कड़ और पत्थर उठाकर फेंकता था। वन-पथ पर जाती हुई लौरी का पीछा करता था। अनेक इक्कड़ हाथियों को बस के आगे सड़क रोककर खड़े होते देखा गया है। हॉर्न बजाते रहिए, वह टस से मस नहीं होता। ऐसी हालत में ड्राइवर दूर ही बस रोक देता है और यात्रियों को शांत रहने की हिदायत देता है। कई बार उसे हटाने के लिए हवा में गोली छोड़नी पड़ती है। अफ्रीका में एक हाथी अपने पास 100 मीटर के अंदर आनेवाले प्रत्येक वाहन पर हमला करता था। वार्डन के ट्रक का इसने 5 किलोमीटर तक पीछा किया। उसे गोली से मार देना पड़ा था। मोटर बस को हाथी अपने उद्दंतों की चोट, माथे की टक्कर और सूंड की पकड़ से बुरी तरह तोड़-फोड़ देता है। अफ्रीका के एक नेशनल पार्क में एक सड़क अभी नयी बनी थी। जंगली जानवर उसके परे रहना नहीं सीखे थे। एक दिन एक लौरी एक हाथी के सिर से टकरा गई। उसमें बैठे दो अफ्रीकी गंभीर रूप से जख्मी हो गये। हाथी का भी यही हाल हुआ।

मुर्चिसन पार्क में हवाई पट्टी के पास दिलचस्प घटना घटी। डकोटा के उतरने के लिए जंगल का एक टुकड़ा साफ कर दिया गया था। पट्टी पर पांच-टन का ट्रक जा रहा था। मुर्चिसन के एक दैत्य ने उसके मार्ग को रोक लिया। अपने उद्दंतों से उसने लौरी पर कम-से-कम तीन हमले किए। पहली टक्कर बोनेट पर की, दूसरी बॉडी के बीच में, इससे नीचे लटकी हुई पैट्रोल की टंकी में सूराख हो गया। तीसरी टक्कर भी उसी जगह की जिसने लौरी को पलट दिया। उसके उलटने से हवाई पट्टी का मार्ग रुक गया। लौरी की लोहे की चादर में उद्दंत दो जगह खुब गए थे। उद्दंतों से बनाए हुए छिद्र ऐसे लगते थे मानो 28 मिलीमीटर आर्मर-पियर्सिंग गोलों के लगने से बने हों। लोहे की चादर इस तरह उखड़ गई थी मानो केले के छिलके उतारे गये हों। ट्रक के तले में लगी लोहे की चादर का भी यही हाल था जो 88 मिलीमीटर मोटा तो था ही। भाग्यवश अंदर बैठे तीन आदमियों को गंभीर चोटें नहीं आईं।

मुझे अपने बचपन के वे दिन याद हैं जब मैं शिवालक की तलहटी में गंगा के किनारे, कच्चे मकानों से बने आश्रम में रहकर विद्याभ्यास किया करता था। हरिद्वार जाना होता था तब 6.5 किलोमीटर के बीहड़ मार्ग में अनेक छोटे छोटे पहाड़ी नाले, कंटकित वन और कुछ तेज धाराएं पार करनी पड़ती थीं। बरसात में गंगा का पाट बहुत फैल जाने के कारण

पुल तो टूट ही जाते थे, नौकाओं का चलना भी कठिन हो जाता था। हम लोग बाहर की दुनिया से एकदम अलग-थलग, वन्य जीवों से भरे इस एकांत जंगल में ही बंदी बन जाते थे।

बरसात में एक दिन अपने बिस्तरों को कंधों पर उठाए हुए कुछ छात्र हरिद्वार से अपने पुराने आश्रम की ओर जा रहे थे। यह घटना 1928 के आसपास की है। सुरमे जैसे काले अञ्जनवन को पार कर एक नाले के बीच में हम उतरे ही थे कि एक काना इक्कड़ हमारे पीछे भागा। उससे बचने के लिए हम लोग बिस्तरों को फेंककर बेतहाशा दौड़े। काने इक्कड़ ने बिस्तरों को पाकर उन्हें बुरी तरह रौंदा, सूंड में उठाकर इधर-उधर पटका ओर जब तक उसका गुस्सा शांत नहीं हुआ वह बिस्तरों में बंधे कपड़ों को बिखेरता रहा। उस वक्त हममें से कोई उसके हाथ पड़ जाता तो वह उसका भुरता बनाए बिना न छोड़ता। हाथी पीछा कर रहा हो तो उस समय कोट, कमीज, पगड़ी जो भी हाथ लगे, फेंककर भाग जाना चाहिए। हाथी कुछ देर तक उसी के साथ उलझता रहेगा और इंसान को बच निकलने का मौका मिल जाएगा। एक बार एक पर्यटक की कार के पीछे हाथी भागा। केलों से भरा कनस्तर गिर गया और हाथी उसी को तोड़ने-फोड़ने और खाने में लग गया। पर्यटक बच निकले।

नेशनल पार्कों और पशु-शरण-स्थलों में मुझे कई बार पालतू हाथी की पीठ पर बैठकर जंगली हाथियों को देखने और उनके फोटो खींचने के लिए जाने का अवसर मिला है। यदि हम नर हाथी पर सवार हैं तो हमें सामान्यतया केवल इक्कड़ हाथी से ख़तरा रहता है। झुंड में रहनेवाले जंगली हाथी दर्शकों में अक्सर उत्सुकता नहीं दिखाते। अपने हाथी को हम जंगली हाथियों के झुंड के बिलकुल पास ले जाते हैं। हाथी सधा हुआ है तो उसे हम झुंड के बीच में ले जाने की हिम्मत भी कर सकते हैं। कौतूहल से या मित्र भाव से जंगली हाथी हमारे हाथी के पास आता है और अपनी सूंड बढ़ाकर उसका आलिंगन करता है। प्रकट रूप से यही दीखता है कि उसे ऊपर बैठी हुई सवारियों का कुछ पता ही नहीं है।

ऐसे दंतुर हाथी जो मनुष्य के जीवन व संपत्ति के लिए मुसीबत बन जाते हैं, लागू और खूनी घोषित कर दिए जाते हैं।

जंगली हाथी से बचने के लिए सीधे रास्ते पर नहीं दौड़ना चाहिए, क्योंकि ऐसे रास्ते पर वह भी 40 से 48 किलोमीटर प्रति घंटा की गति से दौड़ सकता है और आपको पकड़ सकता है। टेढ़ी-मेढ़ी, ऊंची-नीची, वृक्षों के बीच में से जाती हुई पतली पगडंडियों का आश्रय लेने में ही भलाई होती है। इन बाधाओं में हाथी की गति में बाधा पड़ जाती है और तब दूर निकलने का अवसर मिल जाता है। यदि पहाड़ी इलाका हो तो ढलान पर नीचे की ओर भागना चाहिए। ढलान पर हाथी बहुत धीरे धीरे उतरता है। पहाड़ के ऊपर की ओर

नहीं भागना चाहिए, क्योंकि वहां आदमी की गति तो कम हो जाएगी पर हाथी की विशेष कम न होगी। इसके अलावा सूंड बढ़ाकर वह नीचे से ही चढ़नेवाले को पकड़ लेता है।

ऊंचाई से नीचे उतरते हुए यदि आपने गोल गोल पत्थरों से आच्छादित नाले का मार्ग अपना लिया तो बहुत अच्छा होगा। आप तो पत्थरों पर निकल जाएंगे, परंतु हाथी के भारी बोझ से पत्थर लुढ़क पड़ते हैं और उसे अपने को संभालना कठिन हो जाता है। वनवासी बताते हैं कि ऐसे समय हाथी बड़ी सावधानी से काम लेता है। वह अपनी पिछली टांगों पर झुक जाता है और अगली टांगों को अकड़ाकर नीचे फिसल जाता है। चिकनी गीली मिट्टी पर यदि यह रपट पड़े तो बड़ी फुर्ती से शरीर को संभालकर खड़ा हो जाता है।

बिल्ली की दुबकी चाल से तो सभी परिचित हैं, परंतु जिन लोगों ने जंगल में हाथी को जाते हुए देखा है वे आश्चर्य करते हैं कि इतनी भारी-भरकम काया वाला जानवर भी किस तरह बिना आहट के तेजी से आगे बढ़ता है। यह सामान्यतया 6 किलोमीटर प्रति घंटा चलता है। जरूरत पड़ने पर यह तेज दौड़ने वाले मनुष्य से आगे निकल जाता है और 32 किलोमीटर प्रति घंटे की गति पकड़ सकता है। इतनी तेज यह कुछ देर के लिए ही दौड़ सकता है। हां, 16 किलोमीटर प्रति घंटे की चाल से यह लगातार बहुत दूर तक भाग सकता है।

सौभाग्यवश हाथी की निगाह बहुत दूर की चीज नहीं देख पाती। इसलिए, यदि झटपट किसी बड़े पेड़ या चट्टान के पीछे छिप जाएं तो बचने की संभावना बढ़ जाती है।

हाथी के लिए कहा जाता है कि उसकी नजर ज्यादा दूर तक नहीं जाती। लेकिन वास्तव में उसकी नजर कमजोर होती है। जितनी दूर मनुष्य देखता है, उतनी दूर वह देख तो लेता है परंतु उसकी छोटी आंखें सहसा फोकस नहीं कर पातीं, चीजों को साफ साफ देखने में उसे कुछ समय लगता है। इस कमी की पूर्ति के लिए वह अपने अतिशय बड़े आकार के कानों पर अधिक निर्भर करता है। ध्वनि को ग्रहण करने की सामर्थ्य इसमें खूब विकसित होती है।

हाथी की सूंघने की शक्ति भी बड़ी तेज होती है। आदमी की गंध पाकर वह चौकन्ना हो जाता है और भाग खड़ा होता है। कभी कभी वह गंध, शब्द या दृष्टि से मनुष्य का पता पाकर भी चुपचाप निश्चल खड़ा रहता है और आदमी के समीप पहुंचने पर सहसा आक्रमण कर देता है।

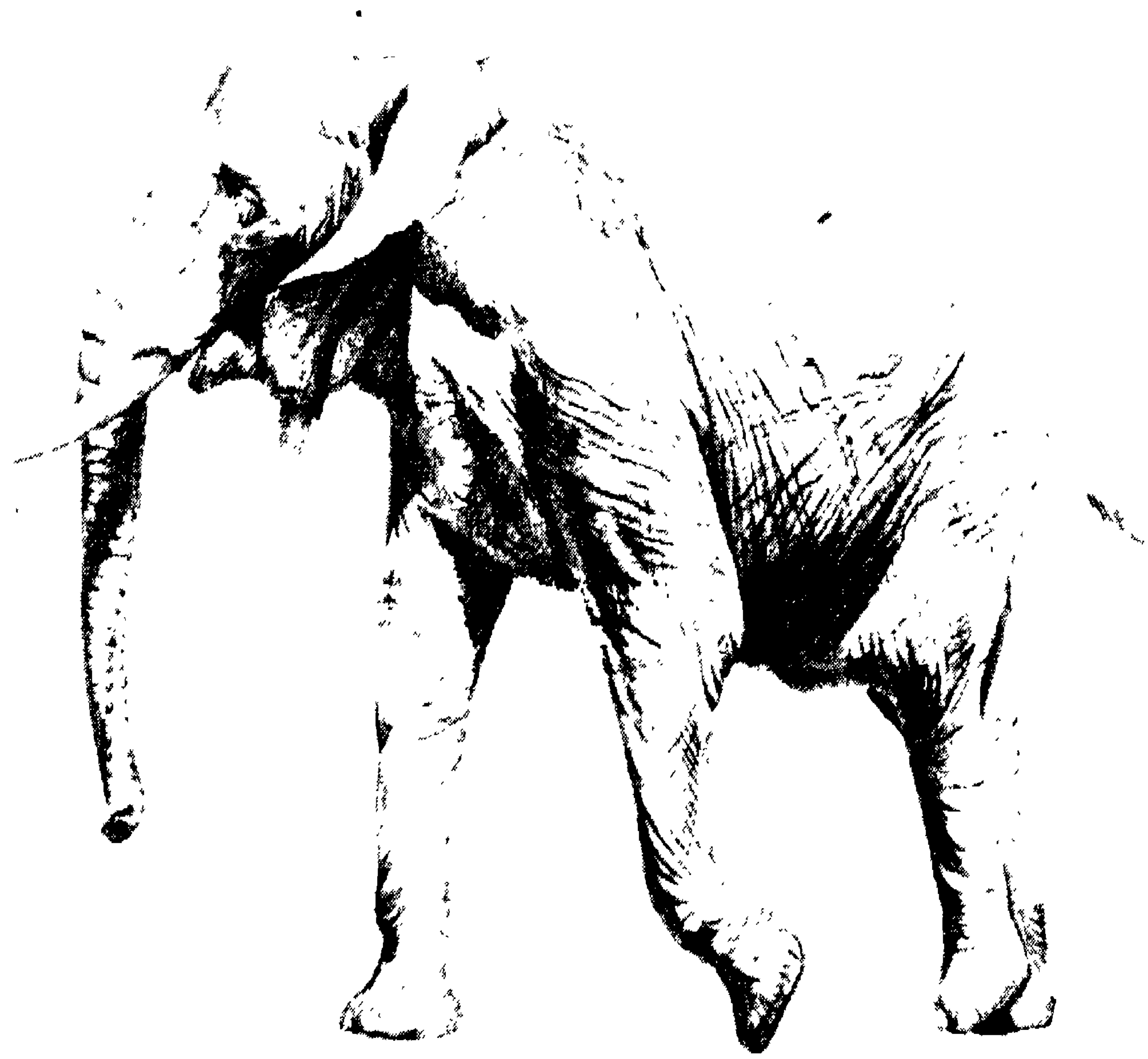
जंगल में हमने अनेक बार अनुभव किया है कि पास पहुंचने पर ही मालूम पड़ता है कि हाथी खड़ा है। यदि वह हिल-डुल न रहा हो तो दिखाई इसलिए नहीं पड़ता कि उसका काला-भूरा या सलेटी रंग जंगल की छाया और मिट्टी के ढूहों में मिल जाता है।

2

प्रणय क्रीड़ा और प्राकृतिक वास

मंगलकारी पशु

प्राचीन भारत में मनुष्य के निरंतर सान्निध्य में रहने वाले जंतुओं में गौ और घोड़े के बाद हाथी का स्थान है। धर्म शास्त्रों में हाथी का वध वर्जित था और यह एक मंगलमय पशु माना जाता था। अब भी नए कार्य को शुरू करने से पहले हाथी के देवरूप गजानन गणेश की पूजा की जाती है। भरहुत, बुद्ध गया, अमरावती तथा उदयगिरि के भग्नावशेषों में गजलक्ष्मी का अंकन है। पुष्पक विमान के स्तंभों पर गजलक्ष्मी का चित्र अंकित था। कमल



पुष्प पर आसीन और सूंड में कमल लिए हुए लक्ष्मी के प्रतीक ये हाथी जल बरसाते हुए दिखाए गए हैं। पुराणों में चारों दिशाओं के पालक चार हाथी माने गए हैं। सुमेरीयन लोगों का विश्वास था कि हाथी जीवन-तरु की रक्षा करने वाला प्राणी है। यह काल्पिक वृक्ष सब प्रकार की कामनाओं को पूरा करने वाला देवद्रुम था। मेसोपोटामिया में प्राप्त जमदेत नसर काल की शलाका मुद्रा पर इस हाथी का शरीर बैल जैसा अंकित किया गया है। जीवन-तरु के सामने खड़ा हुआ यह हमलावरों से देवद्रुम की रक्षा कर रहा है। मेसोमोटानिया में हाथी नहीं पाया जाता, इसलिए सुमेरी जाति को यह परिकल्पना सिंधु सभ्यता से प्राप्त हुई थी।

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की मुद्राओं तथा मुद्रा-छापों पर हाथी का अंकन प्राप्त हुआ है। एक मुद्रा-छाप के एक पार्श्व दर व्याघ्र-दमन का दृश्य तथा पंचाक्षरी लेख हैं, दूसरे पार्श्व पर एकश्रृंग, हाथी और गैंडा तीनों पशु, एक दूसरे के पीछे चलते हुए, देवद्रुम का अभिवादन करने जाते दिखाए गए हैं। मोहनजोदड़ो से प्राप्त तीन पहलू वाली एक मुद्रा के एक पहलू पर गैंडा, हाथी, चीता, बाघ, छोटे सींगों वाला बैल, वन-वृषभ, बकरा, मगर, कछुआ और मछली आदि मांस और घास खाने वाले विरुद्ध प्रकृति के पशु सौम्य भाव से देवद्रुम का अभिवादन करने जाते हुए अंकित किए गए हैं। मोहनजोदड़ो की एक चौरस मुद्रा पर एक त्रिमुख देवता योगासन मुद्रा में विराजमान दिखाई देता है। उसके दाएं और बाएं दो दो पशु हैं। जिनमें हाथी और बाघ दाई ओर तथा गैंडा और भैंसा बाई ओर हैं। उसके आसन के नीचे दो हिरण आमने-सामने खड़े मुड़कर पीछे की ओर देख रहे हैं। संभवतया यह पशुपति का चित्रण है जिसके सभी पशु वशीभूत हैं।

इस चित्र में ध्यान देने योग्य बात यह है कि हाथी के अलावा तीनों पशुओं के मुख पशुपति की ओर हैं। हाथी के पास एक आदमी खड़ा है। संभवतया यह पराक्रमी वीर है जो पशुपति से विमुख होकर भागते हुए हाथी को रोकने का प्रयास कर रहा है। एक अन्य मुद्रा पर तांत्रिक उपायों द्वारा हाथी को वश में करने का दृश्य है, लेकिन उसे वश में करना आसान नहीं। हाथी पराक्रमी वीर के आदेशों की परवाह किए बिना अपने शरीर के अगले भाग को ऊंचा उठाकर जोर से माथे की टक्कर मार रहा है। हड़प्पा की एक मुद्रा-छाप पर बने चित्र से पता चलता है कि हाथी बाघों को पछाड़ देने वाले पराक्रमी वीर से डरता था। उस वीर द्वारा दो बाघों को पछाड़ने के दृश्य को देखकर हाथी चुपचाप खिसक रहा है।

अमरावती के अवशेषों में भी मेसोपोटामिया जैसे विचित्र हाथी अंकित किए गए हैं, जिनका पिछला भाग मछली जैसा है। महाभारत में ऐसे हाथियों का नाम मीनबाजी और 'गजवक्त्रझश' लिखा है। मछली या मगरमच्छ के पृष्ठ भाग वाले हाथियों की कल्पना को वाल्मीकि के रणभूमि के उस वर्णन से उद्बोधन मिला है, जिसमें उन्होंने रणभूमि की उपमा

ऐसे समुद्र या नदी से दी है जिसमें हाथियों के रूप में मछलियां या मगरमच्छ भरे पड़े हैं।

कोई कोई हाथी जन्म से ही एक उद्दंत वाला होता है। गजानन गणेश भी एकदंत होते हैं। मंदिरों में गाई जाने वाली एक आरती में उनके बारे में कहा गया है :

एकदंत दयावंत चार भुजाधारी।
लड्डुन का भोग करें चूहे की सवारी।

दांत के साम्य के कारण एक उद्दंत वाले हाथी को गणेश या एकदंता गणेश कहते हैं। यह भी प्रकृति की विलक्षणताओं में से एक है। दरअसल, एकदंत गणेश में दूसरा उद्दंत निकलता ही नहीं। ऐसा एक हाथी मैंने कार्बेट नेशनल पार्क में, 1967 में, देखा था। एकदंत होने पर भी यह झुंड का मुखिया था। उस झुंड में दो दांतों वाले और भी तीन हाथी थे जो उससे दूर रहते थे। एकदंतों का स्वभाव अच्छा नहीं सुना जाता।

दक्षिण अफ्रीका में एक गैर सरकारी रक्षित-वन में गेम गार्ड बाराड़े के पीछे एक बार एक गणेश पड़ गया। वह एक झुंड का अगुआ था। उसने बहुत दूर तक उनका पीछा किया और उनकी जान लेने की हर चंद कोशिश की। भागते भागते वे बुरी तरह थक गए थे और थकान के मारे किसी भी क्षण लड़खड़ाकर गिर पड़ने की स्थिति में आ गए थे। आखिर जंगल का अंत आ गया और उन्हें हब्शियों का एक दल नजर आ गया। एक झोपड़ी के अंधेरे, दुर्गंध भरे कोने में उन्होंने शरण ली। जंगल से निकलने पर खूनी एकदंत के सामने जो सबसे पहला व्यक्ति पड़ा उसी को उसने पकड़ लिया। दुर्भाग्यवश वह एक नीग्रो स्त्री थी। सूंड से उसकी गरदन को लपेटकर उसने उठाया और धरती पर दे मारा। मरने के बाद भी उसने लाश नहीं छोड़ी। ढीली बेजान देह को वह उठाता और आसमान में झंडे की तरह लहराता हुआ नीचे दे पटकता। ऐसा उसने कई बार किया। गोली से मार न दिया जाता तो उस दिन वह न जाने कितनी ही और जानें ले लेता।

वर्गीकरण

हाथी की दो स्पष्ट जातियां उपलब्ध हैं। एक एशिया में और एक अफ्रीका में। एशिया में किसी समय हाथी की और भी जातियां पाई जाती थीं। वर्तमान काल में जो भारतीय, बर्मी, सिंहाली और सुमात्री किस्में मिलती हैं, वे सब प्राणिकी के अनुसार एक ही उपजाति की अलग अलग किस्में हैं। प्राणिविज्ञान में इस जाति को *एलिफास मैक्सिमस* लिन. (*Elephas maximus* Linn.) कहते हैं। प्राणिविज्ञान में भारतीय हाथी का नाम *एलिफास मैक्सिमस इंडिकस* जी. कुवियर (*Elephas maximus indicus* G. Cuvier) है। अफ्रीकी हाथी का नाम *एलिफास एफ्रिकेनस* लिन. (*Elephas*

africanus Linn.) है। इसका मस्तक और कान अधिक बड़े होते हैं। इन दोनों जातियों में मुख्य भेद इस प्रकार हैं :

अफ्रीकी हाथी	**भारतीय हाथी**
1. डीलडौल में बड़ा	1. डीलडौल में छोटा
2. अधिक ऊंचा। कंधे पर नाप 331 सेंटीमीटर	2. कम ऊंचा। पीठ पर एक रिकार्ड नाप 320 सेंटीमीटर
3. सबसे ऊंचा स्थान कंधे के ऊपर	3. सबसे ऊंचा स्थान पीठ का केंद्र
4. कान अधिक बड़े	4. कान अपेक्षाकृत छोटे
5. सूंड छोटी	5. सूंड बड़ी
6. दंत अधिक दीर्घ	6. दंत अपेक्षाकृत छोटे
7. अगले दोनों पैरों में चार चार उंगलियां	7. अगले दोनों पैरों में पांच पांच उंगलियां
8. पिछले दोनों पैरों में तीन तीन उंगलियां	8. पिछले दोनों पैरों में चार चार उंगलियां
9. सूंड के सिरे पर उंगली जैसे दो अवशेष-दोनों किनारों पर एक एक	9. सूंड के सिरे पर उंगली जैसा अवशेष-सामने के किनारे पर
10. नर और मादा दोनों में उद्दंत समान रूप से निकलते हैं	10. सामान्यतया नर के उद्दंत निकलते हैं
11. पालतू बनाना कठिन	11. आसानी से पालतू बन जाता है

एशियाई हाथी की तुलना में अफ्रीकी हाथी को पालने में उपेक्षा की गयी है। अफ्रीकी हाथियों को सेना के लिए सधाने का उल्लेख मिलता है। इसी से यह धारणा बन गयी है कि वह पालतू नहीं बनता। यूरोप में एशियाई हाथी तो युगों से मनुष्य की सेवा में लगा रहा है।

नस्लें

कुछ विद्वानों ने भारतीय हाथी की दो नस्लों का वर्णन किया है। एक का आधुनिक प्राणिविज्ञान में नाम है–*एलिफास मैक्सिमस दखुमेन्सिस* डेरानियागाला (*Elephas maximus dakhumensis* Deraniyagala)। इस नस्ल के हाथी, दक्षिणी भारत में पाए जाते हैं। दूसरी नस्ल उत्तर भारत और नेपाल में मिलती है। इसका प्राणिकी नाम है *एलिफास मैक्सिमस बेन्गालेन्सिस* दे ब्लेन्विल्ले (*Elephas maximus bengalensis* de Blainville)।

पहली नस्ल (*Elephas maximus dakhumensis*) के 82 प्रतिशत नरों में समुन्नत उद्दंत होते हैं, इनमें दंतलियां बहुत कम पाई जाती हैं। इस नस्ल के बड़े उद्दंतों के एक जोड़े का औसत भार 57 किलोग्राम होता है और एक उद्दंत की लंबाई 2 मीटर होती है। एक जोड़े का रिकार्ड भार 77 किलोग्राम है।

उत्तर भारत की नस्ल (*Elephas maximus bengalensis*) के लगभग 51 प्रतिशत नरों में ही उद्दंत निकलते हैं, ये प्रायः मुड़े हुए होते हैं। एक बड़े जोड़े का औसत भार लगभग 65 किलोग्राम और प्रत्येक की लंबाई 2 मीटर होती है।

इन नस्लों के अंतर्गत बहुत-सी स्थानीय नस्लें भी हैं। अंगों की आकृति, आकार, रंग, चिंघाड़, बरताव, निवास, शक्ति, शरीर की गंध, भोजन और कुछ रोगों के प्रति सहिष्णुता को आधार मानकर नस्लों के अलग अलग नाम पड़ गए हैं।

रामायण में राजाओं द्वारा बढ़िया नस्ल के हाथियों को शौकिया पालने का उल्लेख मिलता है। उनके संरक्षण और संवर्धन के हेतु छोड़े गए बड़े बड़े जंगल 'नागवन' कहलाते थे।

हिमालय तथा विन्ध्य पर्वतों की तराइयां उन दिनों अच्छी नस्ल के हाथियों के लिए प्रसिद्ध थीं। अयोध्या नगरी में ऐरावत कुल, महापद्मकुल, आंजनकुल और वामनकुल के श्रेष्ठ हाथी विद्यमान थे। ऐरावत और इन्द्रशिर पर्वतों पर पाई जानेवाली हाथी की नस्लें बहुत श्रेष्ठ और सुंदर थीं, इसलिए इन्हें 'प्रियदर्शन' कहा जाता था। रावण के महलों में हाथी अच्छी नस्ल के, सुंदर, सिखाए हुए और लड़ाकू थे।

वन का राजा

बड़े डीलडौल और वजन के कारण यह धरती पर सबसे बड़ा जानवर माना जाता है। भारत के प्राचीन साहित्य में इसे महाप्राणवान पशु कहा गया है। जो मनुष्य स्वस्थ और दीर्घजीवी होता था उसे गजप्राण कहा जाता था।[1] हाथी शक्ति का द्योतक समझा जाता था। योद्धाओं की शक्ति का इस बात से अंदाजा लगाया जाता था कि वे कितने हाथियों को वश में कर सकते हैं। भीमसेन में दस हजार हाथियों का बल बताया जाता था। जंगल के अनेक विशेषज्ञों का मत है कि वन का वास्तविक राजा हाथी है। सिंह और शेर इससे छेड़खानी नहीं करते। 275 किलोग्राम का सिंह भी सात टन के गजराज के लिए सम्मानपूर्वक रास्ता

1. शमयति गजानन्यान्गन्धद्विपः कलभोऽपि सन्।
विक्रमोर्वशीय, अंक 5; 18।
स घृष्यः स्याद्गजप्राणः सदा चातिबलेन्द्रियः।
चरक, चिकित्सा स्थान 1; (3) 21।

छोड़कर एक तरफ हो जाता है।

हाथी का भार 6,750 किलोग्राम तक पहुंच जाता है। मैसूर में दो विशालकाय हाथियों का भार क्रमशः 7,409 किलोग्राम और 6,854 किलोग्राम दर्ज किया गया है। एशिया का हाथी इतना चुस्त नहीं होता क्योंकि उसके भारी जिस्म के मुकाबले में टांगें छोटी होती हैं। हाथी की गरदन छोटी, मोटी और स्थिर होती है जिस के ऊपर महावत बैठता है। गरदन को यह इधर-उधर नहीं घुमा सकता। उम्र बढ़ने के साथ साथ हाथी के सिर और कानों पर मांस के रंग के चकत्ते पड़ जाते हैं जिनके बीच बीच में काले निशान चमकते हैं।

हाथी के पैर के नीचे जो मोटी तह होती है उसे 'तबक' कहते हैं। घोड़े की सुम या बैल के खुर के समान पक्की सड़क पर चलने से तबक घिस जाते हैं और उन से खून निकलने लगता है। इसलिए पालतू हाथी को पीलवान सदा कच्ची सड़क पर या रेतीली जमीन पर चलाता है। बड़ी उम्र के हाथियों के पिछले दोनों पैरों के तबकों के बीच में गड्ढे पड़े रहते हैं।

हाथी की सूंड वस्तुतया नाक का रूपांतर है जो लंबी और गतिशील होने के साथ-साथ चीजों को पकड़ने के योग्य भी होती है। इसके सिरे पर दो नथुने होते हैं। सूंड का सिरा कोमल होता है। उससे यह कठोर तथा कठिन काम नहीं कर पाता। सिर से 15 सेंटीमीटर नीचे, अंदर की ओर की सूंड घास और कठोर चीजों को पकड़ने, तोड़ने और उठाने के काम आती है। बचपन में दुम के बाल नरम और छोटे होते हैं। उम्र बढ़ने के साथ साथ ये सख्त होते जाते हैं और बारीक तार जैसे लगते हैं।

कान और नाखूनों से हाथी की उम्र के बारे में कुछ मोटा अनुमान लगाया जाता है। छह-सात साल के बच्चे की कनौतियां (कान के ऊपर के किनारे) सीधी तनी रहती हैं। उम्र बढ़ने के साथ साथ, तेरह से बीस बरस की उम्र तक, कनौतियां गिरनी शुरू हो जाती हैं। तीस बरस की उम्र के हाथी की कनौतियां जरूर गिरी हुई होंगी। बूढ़े हाथियों में तो कनौतियां प्रायः फट जाया करती हैं। कान की लौल (निचला किनारा) भी आयु की वृद्धि के साथ साथ नीचे लटकती जाती है।

भारतीय दंतुर हाथी की औसत ऊंचाई 246 से 276 सेंटीमीटर और हथिनी की 182 से 246 सेंटीमीटर होती है। नर हाथी 319 सेंटीमीटर से ऊपर प्रायः नहीं जाते। भारत में नर की अधिकतम ऊंचाई 335 सेंटीमीटर और मादा की 276 सेंटीमीटर मिल जाती है। ठीक ठीक माप जानने के लिए हाथी को कंधे की ऊंचाई तक नापना चाहिए। उस समय हाथी की चारों टांगें पास करके सीधा खड़ा करना चाहिए। गज-विशेषज्ञों का अनुमान है कि पालतू हाथी से जंगली हाथी कुछ अधिक लंबा होता है।

यह पाया गया है कि अगले पैर की गोलाई को दुगना कर दें तो हाथी के कंधे तक की ऊंचाई निकल आती है। इस नियम के आधार पर, मिट्टी पर पड़े पैरों के निशानों को

नापकर जंगली हाथी की ऊंचाई का अनुमान किया जाता है। मनुष्य की तरह हाथियों के भी छोटे और बड़े पैर होते हैं। इसलिए पैर की परिधि को आधार मानकर ऊंचाई को प्रामाणिक नहीं माना जा सकता। हां, मारने के बाद जंगली हाथियों के नाप लिए जा सकते हैं। इस तरह नापने में कभी कभी 335 सेंटीमीटर के हाथी भी मिल जाते हैं।

उगांडा के तत्कालीन गवर्नर सर विलियम गोवर्स ने अफ्रीकी हाथी के कंधे पर 365 सेंटीमीटर ऊंचाई नापी थी। इससे अधिक ऊंचा हाथी दुनिया में कहीं नहीं रिकार्ड किया गया।

हाथी के जो लंबे दांत बाहर निकले हुए होते हैं उन्हें उद्दंत (tusk) कहते हैं। शरीर रचना-विज्ञान की दृष्टि से कहा जा सकता है कि ऊपरले जबड़े के कर्तन-दंत (काटने वाले दांत) ही खूब बढ़कर लंबे मुड़े हुए उद्दंतों में बदल जाते हैं। नर हाथी में दांतों की यह विशेषता अधिक स्पष्ट होती है। एशियाई हथिनियों में उद्दंत सरीखे, परंतु उनसे छोटे, दो दांत मुंह से बाहर निकले हुए दीखते हैं, जिन्हें दंतलियां (tushes) कहते हैं। जिन नर हाथियों के उद्दंत नहीं निकलते उन्हें मखने हाथी कहते हैं। ऐसे हाथी श्रीलंका में तो आमतौर पर मिल जाते हैं लेकिन भारत में कम मिलते हैं। उद्दंतों वाले हाथियों को दंतुर हाथी कहते हैं। दंतुर मां-बाप का बच्चा दंतहीन हो सकता है। इसी तरह दंतहीन मां-बाप का बच्चा दंतुर हो सकता है।

दूधिया उद्दंत तकुए की शक्ल के होते हैं। इनके ऊपर इनेमल की परत चढ़ी रहती है। छह महीने के अंदर ये गिर जाते हैं। उसके बाद शीघ्र ही दंती (dentine) के उद्दंत निकल पड़ते हैं जो लगातार बढ़ते रहते हैं। हर दस साल बाद इन्हें काट लिया जाता है जिससे अच्छे परिमाण में हाथी दांत (ivory) प्राप्त होता है।

हाथी के निचले जबड़े में श्वदंत (canine) और कर्तनदंत होते ही नहीं। पश्चहानव्य (molars) दांत बड़े होते हैं और उनकी संख्या छह होती है। पहला दूधिया पश्चहानव्य दांत दो साल की आयु में गिर पड़ता है, दूसरा छह साल में, तीसरा नौ साल में, चौथा (या पहला किशोर दांत) बीस और पच्चीस साल के बीच में तथा पांचवा साठ साल में। छठा पश्चहानव्य दांत उम्र भर रहता है।

मुख के अगले भाग में उद्दंतों के अलावा कोई और दांत नहीं होते। रात को सोते समय फर्श पर टिकाने से उद्दंत के सिरे घिसते रहते हैं। रक्षा के लिए इन पर लोहा चढ़ा देते हैं।

युद्ध में शस्त्र के रूप में हाथी को अपने लंबे उद्दंतों का लाभ अवश्य होता है, परंतु ज्यादा लंबे और भारी उद्दंत घने जंगलों में उसके लिए मुसीबत बन जाते हैं। यह भी एक कारण है कि मेला शिकार में जंगली हाथियों को फंदे में फंसाने के काम में दंती गजों को नहीं रखा जाता। शिकार के लिए या वन विहार में भी इन्हें ज्यादा पसंद नहीं किया जाता।

ऐसे कामों के लिए मजबूत मादा या मखना उपयोगी रहते हैं।

टी.एच. मौण्टीथ ने असम में एकदंता गणेश को गोली से मार गिराया था। उसके उद्दंत की लंबाई 223 सेंटीमीटर और वजन 38 किलोग्राम था। बड़े उद्दंतों वाला एक हाथी सी.एन. शाडवेल्ल ने मारा था जिसके उद्दंत 223 सेंटीमीटर और 220 सेंटीमीटर थे, इनका वजन 35 किलोग्राम और 34 किलोग्राम था। दक्षिण भारत में कर्नल एफ.एस. गिलेस्पि ने एक बदमाश हाथी को शूट किया था। इसके उद्दंत सिरे पर एक-दूसरे के ऊपर थे। दक्षिण भारत में संभवतया इससे बड़े उद्दंत नहीं मिले। दोनों की लंबाई एक समान 274 सेंटीमीटर थी, एक का भार 42 किलोग्राम और दूसरे का 41 किलोग्राम था। आर.सी. मॉरिस ने भी दक्षिण भारत में एक बदमाश हाथी को शूट किया था जिसके उद्दंत जबड़े से 46 सेंटीमीटर बाहर ही एक दूसरे के ऊपर थे। इससे प्रतीत होता है कि हाथी को खाने में भी काफी दिक्कत पेश आती होगी। नापने पर उद्दंत 223 सेंटीमीटर और 236 सेंटीमीटर निकले, वजन में 31 और 28 किलोग्राम। अन्नामलाई में एक हाथी मरा हुआ पाया गया जिसके उद्दंत 238 सेंटीमीटर और 222 सेंटीमीटर थे तथा भार 37 और 41 किलोग्राम था।

एशियाई हाथी के उद्दंतों के एक जोड़े के रिकार्ड नाप 267 सेंटीमीटर और 251 सेंटीमीटर थे। अफ्रीकी उद्दंत का सबसे बढ़िया जोड़ा नेचुरल हिस्ट्री के अमेरिकन संग्रहालय में था। इनमें से एक 336 सेंटीमीटर और दूसरा 335 सेंटीमीटर लंबा था। दोनों का मिला हुआ भार 133 किलोग्राम था। शिवालिक पहाड़ियों में वर्तमान हाथियों के जो पूर्वज अतिनूतन युग (Pliocene) और प्रातिनूतन युग (Pleistocene) में ढाई सौ लाख साल पहले बसते थे उनके विशाल उद्दंत 300 सेंटीमीटर तक लंबे होते थे और उनका घेरा 68 सेंटीमीटर था। कलकत्ते के राष्ट्रीय संग्रहालय में हाथियों के इन पुरखों की अश्मीभूत खोपड़ियां और उद्दंत रखे हैं।

प्रणय क्रीड़ा

दंती या नर हाथी 25 बरस की उम्र में पूरा विकसित हो जाता है। पंद्रह बरस की हथिनी के बच्चा पैदा होते देखा गया है। इस उम्र में हाथी और हथिनी अपना जोड़ा ढूंढ़ने लगते हैं।

एक बार देखा गया कि एक खूनी मखना जबर्दस्ती एक हथिनी को वश में करने की कोशिश कर रहा था। मखने का मद नीचे गाल तक बह रहा था और वह पूरी मस्ती में था। हथिनी उसे स्वीकार नहीं कर रही थी और उससे बचने की कोशिश कर रही थी। डर के मारे वह अपने छाज जैसे कानों को सिर के साथ चिपका लेती थी। मदमस्त हाथी

पागल-सा हो गया था। सहमी हुई हथिनी को वह पीछे से पकड़ लेता और संत्रस्त हथिनी अपना मुंह फाड़कर चीख मारती।

एक बार पेट्रिक स्ट्रेसी की हथिनी सुंदरमाला गुम हो गई। डिब्रू आरक्षित वन में उसकी कई सप्ताह तक तलाश की जाती रही। एक जगह उन्हें एक बड़ा मखना दिखाई दिया जिसके गालों से मद बह रहा था। उसके साथ बहुत छोटी एक हथिनी थी जिसे वह पड़ोस के बगीचे से भगा लाया था। उसकी टांगों में अब भी जंजीरें बंधी थीं। जब वह चलती थी तब उसकी खनखनाहट साफ सुनाई देती थी। स्ट्रेसी लिखते हैं : "मैं एक नर हाथी पर सवार था। जंगली मखने को निकल जाने के लिए हमने खुला रास्ता दे दिया। लेकिन उसने हमारा पीछा नहीं छोड़ा। छोटी हथिनी उसके पीछे चली आ रही थी।" मस्ती में आया हुआ यह हाथी कितना अड़ियल हो सकता है इसका उन्हें अनुमान न था।

"हमारे चिल्लाने के बावजूद भी वह पास ही पास आता गया। मैं उसके इरादों को ठीक ठीक तो नहीं जान पाया परंतु इतना स्पष्ट था कि वह हमारे नर हाथी की उपस्थिति का विरोध कर रहा था क्योंकि उसने उसे एक प्रतिस्पर्द्धी समझा था। महावत इतना घबरा गया कि मुझे गोली चलानी पड़ी। चार नंबर की गोली उसके सिर के ऊपर एक वृक्ष के पत्तों में से फड़फड़ाती हुई निकल गई। आखिर, वह लौट गया, परंतु बड़े निडर और शानदार तरीके से।"

मैसूर में एक बार मद की मस्ती में एक जंगली हाथी वन विभाग की एक गर्भवती हथिनी के पीछे पड़ गया। जब हथिनी किसी तरह भी काबू में नहीं आई तब उसे इतना गुस्सा आया कि अपने उद्दंतों की चोटों से उसे मार डाला।

मेरे एक बिहारी सहयोगी हैं जो गज-विशेषज्ञों के खानदान में पैदा हुए हैं। उनके दादा बिहार के रईसों के लिए खरीदे जाने वाले हाथियों के बारे में सलाह-मशविरा दिया करते थे। हाल के एक अभियान में हाथियों की प्रणय-लीला संबंधी अपने पर्यवेक्षणों के बारे में मैं एक गोष्ठी में बता रहा था। आवेश में आकर अधिकार पूर्ण ढंग से उन्होंने मेरी बात काटते हुए कहा कि हमारे गांव का अदना बच्चा भी जानता है कि हाथी पानी के अंदर, जहां उन्हें कोई देख न सके, जोड़ा करते हैं। अनुश्रुतियों के आधार पर सयाने इसकी व्याख्या करते हुए बताते हैं कि पानी के अंदर हाथी का भार हल्का हो जाता है।

बहुत से सयाने हाथियों को जोड़ा करते हुए देखने को बड़ा अमंगल मानते हैं। उनका विश्वास है कि इसे देखने वाला किसी बड़ी विपत्ति में फंस सकता है।

रोमन लेखक प्लीनी (23 से 79 ईसवी) ने बताया था कि हाथी एकांत में सम्भोग करते हैं। जन-साधारण के अलावा पीलवानों ने भी मुझे ऐसी ही बातें बताई हैं। वे कहते हैं कि रतिकर्म में प्रवृत हाथी दूसरे हाथियों की उपस्थिति को बर्दाश्त नहीं करते। इस बात की पुष्टि के लिए शिकारियों और गज-विशेषज्ञों ने कई दृष्टांत दिए हैं।

इन मान्यताओं के विपरीत मैंने हाथी के जोड़े को अन्य हाथियों की मौजूदगी में मिलन करते देखा है। एक बार तो ऐसा एक जोड़ा झुंड का नेतृत्व करता जा रहा था। मैं एक ही मिनट के लिए यह दृश्य देख पाया। हम लोग तुरंत इस दुर्लभ दृश्य के चित्र लेने में लग गए। वन्य-जीवन की इस घटना के फोटोग्राफिक रिकार्ड दुनिया में बहुत ही कम होंगे। हाथियों के जोड़े बनाने का पुरातत्वीय रिकार्ड मुझे कोणार्क के सूर्य मंदिर की भित्तियों पर उपलब्ध हुआ है। जो कुछ मैंने देखा उससे यह मेल खाता है।

पीलवानों का अनुभव है कि उत्तर भारत में पालतू हाथी कभी कभी ही प्रणय लीला में प्रवृत होते हैं। असम और दक्षिण भारत में यह भी होता है कि काम का आवेश होने पर हथिनियां बहुधा जंगली हाथियों के साथ भाग जाती हैं और कुछ दिनों तक प्रणय जीवन बिताकर, शिविर में लौट आती हैं।

ढोर-डंगरों के समान ही ये भी गर्भाधान करते हैं। अक्सर हथिनी के लिए हाथियों में लड़ाई नहीं ठनती। सारा काम शांति से संपन्न हो जाता है। एक बार स्ट्रेसी और शिविर के दूसरे लोग झोपड़ियों के साये में छिपे हुए देख रहे थे। बड़े कुनकियों ने बारी बारी से हथिनी के साथ जोड़ा करने की कोशिश की। एक असफल हो जाता तो दूसरा उसकी जगह ले लेता। इसमें न तो उतावलापन नजर आता था और न लड़ाई-झगड़ा ही हुआ। कुछ गज-विशेषज्ञों के अनुभव भिन्न हैं। वे शिविर में हाथियों के प्रणय संबंध को सामान्यतया पसंद नहीं करते। क्योंकि, इस अवसर पर हाथियों में संघर्ष पैदा हो सकता है और द्वंद्व-युद्ध की नौबत आ सकती है, जिसमें मूल्यवान हाथी जख्मी हो सकते हैं। उनके इलाज व आराम के लिए कई कई महीने लग सकते हैं। इसमें बड़ा आर्थिक घाटा पड़ता है।

भारत-भूटान सीमा के समीप बंगाल के जलदापाड़ा जंगल में हाथियों का एक शिविर था। शिविर की हथिनियों से मिलने के लिए एक जंगली दंती आ जाया करता था। महावतों को उसका यह प्रणय व्यापार पसंद नहीं था, इसलिए वे हो-हल्ला मचाकर या खाली कारतूस छोड़कर उसे भगा दिया करते थे। एक बार, जब वह मस्ती में था, मध्यरात्रि के जरा पहले शिविर में दाखिल हुआ। उसने शिविर के सबसे बड़े हाथी को मार गिराया। उसके निचले जबड़े में मस्त गज ने अपने उद्दंत गाड़ दिए जो सीधे उसके मस्तिष्क तक घुस गये। शिविर का हाथी मुकाबले में बड़ा जरूर था परंतु वह प्रौढ़ अवस्था में पहुंच चुका था और साथ ही अपने खूंटे पर बंधा हुआ भी था। शिविर में सभी लोग जाग गए और जंगली दंती को भगा दिया गया।

पालती दून वन शृंखला में हथिनी के कारण एक बार प्राणलेवा युद्ध होते देखा गया था। 8 मार्च, 1967 की घटना है—

एक हथिनी के लिए तीन गजराजों में भिड़ंत हो गई। एक तो पहली टक्कर में ही भाग खड़ा हुआ, लेकिन दूसरा हार मानने वाला न था। पटेरपानी वनखंड में उन्होंने इन

हाथियों की भिड़ंत देखी। जंगल के महकमे के अधिकारी उस समय दौरा कर रहे थे। घाटी में सभी जगह शांति का साम्राज्य था। हाथियों के उद्दंत आपस में इस तरह टकराते कि उनकी आवाज तंग घाटी को घेरकर खड़े पहाड़ों से टकराकर जोर से गूंजती। ऐसा लगता जैसे बिजली कड़क रही हो।

दोनों ही घातक दांव-पेंच लगा रहे थे। प्रहार इतने जोर से किए जाते थे कि दर्द के मारे योद्धाओं की चीखें निकल जाती थीं। आक्रांता हाथी संभावित जीत की खुशी में तथा दुश्मन पर आतंक बिठाने के लिए जैसे विजय दुंदुभि बजाता था।

पास के वनखंडों में रहने वाले चालाक गुलदार, चौकन्ने शेर, भंगी गीदड़ और लकड़बग्घे इस युद्ध को दिलचस्पी से देख रहे थे। ऐसे शुभ दिन कम ही आते हैं जब किसी हाथी के मरने पर उन्हें भोज मिलता है। मांसाहारी पशुओं के लिए ऐसे मौके पर यह सूक्ति सही बैठती है–'पशवस्तत्र मोदन्ते महो वै नो भविष्यति।'

बाजू की एक जोरदार टक्कर से बलशाली हाथी लड़खड़ा गया। इस कमजोरी का गजराज ने पूरा लाभ उठाया। अंतिम दांव के रूप में संगमरमर जैसे दोनों उद्दंत 60 सेंटीमीटर अंदर तक घुस गए और उन्होंने 8 सेंटीमीटर चौड़े घाव बना दिए और फेफड़े फट गए। मर्मांतक पीड़ा से हाथी जोर से कराहा और धड़ाम से गिर पड़ा। रणभूमि में श्मशान की-सी चुप्पी छा गई।

सहायक वन्य-जंतु रक्षक तीसरे दिन रिपोर्ट तैयार करने घटनास्थल पर गए। लाश को खाने के लिए हजारों गिद्ध ऐसे टूट पड़े थे मानों टिड्डी दल ने हमला बोल दिया हो।

लाश एक करवट पड़ी थी। चारों टांगें एक ही तरफ थीं। सूंड तनी हुई थी। चोर दोनों उद्दंतों को कुल्हाड़े से काटकर उड़ा ले गए थे। आधार पर दांतों का व्यास 8 सेंटीमीटर था। लाश की परीक्षा से पता चला कि गजराज ने अपने उद्दंतों से प्रहार करके उसका शरीर छलनी कर दिया था। पूंछ के नीचे 25 सेंटीमीटर गहरा एक घाव था और अगली टांगों के बीच 25 सेंटीमीटर का गहरा घाव था। गरदन के दाहिनी ओर 8 सेंटीमीटर व्यास का एक घाव बन गया था। आमाशय के दाहिनी ओर लगभग 5 सेंटीमीटर चौड़ा एक घाव था।

अबुल फजल के आइने-अकबरी में अकबर के शासनकाल में हाथी संबंधी ज्ञान का अच्छा परिचय मिलता है। अबुल फजल ने वर्णन किया है कि गरमी में आई हुई किसी हथिनी को पाने के लिए एक हाथी दूसरे से भिड़ रहा है। उनके बीच में बच्चा आ जाता है तो वे उसे अपनी सूंड से बड़ी कोमलता से एक तरफ कर देते हैं और फिर भिड़ जाते हैं। अबुल फजल लिखते हैं कि कोई कामुक हाथी किसी तरह बंधन से मुक्त हो जाए तो उसके पास जाने की किसी की हिम्मत नहीं होती। ऐसी अवस्था में हथिनी को उसके पास ले जाते हैं। उसे देखकर वह प्रतिरोध नहीं करता और तब उसे पकड़ लिया

जाता है।

अंतिम फैसला करने वाली मादा होती है। यदि वह गरमी में नहीं है तो हाथी द्वारा किए जाने वाले सभी प्रयत्नों को विफल कर देती है। मादिन गरमी में आई हुई है या नहीं, इस बात के प्रकट रूप में कोई चिह्न दिखाई नहीं देते। यह माना जा सकता है कि गरमी में आई हुई हथिनी से एक आकर्षक गंध आती है। अन्यथा यह समझना असंभव है कि हाथी क्यों उसके पीछे लग जाता है और कभी कभी तो बड़ी दूर से वह ऐसी हथिनी की तलाश कर लेता है।

प्रजनन और बच्चा पालने में कठिनाइयां

मां बनने वाली हथिनी के चारों ओर कुछ हाथी थोड़ी थोड़ी दूरी पर खड़े थे। मोटे तौर पर एक घेरा बन गया था। सबके मुंह बाहर की ओर थे। कुछ हाथी तो स्पष्ट रूप से संतरियों की तरह चेष्टाएं कर रहे थे, मानो किसी भी ओर से आनेवाले खतरे का मुकाबला करने को तैयार हैं। बच्चे के जन्म के बाद इनकी व्यूह रचना में कुछ अंतर आ गया। हाथी पास पास आ गए, लेकिन उन्होंने अपने मुंह बाहर की ओर ही रखे। वे चिंघाड़ रहे थे, गरज रहे थे, कान फड़फड़ा रहे थे, उनके पैर अस्थिर थे और शरीर झूम रहे थे। केंद्र में एक छोटी काली दुबली चीज पड़ी थी जिसके ऊपर से मां तथा दूसरी हथिनियां झिल्ली उतार रही थीं। प्रसाविकाओं की टोली में छह हथिनियां व पांच छोटे बच्चे थे। इनके अलावा एक युवा हाथी 15 मीटर की दूरी पर खड़ा हुआ इस जन्मलीला को देख रहा था। बच्चे की सुरक्षा के लिए यह मजबूत व्यवस्था की गई थी। कुछ हथिनियां बच्चे को सहलाने लगीं और सूंडों से पकड़कर उसे खड़ा करने लगीं। इस बीच में दूसरी हथिनियों ने झिल्ली के थैले को उतार दिया था। एक ने उसे सूंड में उठाया और दूर आसमान में फेंक दिया। ऊंचाई से गिरते हुए इस थैले में हवा भर गई और वह एक नन्हें पैराशूट के समान फैल गया।

इस अवस्था में नीले आसमान पर गिद्ध उतरने लगे। परिचारिका हथिनियां उधर बढ़ने वाले गिद्धों को भगा देती थीं। पहरेदार किसी को प्रसूति-कक्ष में नहीं आने देते थे। एक हाथी का इन्होंने लिहाज किया। वह 'वार्ड' के अंदर चला गया।

लगातार कोई दस मिनट तक पहरेदार गरजते रहे और चिंघाड़ते रहे मानो तुरही और नगाड़ों के घोष में नए मेहमान के आने की खुशियां मनाई जा रही हों। उसके बाद आधा घंटे तक लगभग चुप्पी रही। तब हथिनियां और उनके बच्चे दूर हट गए। अगली कार्रवाई में इन्हें भाग नहीं लेना था। मां और नवजात शिशु के साथ ये एक हथिनी और एक पट्ठे को छोड़ गए।

शिशु गीला था, आश्लेष्म से आवृत था और उसकी देह पर खूब बाल उगे थे। सिर पर बाल अधिक थे। वह अभी भी धरती पर लड़खड़ाता था और खड़ा होने में असमर्थ था। मां और मौसी तथा बड़े भाई ने नन्हें शिशु को कोमलता से उठाना जारी रखा। वे उसे पैरों के बल खड़ा करने का प्रयत्न कर रहे थे। दो घंटे से अधिक समय तक वे ऐसा नहीं कर पाए। मौसी तो पहले ही अनमनी हो गई थी। उसने सोचा कि अब मैं इससे ज्यादा कुछ नहीं कर सकती और उन्हें छोड़कर झुंड में मिलने के लिए चली गई।

लेकिन बड़ा भाई लगा रहा। बच्चे के पेट के नीचे सूंड को डालकर वह उसे उठने में सहायता करता था। कभी वह एक बाजू से सूंड डालता और कभी टांगों के बीच में से। अंततोगत्वा उसकी कोशिशें कामयाब हो गईं। अपने सहारे खड़े होने के शिशु के प्रयत्न बार बार विफल हो जाते थे। वह फिर फिर गिर पड़ता, हर बार डर के मारे चिल्लाता भी जाता। जब उसने पहले लड़खड़ाते कदम आगे रखने की कोशिश की तब वह आगे की ओर सिर के बल गिर पड़ा और लुढ़ककर पीठ के बल आ गया। उसे आराम तो बिलकुल नहीं करने दिया गया और बल्कि उसे लगातार पैरों के भार खड़ा होने पर बाध्य किया जाता रहा। जब तक कि वह खुद खड़ा होने ओर चलने योग्य नहीं हो गया।

जब यह सब हो रहा था तब मां झिल्ली को उछालती जा रही थी। उसने दो बार इसे खाने की कोशिश की। उसने इसे अपनी पीठ पर फेंका जहां इसका एक टुकड़ा पड़ा रहा। बच्चा पैदा होने के दो घंटे बाद उसने जेर फेंकी। सूंड से पकड़कर उसने इसे खींच लिया, बाहर की परत को खा गई और शेष को छोड़ दिया।

ज्योंही शिशु अपने आप खड़ा होने योग्य हो गया, बड़ा भाई भयंकर चीत्कार करता हुआ खिसक गया। हाथियों को जब यह भान हो गया कि सब कुछ ठीक ठाक है तब वे एक एक करके चलते बने। सबसे पहले रक्षा करने वाला घेरा उठा, उसके बाद प्रसाविकाओं की टोली, तब मौसी और अंत में बड़ा भाई विदा हुए।

भारत और बर्मा में यद्यपि काफी हाथी पाले जाते हैं परंतु अचरज की बात है कि बंदी जीवन में इनके बच्चे कम ही होते हैं। यूरोप में शायद किसी अफ्रीकी पालतू हाथी ने बच्चे नहीं दिए। यूरोप में एशियाई हाथी के बच्चा जनने की पहली घटना 1903 में लंदन के चिड़ियाघर में घटी थी। यह हथिनी एक सर्कस की थी। दुर्भाग्यवश शिशु कुछ सप्ताह ही जिंदा रहा था। भुस में भरी इसकी देह अब भी साउथ केनसिंग्टन में स्थित लंदन नेचुरल हिस्ट्री म्यूजियम में देखी जा सकती है। 1907 में कोपनहेगन के जार्डिन दे एक्लिमेशन में एक बच्चा पैदा हुआ था। इसी संस्था में इसी माता-पिता का दूसरा बच्चा 1912 में पैदा हुआ था।

अकबर के समय में हथिनी का गर्भधारण का काल अठारह चंद्र मास समझा जाता था। आधुनिक अनुमान के अनुसार नर बच्चा मां के पेट में बाईस महीने और मादा बच्चा

बीस महीने रहता है। विभिन्न गजपालकों ने यह समय सत्रह से चौबीस महीने तक बताया है। ढाई ढाई बरस के अंतर से हथिनी संतान पैदा करती हुई देखी गई है।

एक बार में एक बच्चा पैदा होता है। अपवाद रूप में, मनुष्य के समान, कभी कभी दो जुड़वां बच्चे भी पैदा होते देखे गए हैं। बर्मा में लकड़ी ढोने वाली एक हथिनी ने 26 अक्तूबर, 1961 को एक बच्चे को जन्म दिया। यह नर था और सुबह ही साढ़े छह बजे पैदा हुआ। साढ़े तीन घंटे बाद दूसरे बच्चे ने जन्म लिया यह मादा था। कंधे पर नर की ऊंचाई 83 सेंटीमीटर और मादा की 80 सेंटीमीटर थी। इससे पहले 10 जून, 1959 को उसने एक मादा बच्चे को जन्म दिया था। दो साल साढ़े तीन महीने के अंतर से बच्चे देना एक असाधारण बात है।

स्याम में 27 अक्तूबर, 1913 को एक हथिनी ने तीन बच्चों को जन्म दिया था। ये सभी नर थे। एक मरा हुआ पैदा हुआ, एक सामान्य बच्चों जैसा और एक बहुत छोटा। ये दोनों भी केवल आठ और नौ नवंबर तक ही जिंदा रहे। इन्हें पालने की सभी कोशिशें की गई परंतु मां ने इनकी तरफ ध्यान नहीं दिया। वे जब दूध पीने बढ़ते थे तब वह दुलत्ती मारती थी। जब मां की बेड़ियां खोल दी जाती थीं, वह बच्चों से दूर भाग जाती थी। मां की ऊंचाई 2 मीटर थी और उम्र लगभग पच्चीस बरस। उसके मालिकों के ख्याल में उसका यह पहला प्रसव था। नवजात शिशु की ऊंचाई 85 सेंटीमीटर और भार लगभग 90 किलोग्राम होता है। यह रोमों से ढका होता है। शुरू के कुछ महीनों तक शिशु अपनी सूंड का उपयोग करने में समर्थ नहीं होता। यह अपने मुख से सूंघता है। हथिनी के थन अगली दोनों टांगों के बीच में होते हैं। छोटा बच्चा जब भय मानता है तब अपनी मां की सूंड के पीछे छिपना चाहता है।

कम-से-कम दो साल तक तो बच्चा मां का दूध पीता है। अबुल फजल ने यह समय पांच साल लिखा है। छोटा बच्चा जब घास से खेलने लगे और उसे मुंह में लेकर चबाने लगे तब कई लोग समझ बैठते हैं कि वह ठोस पदार्थों को खाने के योग्य हो गया है। परंतु यह स्मरण रखना चाहिए कि हाथी के बच्चे तब तक मां का दूध पीते रहते हैं जब तक उनके भाई या बहन का जन्म नहीं हो जाता। असम की एक गजशाला में एक हथिनी अपने तीन बच्चों को बारी बारी से दूध पिलाती थी। यह ठीक है कि सबसे छोटे को सबसे अधिक दूध पीने का अवसर दिया जाता था।

खेदे में दुधमुंहा बच्चा मां से अलग पकड़ लिया जाए तो उसे पालना कठिन होता है और महंगा भी पड़ता है। बड़ी मेहनत के बाद ऐसा बच्चा जिंदा रह जाए तो गनीमत है। जंगल में उसे शेर की दया पर छोड़ देना निर्दयता होगी, इस आशंका से उसे जंगल में भी नहीं छोड़ा जाता। शिविर में वह हरेक का स्नेह पात्र बन जाता है।

असम में चाय बागानों के मालिक फ्रैंक निकल्स का हाथी एक बार जंगल से गुजर

रहा था तो एक जंगली हथिनी ने आकर उसके मस्तक पर अपनी सूंड रख दी। उसे पालतू हाथी और उस पर बैठे आदमी से जरा भी डर नहीं लगा। वह सहायता के लिए उसे बुला रही थी। वे उसके पीछे पीछे हो लिए। हथिनी ने उन्हें एक ऐसी जगह पहुंचा दिया जहां उसका बच्चा खड़ा था जिसकी एक टांग का निचला जोड़ शेर ने बेकार कर दिया था।

पैट्रिक स्ट्रेसी को एक जंगली गज-शिशु का अनुभव है, जो शेरों द्वारा हमला किए जाने के बाद अपने झुंड और अपनी मां से बिछुड़ गया था। शेर के पंजों का शिकार बनने की बजाए वह बहादुर बच्चा हिम्मत करके नागा पहाड़ियों के नीचे जंगल के मध्य में बनी रेलवे गैंगमैनों की एक झोंपड़ी में पहुंच गया। प्रकट रूप से यह माना जा सकता है कि वह रक्षा और भोजन पाने की आशा से उनकी शरण में आ गया था।

जंगली हाथियों के बच्चे कई बार अपने झुंड को छोड़कर पालतू हाथियों के साथ आ जाते हैं। वे इतने भोले होते हैं कि जंगल की दुनिया में भी अपने और पराए का भेद नहीं जानते।

21 मई, 1968 की शाम पांच बजे जंगल के अंदर हमें जो पहला हाथी दिखाई दिया वह एक घुई थी जिसके साथ करीब दो साल का एक बच्चा था। धीरे धीरे बढ़ते हुए हम उससे 30 मीटर दूर रह गए। हमें देखकर घुई भाग खड़ी हुई। बच्चा, उसके साथ जाने की बजाए, हमारी ओर बढ़ने लगा। अपनी सूंड बढ़ाकर उसने हमारी हथिनी का स्वागत किया। वह समझ रहा था कि यह हथिनी भी उन्हीं के झुंड की सदस्या है। उसकी मां जब दूर निकल गई तब वह भी कुछ क्षणों बाद भाग गया।

एक बार खुले शालवन में एक झुंड को चरते हुए पाकर पैट्रिक स्ट्रेसी उसे देखने के लिए खड़े हो गए। वे पूरे सावधान थे कि झुंड को उनके आने का पता न चले जिससे हाथी स्वाभाविक रूप से अपना कामकाज करते रहें। कुछ देर बाद वे लौटने लगे। अचानक उन्होंने देखा कि एक छोटा-सा दंतुर उनके हाथी के पीछे पीछे आ रहा था। उसकी ऊंचाई 120 सेंटीमीटर से अधिक नहीं रही होगी। यूथ से वह कम से कम 100 मीटर दूर तो अवश्य चला आया होगा। अनुगमन करते हुए जब-तब अपनी नन्हीं सूंड से बड़े हाथी की गंध को ग्रहण करने की कोशिश करता था। स्ट्रेसी ने अपने हाथी को रोका। उस बच्चे को देखकर उनके हाथी को गुस्सा नहीं आया। उलटे, उसने अपनी सूंड आगे बढ़ाकर बच्चे का स्वागत किया। बच्चे ने भी अपनी सूंड आगे करके दोस्ती का हाथ बढ़ाया। स्ट्रेसी चाहते तो इस बच्चे को साथ ले जा सकते थे। लेकिन, इतने छोटे बच्चे को पालने में जो कठिनाइयां होती हैं उनका ध्यान करते हुए उन्होंने चिल्लाकर उसे भगा दिया। बढ़िया नियम तो यही है कि 120 सेंटीमीटर से छोटे बच्चे को पकड़ा ही न जाए। जंगल में यदि उसे उसकी मां के साथ या यूथ के बीच में छोड़ा जा सकता है तो तुरंत ऐसा कर देना चाहिए।

आहार

हाथी के बच्चे को गौ या भैंस के दूध पर रखा जाए तो वह जल्दी कमजोर होने लगता है और उसका हाजमा खराब हो जाता है। यदि गौ-भैंस के दूध में अंडे की सफेदी, कैल्शियम और विटामिन मिलाकर दिए जाएं तो ऐसे बच्चे सफलतापूर्वक पाले जा सकते हैं।

बिहारी गजवैद्य करमकों को दूध के अलावा दाल-चावल की पतली खिचड़ी भी देते हैं। वे इसमें जरा सा गुड़ भी मिला देते हैं। बांस की एक नलकी में भरकर वे बच्चे को पिला देते हैं।

असम में ई.पी. जी ने एक हाथी के बच्चे को पालने की कोशिश की थी। उनके पास जब वह आया तब 96 सेंटीमीटर ऊंचा था और अनुमान था कि उसकी उम्र पांच महीने ही की है। डेढ़ महीने तक वह ई.पी.जी के पास रहा। वे उसे गौ के ताजे दूध में एक-चौथाई पानी मिलाकर और जरा-सी दाल-चावल की खिचड़ी बनाकर देते थे। हरे भोजन को कुतरना वह सीख गया था। गुड़ का वह शौकीन था। लंदन के लिए जब वह उड़ा तब रास्ते के लिए डिब्बे का दूध और कौर्नफ्लेक रख लिए थे। लंदन पहुंचने पर वह ऐसे भोजन पर रखा गया जिसे हथिनी के दूध जैसा पौष्टिक बना लिया गया था। छह महीने बाद वह ठोस भोजन अधिक परिमाण में लेने लगा था, फिर भी कुछ और समय तक द्रव भोजन उसके लिए अधिक लाभदायक समझा जाता था।

मां अपने बच्चे को बेहद प्यार करती है। झुंड के अन्य हाथी भी उसका ध्यान रखते थे। चरते समय या सोते समय वह सदा अपनी मां या बड़े हाथियों के संरक्षण में रहता है। बंदी बनाए गए हाथियों में बच्चों के प्रति ऐसी ममता नहीं दिखाई देती। बाड़े में नर हाथियों के रास्ते में छोटे आ जाएं तो वे अधीरता से उन्हें परे धकेल देते हैं, या उन पर प्रहार करते हैं और कभी कभी तो क्रूरतापूर्वक मार डालते हैं। भवभूति (उत्तररामचरित, अंक 3) ने एक मदमस्त गजराज द्वारा पालतू बच्चे पर हमला किए जाने का जिक्र किया है। सीता ने इसे पाला था और वे इसे अपने पुत्र के समान प्यार करती थीं। एक बार जब वह पानी में खेल रहा था तब मत्त हाथी उसे मारने दौड़ा। सीता ने तब चिल्लाकर राम से कहा था : आर्यपुत्र! मेरे पुत्र को बचाइए।

मैंने देखा है कि गंभीर खतरा आने पर हथिनियां कई बार अपने बच्चे को छोड़ देती हैं। सामान्य परिस्थितियों में तो खतरे का जरा-सा संकेत मिलने पर वे उन्हें अपने आगे हांक ले जाती हैं, तब तक सूंड से मारकर उन्हें आगे धकेलती रहती हैं जब तक कि खतरे के क्षेत्र से बाहर न निकल जाएं।

दूध वाली मां को यदि भारी काम पर लगा दिया जाए या प्रशिक्षण में लगा दिया जाए तो कार्य के बोझ और दबाव के कारण उसका दूध सूखने लगता है। ऐसी हालत

में उसका अपने बच्चे के प्रति लगाव जाता रहता है। इसलिए यदि बच्चा भलीभांति चारा खाने योग्यं हो चुका है तो उसे झटपट मां से अलग कर देना चाहिए।

काजीरंगा के वन विभाग की गजशाला में देवकली और पार्वती नामक दो हथिनियां थीं। इनकी ऊंचाई क्रमशः 225 सेंटीमीटर और 220 सेंटीमीटर थी। इन दोनों के पीछे एक इतिहास है। परिरक्षित वन में देवकली सवारी की हथिनी थी। सन् 1945 में वह वन में लापता हो गई और जंगली झुंड के साथ मिल गयी। वन्य जीवन में वह चार साल रही। सन् 1949 के खेदे में वह अपने झुंड के साथ पकड़ में आ गई। वन विभाग ने उसे पहचान लिया। उसे वह फिर लौटा दी गई।

अपने पुराने महावत के साथ वह पहले वाले काम पर लग गयी। 6 फरवरी, 1950 को उसने पार्वती को जन्म दिया। प्रकट रूप में यह संतान लगभग बीस महीने पूर्व जंगली हाथी से जोड़ा करने का परिणाम था।

ई.पी. जी हर साल इसके अगले पैर के घेरे का माप और कंधे तक ऊंचाई का माप लेते रहे थे। उन्होंने इस मान्यता को पुष्ट किया है कि भारतीय हाथी की कंधे तक की ऊंचाई अगले पैर के घेरे से लगभग ठीक दुगनी होती है। कुछ वर्षों में पार्वती की ऊंचाई इस प्रकार रिकार्ड की गई थी :

एक साल की उम्र में	124 सेंटीमीटर
तीन साल की उम्र में	154 सेंटीमीटर
सात साल की उम्र में	186 सेंटीमीटर
ग्यारह साल की उम्र में	213 सेंटीमीटर
तेरह साल की उम्र में	218 सेंटीमीटर

तेरह साल में यह मां से 11 सेंटीमीटर छोटी थी। इस उदाहरण में ध्यान देने योग्य बात है कि बच्चा मां के साथ अपने घर के जंगल के पास प्राकृतिक अवस्थाओं जैसे वातावरण में बढ़ता रहा था। इस पर्यवेक्षण के आधार पर हम जंगल से पकड़े गए करमों की उम्र का अनुमान लगा सकते हैं।

सन् 1953 के खेदे में पांच हाथियों का एक झुंड पकड़ा गया। यदि सूक्ष्मता से न देखा जाता तो ये भी दूसरे हाथियों जैसे ही थे। गौर करने पर पहली बात यह पता लगी कि ये सब मादा थीं–एक बड़ी और चार क्रमशः छोटी। अधिक छानबीन से यह भी जाहिर हो गया कि मां और उसके विभिन्न उम्रों के चार करमों से यह पारिवारिक दल बना था। सबसे बड़ा करम बुरी तरह विकलांग था। वह इतना दुबला था कि उसकी पीठ की एक एक हड्डी को गिना जा सकता था। उसकी टांगें और पूंछ टूटी हुई थीं। उसकी उम्र दस और पंद्रह साल के बीच रही होगी। मां के वात्सल्यपूर्ण देखभाल के कारण ही यह बचा

हुआ था। इसे और इसकी मां को घेरे में से मुक्त कर दिया गया।

शेष तीनों की ऊंचाई नापी गई। पार्वती के नापों से तुलना करके इनकी उम्र इस प्रकार पता चली :

एक साल की उम्र में	124 सेंटीमीटर
तीन साल की उम्र में	152 सेंटीमीटर
सात साल की उम्र में	187 सेंटीमीटर

इसका अभिप्राय है कि जंगल-जीवन में प्रसवों के बीच का अंतर कम होकर दो साल का भी हो सकता है। इस आधार पर एक हथिनी अपने सत्तर वर्ष के जीवन काल में बीस या कुछ अधिक बच्चे पैदा कर सकती है। स्ट्रेसी की सम्मति में एक हथिनी अपने जीवन काल में बारह से पंद्रह बच्चे दे सकती है।

जोसेफ डेल्मौण्ट (कैचिंग वाइल्ड बीस्ट्स एलाइव, 1931) को एक बार अफ्रीकियों ने सूचना दी कि बगैर सूंड का एक बच्चा झुंड में घूम रहा है और वह है भी सफेद।

यह समाचार बड़ा उत्तेजक था। डेल्मौण्ट ने सोचा कि यदि यह पकड़ में आ जाए तो सितारा ही बदल जाएगा। छह अधिवासियों के साथ वे जंगल में गये। परिस्थितियां उनके अनुकूल थीं। छह घंटे की तलाश के बाद उन्हें वह झुंड मिल गया। उस झुंड में ग्यारह हाथी थे। पेड़ों को उखाड़ने और टहनियां खाने में वे लगे हुए थे। एक अधिवासी ने एक बड़ी हथिनी की टांगों के बीच में एक छोटे बच्चे की ओर इशारा किया।

हाथियों के सामान्य बच्चों से यह एकदम जुदा था। इसका रंग बहुत अधिक हल्का था। कुछ देर बाद उसने अपना मुंह आगंतुकों की ओर घुमाया। यद्यपि बहुत स्पष्ट तो नहीं देखा जा सका परंतु जो कुछ भी दिखाई दिया उससे यह तो जाहिर हो गया कि उसकी सूंड वास्तव में ही नदारद है। हथिनी की विशाल देह के नीचे अंधेरे में बच्चे के सिर का ठीक ठीक आकार नहीं दिखाई दिया। सभी लोग बेहद उत्सुक हो गए थे। दूरबीन लगाकर उसे देखा जाने लगा। एक बार जब वह प्रकाश में आया तब पता चला कि वह छोटा प्राणी हाथी तो किसी सूरत में नहीं। वह गैंडे का बच्चा निकला।

हथिनी मां की तरह उसे दूध पिलाती थी, उसकी रक्षा करती थी, सूंड से धकेलकर उसे हांक ले जाती थी और उसे अपनी आंखों से ओझल नहीं होने देती थी।

यह कहना कठिन है कि यह अद्भुत मेल कैसे हुआ! यह प्रकृति की सबसे विचित्र पहेलियों में से एक है। हो सकता है कि अपनी मां से गैंडे का बच्चा जब अलग हुआ, उन्हीं दिनों हथिनी का बच्चा भी मर गया होगा। मां की तलाश करता हुआ छोटा गैंडा तब हाथियों के झुंड में मिल गया होगा।

निद्रा

दिन में गरमी के समय या मध्य रात्रि में थोड़ी देर के लिए हाथी खड़े खड़े अथवा लेटकर, सो लेते हैं। पहले जमाने में लोगों का विश्वास था कि हाथी की टांग में जोड़ नहीं होता, इसलिए वह लेट ही नहीं सकता। इस विश्वास का कारण यह था कि यह प्राणी सोते समय भी कम ही लेटता है। फ्रांस के राजा चौदहवें लुई के पास एक हाथी था जो पांच बरस तक कभी नहीं लेटा। उसे जब सोना होता था तब वह अपने उद्दंतों के सिरों को दीवार में बनाए दो छिद्रों के अंदर टिकाकर, सिर के बोझ से निश्चिंत होकर, सो जाता था। पत्थर की दीवार में ये छिद्र उसने स्वयं इस निमित्त बना लिए थे।

सन् 1967 के मई महीने में मैंने जंगली हाथियों की नींद संबंधी आदतों का अध्ययन किया। उत्तर प्रदेश के तराई जंगलों में उन दिनों गरमी काफी तेज थी, प्रायः लू भी चलती थी, पानी के अधिकांश स्रोत सूख चुके थे। मैंने देखा कि हाथियों का झुंड घास चरना छोड़कर दस बजे ही छायादार वृक्षों और निकुंजों की ओर रुख करने लगता है। सबसे पहले घुई और उनके बच्चे छाया में पहुंचते हैं। 23 मई, 1967 को सुबह दस बजे मैंने इनका आंखों देखा वृत्तांत अपनी जंगल की नोटबुक में इस प्रकार लिखा था :

''सबसे छोटे दुधमुंहे बच्चे सबसे पहले जमीन पर बैठे और अपनी माताओं की टांगों के साथ ही लेट गए। उसके बाद बड़े बच्चे लेटे। कोई कोई बड़ा हाथी या हथिनी भी सोने के लिए धराशायी हो गए। प्रायः सभी बड़े हाथी खड़े खड़े ही आंख मूंदकर सो रहे थे। बीच बीच में ये मुंह खोलकर जम्हाई भी लेते थे। दंतुर हाथी भी एक किनारे धरती पर एक बड़ी चट्टान की तरह लोट गया। एक शरारती बच्चा इधर-उधर घूमता रहा।

"सोते समय प्रायः सभी हाथियों के सिर बाहर की ओर तथा उनके पिछवाड़े पेड़ के तने की तरफ रहते हैं। दुश्मन से सावधान रहने का यह तरीका है। अगले पैर की ठोकर से मिट्टी को सूंड में भरकर वे बार बार अपने तन पर फेंक रहे थे जिससे मक्खी व मच्छर उनकी नींद में खलल न डालें। कुछ हाथियों ने सूंड में गंधेले की शाखाएं पकड़ रखी थीं, जिन्हें वे अपनी ग्रीवाओं पर मुरछल की तरह मारकर मक्खियां उड़ाते थे। कानों को वे लगातार फटफटाते रहते थे। बड़े दंतुर अपनी सूंड को, मस्ती में, दूसरे हाथियों, हथिनियों और बच्चों की पीठ पर टेककर सो रहे थे।

"मई के सूर्य की किरणें और तेज हो गईं। सारी घाटी शांत थी। पत्ते भी हिलने बंद हो गए थे। किसी पुराने देवालय के खंभों की भांति हाथियों की सूंडें अपने सिरों को धरती पर टेककर अचल खड़ी थीं। सभी हाथी गाढ़ी नींद में थे। फड़फड़ाते हुए कान भी स्थिर हो गए थे। कोई कोई हाथी तो नींद में एकदम बेसुध हो गया था और लंबे खर्राटे भर रहा था।

"ऊंची टेकरी पर शाल वृक्ष की छाया में बैठे हम लोग यह सब देख रहे थे। सोते हुए हाथियों के चित्र लेने के लिए हम नीचे उतर आए और दबे पांव लेटे हुए बच्चों के पास तक पहुंच गए। रखवाली के लिए साथ खड़ी हुई उनकी माताएं भी इस समय बेखबर थीं। परिस्थितियां हमारे अनुकूल थीं, सचमुच हमें उनके बढ़िया चित्र लेने में सफलता मिल गई।

"सूरज और ऊपर चढ़ गया था। कुछ हाथियों पर सीधी धूप पड़ने लगी। छाया की तलाश में वे दूसरे पेड़ के नीचे जाने लगे। हमारी कलाई की घड़ियों में ग्यारह बज रहे थे। एक घंटे के आराम और नींद से हाथी ताजा हो गए थे। एक एक करके सभी ने झुरमुट की छाया छोड़ दी और घास चरने में जुट गए। कुछ हाथी शीशम की छाल की लंबी परतें उतारकर उन्हें खा रहे थे।

"दुधमुंहे बच्चों की देह पर अब भी नींद पूरा अधिकार जमाए हुए थी। उनकी माताएं प्यार से उन्हें उठा रही थीं। लाड़ से वे अपनी सूंडों के सिरों से उनकी देह को सहलाती थीं। वे भी उठ खड़े हुए और माताओं के संरक्षण में चल दिए।"

प्राकृतिक वास

भारत में हाथी हिमालय की तराई के घने जंगलों में देहरादून से असम तक, बिहार और बंगाल में, उड़ीसा, आंध्र, तमिलनाडु के नीलगिरी पर्वत, केरल के पश्चिमी घाट, मैसूर और कुर्ग में भी पाए जाते हैं।

सामान्यतया हाथी 1,524 मीटर से ऊपर नहीं पाए जाते। परंतु बर्मा में देखा गया है कि वे बांस के जंगलों में 3,050 मीटर या इससे ऊपर भी चले जाते हैं। सिक्किम में हाथियों की पद-पंक्तियां बर्फ में समुद्रतल से 3,660 मीटर की ऊंचाई तक देखी गई हैं। अरुणाचल प्रदेश के सुबांसरी और केमिंग जिलों में 2,134 मीटर तक हाथी मिल जाता है।

पहले जमाने में हाथी की सवारी करना बड़े सम्मान की बात होती थी। हर कोई हाथी पर सवार नहीं हो सकता था। राजा के अलावा महाजन को और विवाह के अवसर पर दूल्हे को हाथी की सवारी करने का अधिकार था। जब कोई विशिष्ट कार्य करता था तब हाथी की सवारी बख्शी जाती थी। पतंजलि के अनुसार, व्याकरण शास्त्र में पूर्णतया पारंगत होने वाले विद्वानों को हाथी भेंट किया जाता था।[1] मगध के राजा ने पाणिनी को हाथी भेंट करके उसका सम्मान किया था।

---

1. पाणिनीकालीन भारतवर्ष, वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ 25

हाथी के ऊपर चढ़ना भी एक कला है। स्त्रियां, बूढ़े और नाजुक लोग तो सीढ़ी की सहायता से हौदे तक पहुंचते हैं, परंतु चुस्त व्यक्ति बैठे हुए हाथी की पूंछ को पकड़कर ही चढ़ जाते हैं। महावत के इशारे से खड़ा हुआ हाथी अपनी एक अगली टांग को झुका लेता है। उस पर पैर रखकर और हाथी के कान को पकड़कर भी आदमी ऊपर पहुंच जाता है। सूंड के जरिए हाथी पर चढ़ना भी एक कला है। सूंड के अगले सिरे पर खड़ा होकर व्यक्ति सूंड को ऊपर से पकड़ लेता है। हाथी सूंड को धीरे धीरे ऊपर उठाता जाता है और सवार को हौदे तक पहुंचा देता है। इसी प्रकार उतरने के लिए भी इन सब अंगों का उपयोग किया जाता है। कान या पूंछ को पकड़कर सवार खड़े हुए हाथी के ऊपर से नीचे खिसक जाता है। हाथी के उद्दंतों पर सवार होने में मुझे विशेष आनंद आता था। अशील हाथी जरा से इशारे पर उद्दंतों को नीचे झुका लेता था और मैं उछलकर उन पर सवार हो जाता था। बोझ पड़ते ही हाथी अपने उद्दंतों को ऊपर उठा लेता है।

विशेष समारोहों पर हाथियों को खूब सजाया जाता है। रामायण में उल्लेख है कि सजे-सजाए हाथी राजमार्गों पर चलते थे जिनके उद्दंत सोने से मढ़े रहते थे, गले में हार होते थे, मस्तक पर तरह तरह की चित्रकारी होती थी, तन पर सुनहरी झूलें लटक रही होती थीं, कमर में बंधी सोने की जंजीरों से घंटियां झूल रही होती थीं, बैठने के लिए उनकी पीठ पर सोने के हौदे कसे होते थे जिनके साथ पताकाएं फहराया करती थीं।

रामायण में वर्णन है कि राम के दर्शन करने जाते समय भरत के सैनिकों ने जिन हाथियों पर आरुढ़ होकर गंगा पार की थी, पताकाओं से सुशोभित वे हाथी तैरते समय पंख वाले पहाड़ों के समान जान पड़ते थे। विश्वामित्र ने वशिष्ठ की कामधेनु गौ के बदले सोने की जंजीरों, हारों, अंकुशों आदि से विभूषित चौदह हजार हाथी देने का प्रलोभन दिया था।

राजकीय वैभव और समृद्धि के प्रदर्शन में हाथी का प्रमुख स्थान रहा है। हमारे राजाओं, रजवाड़ों और जमींदारों के पास सैकड़ों हाथी रहा करते थे। कोई सौ साल पहले, वर्तमान नेपाल के निर्माता, राणा शासक के संस्थापक महाराजा जंग बहादुर की गजशाला में एक हजार हाथी थे। नेपाल के राजकुमारों के पास भी उनके दर्जे के हिसाब से निश्चित संख्या में हाथी रहते थे।

मैसूर के महाराजा के पास 1,000 से अधिक हाथी थे। वे इनका शृंगार कर दशहरे के जुलूस में निकालते थे। डीलडौल वाले एक नर हाथी पर महाराजा बैठते थे। हाथी पर कीमती झूलें झूलती थीं।

उसके माथे पर हीरे-जवाहरातों से जड़े सोने के पतरे बंधे होते थे। उसके पीछे दो और सजे हुए हाथी रहते थे जिनके हौदों पर कोई बैठा नहीं होता था। राजवंश में मान्यता थी कि उनमें राजा के दिवंगत पूर्वजों की आत्माएं विराजमान रहती हैं। मैसूर के राज्य की

स्थापना करने वाले और उसे समृद्ध करने वाले दिवंगत पूर्वजों को सम्मान देने का यह तरीका था।

बड़ौदा नरेश को और कोल्हापुर महाराज को हाथियों की लड़ाई करवाने का शौक था। बड़ौदा नरेश की सवारी का हाथी पर्वतकाय था। उस की उम्र 80 साल के करीब बताई जाती थी। उस के बड़े उद्दंत थे। उसका हौदा सोने का था और उसकी झूल में बेशुमार सोना लगा था।

आज भी हमारे गणतंत्र दिवस पर निकलने वाली सांस्कृतिक झांकियों का नेतृत्व सजे-सजाए हाथी करते हैं। सबसे अगला हाथी जब सलामी मंच के सामने राष्ट्रपति के आगे से गुजरता है तब सूंड उठाकर उनका अभिनंदन करता है और चिंघाड़कर हर्ष ध्वनि करता है। सन् 1962 की 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस की सांस्कृतिक झांकियों का अगुवा हाथी का एक नन्हा-सा मादा बच्चा था जिस का नाम उर्वशी था। वह इतनी प्यारी थी कि अखबारवालों की चर्चा का विषय बन गई। दिल्ली चिड़ियाघर की यह उर्वशी कई तरह के करतब सीख गई थी। बड़े मजे से वह मुंह से बाजा बजा लेती थी तथा अपने पैरों में बंधी घंटियों की ताल पर नाच लेती थी। उर्वशी के अलावा गोपाल व राजलक्ष्मी नामक हाथियों के खेल भी दर्शकों के लिए आकर्षक थे। वे फुटबाल खेलते थे, पैरों से चोट मारकर गेंद को सीधे गोल में फेंकने में राजलक्ष्मी कमाल कर देती थी।

अतिथियों के गले में माला पहनाना, महावत को छोटे छोटे सिक्के पकड़ा देना, छोटे से प्लेटफार्म पर चारों पैरों को जोड़कर खड़े हो जाना, रोलर पर अपने भारी शरीर को संतुलित करना तथा इसी तरह के अनेक करतब करते हुए पाठकों ने हाथियों को देखा होगा। दिल्ली के चिड़ियाघर का एक हाथी कुएं में से पानी मजे में खींच लेता था। सूंड से वह पहले रस्सी को खींचता था। पैर तक पहुंचने पर वह उसे पैर से दबा लेता था। जब तक डोल नहीं आता था वह इस क्रम को-जारी रखता था। डोल आने पर सूंड से पकड़कर एक तरफ रख देता था।

किसी किसी सर्कस कंपनी में हाथी को इस तरह सधाया जाता है कि वह सूंड और अगली दोनों टांगों के ऊपर शरीर के पिछले भाग को उठा लेता है। शीर्षासन की-सी मुद्रा में यह बड़ा अजीब लगता है।

यह अनुभव किया जाता है कि पालतू हथिनियों के बच्चे ऐसे करतब उन बच्चों की अपेक्षा जल्दी सीख जाते हैं जो जंगल से पकड़े गए हैं।

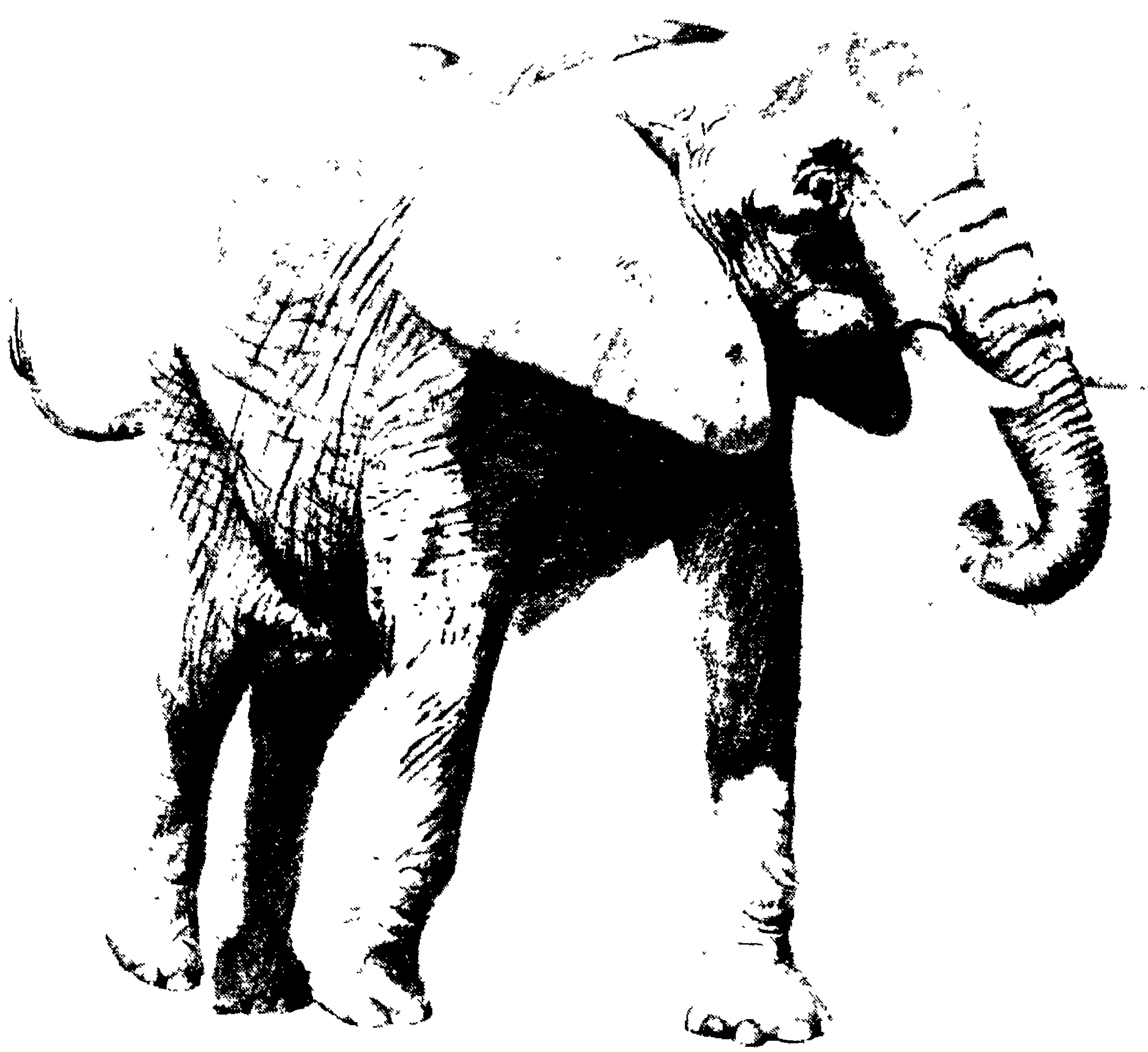
त्रिवेंद्रम में दो साल के दो बच्चे अतिथियों के गले में माला डालना और झंडा फहराना तो सीख ही गए थे, गणपति-पूजा का अभिनय भी वे बहुत अच्छे ढंग से कर लेते थे। इनमें से एक गणेश बनकर बैठ जाता, दूसरा उसके आगे एक सच्चे भक्त के समान फूल और नारियल चढ़ाता तथा घंटी बजाता, घुटने के बल झुककर नतमस्तक हो आशीर्वाद

मांगता। दूसरा बच्चा अपनी सूंड उठाकर उसे आशीर्वाद देता। पीलवान ने इन हस्तिशावकों का नाम भास्करन और रामवर्धन रखा था। सूंड में खड़िया पकड़कर वे काले तख्ते पर स्वागतम और धन्यवाद जैसे शब्द लिखना सीख गये थे। कहते हैं कि वे सरल गणित के प्रश्न भी हल कर लेते थे। मुंह से बजाने वाले एक बड़े बाजे पर भारत के राष्ट्रीय गीत की धुन बजाना उन्हें सिखाया जा रहा था। शिक्षक का विश्वास था कि वे शीघ्र ही इसमें दक्ष हो जाएंगे। सर्कस के बैंड मास्टर के विचार में हाथी संगीत को पसंद करने वाला प्राणी है।

3

इतिहास और कथा-कहानियों में हाथी

हाथी भारतीय कला और साहित्य का प्रिय विषय रहा है। जातक कथाओं, पंचतंत्र आदि बालकथाओं और लोक-साहित्य में, हाथी ने शानदार भूमिका अदा की है। गजजातक के अनुसार भगवान बुद्ध एक जन्म में हाथी थे। वे आठ हजार हाथियों के सरदार थे। उनकी दो रानियां थीं। एक रानी रूठ गई। फिर क्या था! प्रतिशोध की भावना लिए काशी की रानी बनने के उद्देश्य से वह घोर तपस्या में लग गई। तप फलीभूत हुआ और वह काशी



की रानी बन गई। अब वह बदला ले सकती थी। उसने एक शिकारी को बोधिसत्व गजराज के दांत तोड़कर लाने का आदेश दिया। शिकारी किसी भी तरह दांत निकालने में कामयाब न हो सका। क्रोध के बजाय गजराज को शिकारी पर दया आई। उन्होंने स्वयं अपने दांत तोड़कर शिकारी के हाथ में रानी के पास भिजवा दिए। उन दांतों को देखकर रानी का हृदय क्लेश और पश्चाताप से भर गया। फिर रानी को बोधिसत्व ने सांत्वना दी। अजंता के भित्तिचित्रों में यह जातक कथा अनुपम ढंग से चित्रित की गई है। अजंता की गुफाओं में अंकित किए जानवरों में शायद सबसे अधिक हाथी हैं।

कुमारगुप्त की एक उपलब्ध मुद्रा पर राजा हाथी के ऊपर सवार हैं और उनके ऊपर राज-छत्र है। तेजी से चलाने के लिए राजा उसके मस्तक पर अंकुश का प्रहार कर रहे हैं। सूंड, टांगों, पूंछ और शरीर के तनाव से स्पष्ट दीखता है कि वह भी पूरी ताकत से दौड़ रहा है।

हैदरअली के तांबे के सिक्कों पर हाथी का चित्र बना हुआ है जिसकी सूंड उठी हुई है। अबुल फजल के अनुसार प्राचीन भारत में ताश के बारह रंगों में एक गजपति होता था। गजपति के पत्ते पर उड़ीसा के राजा को हाथी पर सवार दिखाया जाता था। अकबर के बनवाए 'पादशाह गुलामान' के एक पत्ते पर हाथी के ऊपर सवार बादशाह का चित्र हुआ करता था।

इस शताब्दी के कलाकारों को भी हाथी से प्रेरणा मिलती रही है। भारत तथा अन्य देशों के डाक-टिकटों पर हाथी अनेक रूपों में चित्रित किया गया है।

पुराने जमाने में सेना के चार अंगों में एक अंग हाथी सेना का हुआ करता था। भारत की चतुरंगिणी सेना के हाथियों की शान देखते ही बनती थी जिनके ऊपर सोने की जंजीरें पड़ी हुई थीं और पताकाएं लहराती थीं। घनघटा के समान यह गजघटा चलती थी। युद्ध-गजों को बाकायदा प्रशिक्षण दिया जाता था। अपने मस्तक की टक्कर से वे किलों के दरवाजों को तोड़ डालते थे। युद्ध में हाथियों की रक्षा के लिए चमड़े की ढालें रखी जाती थीं। तुर्की मुसलमानों के म्यूजियम में हाथियों के वे जिरह-बख्तर रखे हैं जो युद्ध में रक्षा के लिए उन्हें पहनाए जाते थे।

आजकल जैसे टैंकों की शक्ति का महत्व है, उन दिनों हाथियों की शक्ति का होता था। बाल्मीकि के वर्णन के अनुसार राम और रावण के युद्ध में राक्षसी सेना के साथ हजारों युद्ध-गज थे। महाभारत के युद्ध में, एक विवरण के अनुसार, दो लाख सत्तर हजार हाथी आपस में भिड़ रहे थे :

नवनागासहस्राणि नागे नागे शतं रथाः।
रथे रथे शतं चाश्वम् अश्वे अश्वे शतं नराः।

कुछ विद्वानों ने इस अवसर पर इकट्ठा हुए हाथियों की संख्या तीन लाख बताई है :

अयुतं ज नागास्त्रिगुणी रथानां पदाति संख्या षट्त्रिंशकोटयः।
लक्षैकयोद्धाः दशलक्षवाजी अक्षौहिणी तां मुनयो वदन्ति।।

इन मतों के अनुसार पांडवों की बारह अक्षौहिणी और कौरवों की अठारह अक्षौहिणी सेना में क्रमशः एक लाख आठ हजार (या एक लाख बीस हजार) और एक लाख बासठ हजार (या एक लाख अस्सी हजार) युद्ध-गज मैदाने जंग में जमा थे।

यूनान के विजेता सिकन्दर ने जब भारत पर हमला किया तब उसके सैनिक भारतीय सेना के विशालकाय हाथियों को देखकर पहले बहुत डरे।

पंजाब के शासक पुरु और सिकन्दर में घमासान युद्ध हुआ। पुरु एक सधे हुए युद्ध-गज पर सवार था। उसके शरीर पर इतने घाव हो गए कि वह हाथी की पीठ पर से नीचे आ गिरा। सिकन्दर के सैनिक उसके बहुमूल्य वस्त्रों और गहनों के लालच में उसे उठाने के लिए आगे बढ़े।

उन्हें देख हाथी ने अपने स्वामी को अपने चारों पैरों के बीच में कर लिया, ठीक उसी तरह जैसे हथिनी अपने नवजात शिशु की रक्षा करती है। कोई सैनिक उसके पास आता तो वह स्वामिभक्त हाथी उसे बुरी तरह घायल कर देता। इस तरह उसने कई सैनिकों को मार डाला। तब अन्य सिपाहियों को आगे बढ़ने की हिम्मत न हुई। उन्होंने दूर से हाथी पर वार करने शुरू कर दिए। बहुत घायल हो जाने पर भी वह अपने स्थान से न हटा।

हाथी बहुत तंग आ गया तो उसने पुरु को सूंड से उठाकर अपनी पीठ पर रख लिया और उसे एक सुरक्षित स्थान पर पहुंचा दिया। जरा देर बाद ही घावों की वेदना असह्य होने के कारण वह स्वर्ग सिधार गया। इस प्रकार हाथी ने रणक्षेत्र में आखिरी सांस तक अपने स्वामी की रक्षा की।

जब अफ्रीका के प्रसिद्ध वीर हन्नीबाल ने रोम पर हमला करने के लिए स्पेन से कूच किया तब उसकी सेना के साथ अफ्रीकी जाति के हाथियों ने सेंट गोटार्ड दर्रे से होकर आल्प्स पर्वत को पार किया था।

हाथी पर सवार योद्धा तीर-कमान, लंबे भालों और ढालों से लैस रहते थे। दुश्मन के शस्त्रों की चोट से बचाने के लिए हाथियों के ऊपर ढालें बांधी जाती थीं। इसके अलावा युद्ध-सामग्री को ढोने में भी हाथी काम आते थे। कोणार्क के मंदिर (1238-1260 ईस्वी पश्चात) की मूर्तियों में ऐसे दृश्यों की भरमार है।

तोपों को घसीटने का काम हाथियों से लिया जाता था। अंग्रेजों के शासन में भी तोपखाने में हाथियों की भरती की जाती थी। सन् 1900 तक ढाका में ब्रिटिश सेना का हाथियों को पकड़ने का नियमित संस्थान था, जो बाद में बर्मा ले जाया गया था, क्योंकि अधिक संख्या में पकड़े जाने के कारण गारो पहाड़ियों में हाथियों की कमी हो गई थी।

इतिहासकार हमें यह भी बताते हैं कि युद्ध में पुरु की सिकन्दर से हार रणक्षेत्र में हाथियों के बिदकने के कारण ही हुई थी। उस जमाने में युद्ध में शोरगुल द्वारा भी शत्रु के दिल को दहलाने के सभी प्रयत्न किए जाते थे। गगनभेदी जयकारों और नगाड़ों के गंभीर घोषों से आकाश भी जैसे फटने को होता था। इस से मोर्चे पर तैनात हाथी भड़क उठते थे। पानीपत के युद्ध (1526) में इब्राहीम लोदी की हार का कारण भी हाथी बने थे। बाबर की तोपों की गोलाबारी से हाथियों में भगदड़ मच गई, परिणामतया इब्राहीम के कितने ही सैनिक कुचलकर मारे गए। वह स्वयं हाथी की पीठ पर से गिर पड़ा और अपने ही हाथियों द्वारा कुचला गया। ऐसी घटनाओं को देखते हुए मोर्चे के लिए हाथियों का मूल्य कम होता गया। फिर भी बाद में मुगलों ने भी अपने युद्धों में हाथियों का प्रयोग किया।

काव्य में

ग्रीष्म ऋतु में हाथियों की दशा का वर्णन कालिदास ने इन शब्दों में किया है–"आग से घबराए हुए और झुलसे हुए हाथी, नीलगाएं और सिंह आज मित्र बनकर साथ साथ इकट्ठा होकर घास के जंगल से झटपट निकल आए हैं और नदी के चौड़े तथा रेतीले किनारे पर आकर विश्राम कर रहे हैं।"[1] "जो दंतुर हाथी धूप और प्यास से बेचैन होकर अपने सूखे मुंह से आग फेंकते हुए पानी की खोज में इधर-उधर घूम रहे हैं वे इस समय बबर शेर से भी नहीं डर रहे हैं।"[2] "देखो, हाथियों के पास होने पर भी यह बबर शेर उन्हें मार नहीं रहा क्योंकि गरमी इतनी अधिक पड़ रही है कि बहुत प्यास के मारे इसका सब साहस ठंडा पड़ गया है। अपना पूरा मुंह खोलकर यह बार बार हांफ रहा है। अपनी जीभ से

---

1. गजगवयमृगेन्द्रा वह्निसंतप्तदेहा सुहृद इव समेता द्वन्द्वभावं विहाय।
हुतवहपरिखेदादाशु निर्गत्य कक्षाद् विपुलपुलिनदेशां निम्नगां संविशन्ति।।
ऋतुसंहार, सर्ग 1; 27।

2. विशुष्ककण्ठोद्गतसीकराम्भसो गभस्तिभिर्भानुमतोऽनुतापिताः।
प्रवृद्धतृष्णोपहता जलार्थिनो न दन्तिनः केसरिणोऽपि बिभ्यति।।
ऋतुसंहार, सर्ग 1; 15।

अपने होंठ चाटता जा रहा है। हांफने से उसके कंधों के बाल हिलते जा रहे हैं।"[1]

बरसात आने पर हाथियों का मन मस्त और तन स्वस्थ हो जाता है। ऋतु-संहार में वर्षा ऋतु के वर्णन में कालिदास लिखते हैं–'देखो प्यारी! जल की फुहारों से भरे हुए बादलों के मतवाले हाथी पर चढ़ा हुआ, चमकती हुई बिजलियों की झंडियों को फहराता हुआ और बादलों की गरज के नगाड़े बजाता हुआ, कामियों का प्यारा यह पावस राजाओं का-सा ठाठ-बाट लेकर आ पहुंचा है।"[2] "बरसात में नदियां बहती हैं, बादल बरसते हैं, मस्त हाथी चिंघाड़ते हैं, जंगल हरे-भरे हो जाते हैं, अपने प्रिय से बिछुड़ी हुई स्त्रियां रोती-कलपती हैं, मोर नाचते हैं और बंदर चुप मारकर छिप जाते हैं।"[3] नए नए बादलों के बार बार गरजने से जब बनैले हाथी मस्त हो जाते हैं और उनके माथे से बहते हुए मद पर भौंरे आकर लिपट जाते हैं, जो उस समय उन हाथियों के माथे पर स्वच्छ कमल जैसे दिखाई देने लगते हैं।"[4] "यह देखो, यहां पर हाथियों ने इकट्ठे होकर आपस में लड़-भिड़ कर इस ताल के सब कमल उखाड़ डाले, मछलियों को रौंद डाला और सब सारसों को डराकर भगा दिया।"[5] "मद में भरे हुए राजा उदयन के नलगिरि नामक हाथी ने अपना खूंटा उखाड़ दिया और वह पागल होकर विशाला में इधर-उधर घूमने-फिरने लगा।[6]

श्रीकृष्ण की सेना के हाथियों का रोचक वर्णन माघ ने इस प्रकार किया है :

---

1. तृषा महत्या हतविक्रमोद्यमः श्वसन्मुहुर्दूरविदारिताननः।
न हन्त्यदूरेऽपि गजान् मृगेश्वरो विलोलजिह्वश्चलिताग्रकेसरः।।
ऋतुसंहार, सर्ग 1; 14।

2. ससीकराम्भोधरमत्तकुञ्जरस्तडित्पताकोऽशनिशब्दमर्दलः।
समागतो राजवदुद्धतद्युतिर्घनागमः कामिजनप्रियः प्रिये।।
ऋतुसंहार, सर्ग 2; 1।

3. वहन्ति वर्षन्ति नदन्ति भान्ति ध्यायन्ति नृत्यन्ति समाश्रयन्ति।
नद्यो घना मत्तगजा वनान्ताः प्रियाविहीनाः शिखिनः प्लवङ्गाः।।
ऋतुसंहार, सर्ग 2; 19।

4. वनद्विपानां नववारिदस्वनैर्मदान्वितानां ध्वनतां मुहुर्मुहुः।
कपोलदेशा विमलोत्पलप्रभाः सभृङ्गयूथैर्मदवारिभिश्चिताः।।
ऋतुसंहार, सर्ग 2; 15।

5. समुद्धृताशेषमृणालजालकं विपन्नमीनं द्रुतभीतसारसम्।
परस्परोत्पीडनसंहतैर्गजैः कृतं सरः सान्द्रविमर्दकर्दमम्।।
ऋतुसंहार, सर्ग 1; 19।

6. अत्रोद्भ्रान्तः किल नलगिरिः स्तम्भमुत्पाट्य दर्पात्
इत्यागन्तून् रमयति जनो यत्र बन्धूनभिज्ञः।।
मेघदूत, पूर्वमेघ; 35।

सेना के एक विशाल गजराज ने सरोवर की विशाल तरंगों में अपनी हिलती हुई परछाईं को देखकर समझा कि कोई दूसरा हाथी उससे लड़ने आ रहा है। गुस्से में भरा हुआ वह झट खड़ा हो गया।[1] धारा में लोट लगाने वाले एक हाथी का मद-जल नदी के पानी में धुल गया था। उस कड़वे पानी को दूसरा हाथी पीना नहीं चाह रहा था और गुस्से में भर गया था। पीलवान के अंकुश की परवाह न करने वाले एक क्रुद्ध हाथी ने लेटकर धारा के वेग को ही रोक दिया था। घाट पर पानी न पहुंचने से बहुत से लोग खाली बरतनों को हाथ में लेकर देर तक खड़े रह गए थे।[2]

प्रचंड मद की गरमी से उत्पन्न बेचैनी को शांत करने के लिए हाथी अपनी सूंडों में पानी भरकर गण्ड-प्रदेशों और कान के समीप फेंक रहे थे। खिले हुए कांस के फूल के समान सफेद जल की फुहारें ऐसी लग रही थीं मानो सफेद चंवर को डुलाकर मद के लोभी भंवरों को उड़ाने के लिए ही यह सब किया जा रहा है।[3]

दूसरे हाथी के मद की गंध पाकर एक हाथी को इतना गुस्सा आ गया कि उसने झट अपने मुख के पानी को तो फेंक दिया और अपने मूसल जैसे दांतों से चोट करने लपका। लेकिन, वहां तो सामना करने के लिए कोई हाथी था ही नहीं। उसने चोट इतनी जोर से की कि वह खुद ही गिर पड़ा।[4]

कड़ाहे के समान खुले कान से बहते हुए मद के वेग के आगे भंवरों के झुंड टिक नहीं सके और ऊपर मंडराने लगे।[5]

---

1. आत्मानमेव जलधेः प्रतिविम्बितङ्गमूर्मौ महत्यभिमुखापतितं निरीक्ष्य।
क्रोधादधावदपभीरभिहन्तुमन्यनागाभियुक्त इव युक्तमहो महेभः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 32।
2. नादातुमन्यकरिमुक्तमदाम्बुतिक्तं धूताङ्कुशेन न विहातुमपीच्छताम्भः।
रुद्धे गजेन सरितः सरुषावतारे रिक्तोदपात्रकरमास्त चिरं जनौघः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 33।
3. कीर्णं शनैरनुकपोलमनेकपानां हस्तैर्विगाढमदतापरुजः शमाय।
आकर्णमुल्लसितमम्बु विकासिकाशनीकाशमाप समतां सितचामरस्य।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 35।
4. गण्डूषमुज्झितवता पयसः सरोषं नागेन लब्धपरवारणमारुतेन।
अम्भोधिरोधसि पृथुप्रतिमानभागरुद्धोरुदन्तमुसलप्रसरं निपेते।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 36।
5. दानं ददत्यपि जलैः सहसाधिरूढे को विद्यमानगतिरासितुमुत्सहेत।
यद् दन्तिनः कटकटाहतटान्मिमंक्षोर्मङ्क्षूदपाति परित पटलैरलीनाम्।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 37।

पानी के भीतर डूबे हुए हाथी के कपोलों को छोड़कर ऊपर आकाश में पंखों को फैलाए हुए भंवरों की पंक्तियां ऐसी दिखाई पड़ रही थीं मानो हाथी का काला रंग आसमान में चक्कर लगा रहा हो।[1]

हाथी के मस्तक पर पुता हुआ सिंदूरी रंग नदी के पानी में धुल गया था और नदी में खिले हुए कमल-पुष्पों का लाल पराग हाथी के बदन पर लिपट गया था। ऐसा लगता था कि क्रीड़ा में हाथी और नदी दोनों ही अपने तन-मन की सुध बिसरा गए हैं और हबड़ा-दबड़ी में उन्होंने एक-दूसरे के कपड़े पहन लिए हैं।[2]

जल में तेल की बूंद के समान हाथी का मद चारों ओर चंद्राकार मंडलों में फैलता जा रहा था। ऐसा लगता था मानो ये नदी की बड़ी बड़ी आंखें बन गई हैं। हाथी जब स्नान करके पानी से बाहर निकलते तब उनके अंगों पर ताजे खिले हुए नीलोफर की पंखुड़ियां चिपकी रहतीं जो आंखों के समान शोभायमान होतीं।[3]

एक हाथी अपने प्रतिस्पर्द्धी हाथी से भिड़ने के लिए बेताब हो रहा था। महावत ने उसके कान के पास इतने जोर से अंकुश भोंक दिया कि खून बहने लगा। फिर भी वह उस बलशाली को काबू नहीं कर सका।[4]

मिन्नत-खुशामद करके महावत ने किसी तरह उसे बांधने के लिए राजी कर लिया। जिस पेड़ से वह उसे बांधने जा रहा था उसके तने पर किसी दूसरे जंगली हाथी का मद लगा था। उसकी गंध से वह फिर बिदक खड़ा हुआ और उसने पेड़ को ही तोड़ डाला।[5]

---

1. अन्तर्जलौघमवगाढवतः कपोलौ हित्वा क्षणं विततपक्षतिरन्तरीक्षे।
द्रव्याश्रयेष्वपि गुणेषु रराज नीलो वर्णः पृथग्गत इवालिगणो गजस्य।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 38।

2. संसर्पिभिः पयसि गैरिकरेणुरागैरम्भोजगर्भरजसाङ्गनिषङ्गिणा च।
क्रीडोपभोगमनुभूय सरिन्महेभावन्योन्यवस्त्रपरिवर्तमिव व्यधत्ताम्।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 39।

3. यां चन्द्रकैर्मदजलस्य महानदीनां नेत्रश्रियं विकसतो विदधुर्गजेन्द्राः।
तां प्रत्यवापुरविलम्बितमुत्तरन्तो धौताङ्गलग्ननवनीलपयोजपत्रैः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 40।

4. प्रत्यन्यदन्ति निशिताङ्कुशदूरभिन्न निर्याणनिर्यदसृजं चलितं निषादी।
रोद्धुं महेभमपरिव्रढिमानमागादाक्रान्तितो न वशमेति महान् परस्य।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 41।

5. सेव्योऽपि सानुनयमाकलनाय यन्त्रा नीतेन वन्यकरिदानकृताधिवासः।
नाभाजि केवलमभाजि गजेन शाखी नान्यस्य गन्धमपि मानभृतः सहन्ते।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 42।

रैवतक पर्वत के कुंजों में विचरने वाले हाथियों के कपोलों की रगड़ से जिन वृक्षों पर मद का स्राव लग गया था उन्हें सेना के हाथियों ने झकझोर दिया था। उनके फूल कुम्हला गए थे। भौंरों के झुंड उनका रस पीने आते परंतु निराश होकर उड़ जाते।[1]

कई हाथी इतने बड़े थे कि ऊंचे वृक्षों के नीचे भी नहीं आ सकते थे। महावतों ने उन वृक्षों को बलशाली हाथियों द्वारा तुड़वा दिया। उनकी मोटी मोटी मूलशाखाएं ही उन्हें बांधने के काम आ गईं।[2]

गरमागरम मद की बूंदों को छोड़ने वाले, गरमी से भरे हुए, खिले हुए नीलोफर के भीतरी भाग की भांति कांति वाले विशाल हाथियों को महावतों ने हरिचंदन के वृक्षों के साथ बांध दिया।[3]

हाथियों ने पहाड़ी वृक्षों के जिन तनों पर अपने गण्ड-प्रदेशों को रगड़कर खुजली मिटाई थी वहां उनके मद का सुगंधित स्राव लग गया था। उसे पीने के लिए भौंरों की पंक्तियां इस तरह बैठ गई थीं मानों वह इन्द्रनील मणियों से बनाई हुई माला हो।[4]

इधर-उधर स्वच्छंदता से विचरने वाले पांच साल के एक शरारती गजकिशोर को एक महावत ने अपने गज-शास्त्र के ज्ञान के बूते झिड़कियों और प्यार-दुलार के द्वारा काबू में किया। पैरों की चोटों तथा अंकुश के प्रयोग से भी वह वश में नहीं आ रहा था।[5]

एक हाथी ने ढेर सारे मद को गिराया, पिछले पैरों को बांधने वाली बेड़ियों को

---

1. अद्रीन्द्रकुञ्जचरकुञ्जरगण्डकाषसंक्रान्तदानपयसो वनपादपस्य।
सेनागजेन मथितस्य निजप्रसूनैर्मम्ले यथागतमगामि कुलैरलीनाम्।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 43।

2. नोच्चैर्यदा तरुतलेषु ममुस्तदानीमाधोरणैरभिहिताः पृथुमूलशाखाः।
बन्धाय विच्छिदुरिभास्तरसात्मनैव नेवात्मनीनमथवा क्रियते मदान्धैः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 44।

3. उष्णोष्णशीकरसृजः प्रवलोष्मणोऽन्तरुत्फुल्लनीलनलिनोदरतुल्यभासः।
एकान् विशालशिरसो हरिचन्दनेषु नागान् बवन्धुरपरान्मनुजा निरासुः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 45।

4. कण्डूयतः कटभुवं करिणा मदेन स्कन्धं सुगन्धिमनुलीनवता नगस्य।
स्थूलेन्द्रनीलशकलावलिकोमलेन कण्ठे गुणत्वमलिनां वलेयेन भेजे।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 46।

5. निर्धूतवीतमपि बालकमुल्ललन्तं यन्ता क्रमेण परिसान्त्वनतर्जनाभिः।
शिक्षावशेन शतकैर्वशमानिनाय शास्त्रं हि निश्चितधियांक्व न सिद्धिमेति।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 47।

तोड़ डाला, जिस बड़े खंभे से वह बंधा था उसे एकाएक उखाड़ फेंका और स्वच्छंद हो गया।[1]

एक मंदबुद्धि हाथी को महावत ने बड़ी निष्ठुरता से अंकुश चुभाए। इस पर भी वह चुपचाप आंख मूंदे खड़ा रहा; उसने अपना ग्रास तक ग्रहण नहीं किया।[2]

एक हाथी के आगे बार बार ईख के टुकड़े डाले जाते लेकिन वह उन्हें उठाता ही नहीं था, अपने पास आई हुई हथिनी की ओर भी वह नहीं ताकता था; दोनों आंखें मूंदे वन मे स्वेच्छा से विहार करने के महान आनंद का ही स्मरण करता रहा।[3]

अत्यंत उन्नत शरीर वाला एक हाथी इस बात में अपनी बेइज्जती मान रहा था कि उसे बांधा क्यों गया है? खाने के लिए वह अपनी सूंड नीचे झुकाता ही नहीं था। उसको दिए जाने वाले भोजन का गोला बनाकर पालक ने दोनों हाथों में ऊपर उठा लिया। गोले में से चूती हुई चिकनाई से उसकी बांहें तर हो गई थीं। पालक बड़ी मुश्किल से उसे खिलाने में सफल हुआ।[4]

रस्सियों से तने हुए सफेद तंबू ऐसे लग रहे थे मानों चंद्रमा से चारों ओर किरणें बिखर रही हों। उनके बाहर घेरे में पास पास बंधे हुए हाथी ऐसे दीखते थे मानों काले बादलों की घनघोर घटा हो।[5]

रैवतक पर्वत पर फैले हुए श्रीकृष्ण की सेना के हाथी खेल में वृक्षों को तोड़ रहे थे जिससे रह रहकर ऊंचे शब्द उठते थे। ऐसा लगता था कि पहाड़ चिल्लाकर श्रीकृष्ण को उलाहना दे रहा है–'हे हरि! तुम तो सब जगह पहाड़ों के उद्धार करने वाले के रूप

---

1. स्तम्भं महान्तमुचितं सहसा मुमोच दानं ददावतितरां सरसाग्रहस्तः।
बद्धापराणि परितो निगडान्यलावी त्स्वातन्त्र्यमुज्ज्वलमवाप करेणुराजः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 48।

2. जज्ञे जनैर्मुकुलिताक्षमनाददाने संरब्धहस्तिपकनिष्ठुरचोदनाभिः।
गम्भीरवेदिनि पुरः कवलं करीन्द्रे मन्दोऽपि नाम न महानवगृह्य साध्यः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 49।

3. क्षिप्तं पुरो न जगृहे मुहुरिक्षुकाण्डं नापेक्षते स्म निकटोपगतां करेणुम्।
सस्मार वारणपतिः परिमीलिताक्षमिच्छाविहारवनवासमहोत्सवानाम्।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 50।

4. दुःखेन भोजयितुमाशयिता शशाक तुङ्गाग्रकायमनमन्तमनादरेण।
उक्षिप्तहस्ततलदत्तविधानपिण्डस्नेहस्रुतिस्नपितबाहुरिभाधिराजम्।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 51।

5. शुक्लांशुकोपरचितानि निरन्तराभिर्वेश्मानि रश्मिविततानि नराधिपानाम्।
चन्द्राकृतानि गजमण्डलिकाभिरुच्चैर्नीलाभ्रपंक्तिपरिवेषमिवाधिजग्मुः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 52।

में प्रसिद्ध हो, फिर पहले से ही बोझिल मुझे आप इन हाथियों के भारी बोझ से रसातल को क्यों ले जा रहे हैं?'[1]

विरह-अग्नि में तपते यक्ष को आषाढ़ के प्रथम मेघ ने भी तो एक विशालकाय हाथी के रूप में दर्शन दिए थे। वह उसे लक्ष्य करते हुए कहता है–'जब तुम देवगिरि पहाड़ की ओर जाओगे तब वहां धीरे धीरे बहता हुआ शीतल पवन तुम्हारी सेवा करेगा जिसमें तुम्हारे बरसाए गए जल से आनंद की सांस लेती हुई धरती की गंध भरी रहेगी और जिसे चिंघाड़ते हुए हाथी अपनी सूंडों से पी रहे होंगे।'[2] रेवा नदी से आगे बढ़ जाने पर मेघ से यक्ष कहता है कि जंगल की धरती से उठती हुई तेज सुगंध को सूंघते हुए हाथी तुम्हें आगे का मार्ग बताते चलेंगे।'[3]

अलकापुरी में अपने घर के आसपास की चीजों की पहचान बताते हुए यक्ष मेघ से कहता है–'हे मेघ! तुम तो हो घुटे हुए चिकने अंजन के समान काले और कैलाश पर्वत है तुरंत काटे हुए हाथी-दांत के समान चिट्टा।'[4] 'तुम देखोगे कि पहाड़ जैसे ऊंचे डीलडौल वाले अलकापुरी के हाथी वैसे ही मद बरसाते हैं जैसे मेघ पानी बरसाता है।'[5] 'मंदिर के उपवन के ऊंचे पेड़ों पर तुम्हें छाया हुआ देखकर शिवजी की हाथी की खाल ओढ़ने की इच्छा पूरी हो जाएगी। पार्वती जी पहले तो यह सोचकर डर जाएंगी कि यह हाथी की खाल आ कहां से गई।'[6] यक्ष उसे समझाता है कि 'हाथी के बच्चे जैसे छोटे बनकर तुम मेरे

---

1. धरस्योद्धर्ताऽसि त्वमिति ननु सर्वत्र जगति प्रतीतस्तत्किं मामतिभरमधः प्रापिपयिषुः।
उपालब्धेवोच्चैर्गिरिपतिरिति श्रीपतिमसौ बलक्रान्तः क्रोडद्द्विरदमथितोर्वीरुहरवैः।।
शिशुपालवध, सर्ग 5; 69।

2. त्वन्निष्यन्दोच्छ्वसितवसुधागन्धसम्पर्करम्यः
स्रोतोरन्ध्रध्वनितसुभगं दन्तिभिः पीयमानः।
मेघदूत, पूर्वमेघ; 46।

3. जग्ध्वाऽरण्येष्वधिकसुरभिं गन्धमाघ्राय चोर्व्याः
सारङ्गास्ते जललवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गम्।
मेघदूत, पूर्वमेघ; 22।

4. उत्पश्यामि त्वयि तटगते स्निग्धभिन्नाञ्ज नाभे सद्यः
कृत्तद्विरददशनच्छेदगौरस्य तस्य।
मेघदूत, पूर्वमेघ; 63।

5. शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो वृष्टिमन्तः प्रभेदात्।
मेघदूत, उत्तर मेघ; 13।

6. पश्चादुच्चैर्भुजतरुवनं मण्डलेनाभिलीनः सान्ध्यं तेजः प्रतिनवजपापुष्परक्तं दधानः।
नृत्तारम्भे हर पशुपतेरार्द्रनागाजिनेच्छां शान्तोद्वेगस्तिमितनयनं दृष्टभक्तिर्भवान्या।।
मेघदूत, पूर्वमेघ; 40।

घर के बगीचे में घुस जाना।'[1]

शरद ऋतु के आने पर उन गजेद्रों की गति मंद पड़ गई है जो हथिनियों से युक्त तालाबों को प्यार करते थे, वन में मस्त घूमते थे, फूलों को सूंघकर आनंद मनाते थे और जिनके कपोलों से मद टपका करता था।'[2] इन दिनों अति कामातुर हुई, अनुराग से अपने बच्चे को साथ लेकर मंद चाल से चलती हुई हथिनियां वन में जाते हुए अपने मतवाले पतियों के पीछे पीछे जाती हुई नजर आती हैं।[3]

---

1. गत्वा सद्यः कलभतनुतां शीघ्रसंपातहेतोः
क्रीडाशैले प्रथमकथिते रम्यसानौ निषण्णः।

मेघदूत, उत्तरमेघ; 21।

2. प्रियान्वितानां नलिनीप्रियाणां वनेप्रियाणां कुसुमोद्गतानाम्।
मदोत्कटानां मदलालसानां गजोत्तमानां गतयोऽद्यः मन्दाः।।

रामायण, किष्किन्धा काण्ड, सर्ग 30; 35।

3. समन्मथा तीव्रतरानुरागा कुलान्विता मन्दगतिः करेणुः।
मदान्वितं सम्परिवार्य यान्तं वनेषु भर्तारमनुप्रयाति।।

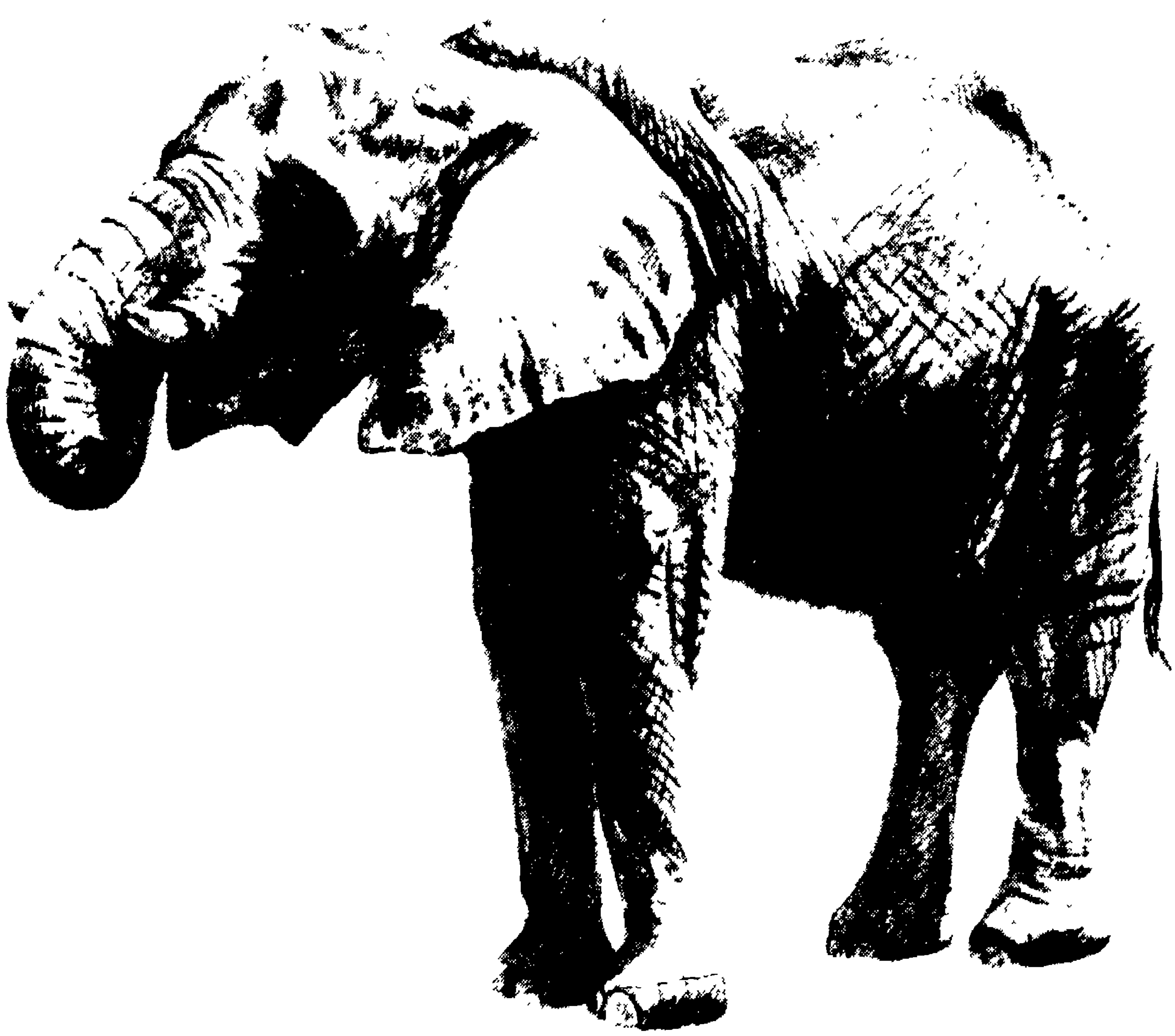
रामायण, किष्किन्धा काण्ड, सर्ग 30; 39।

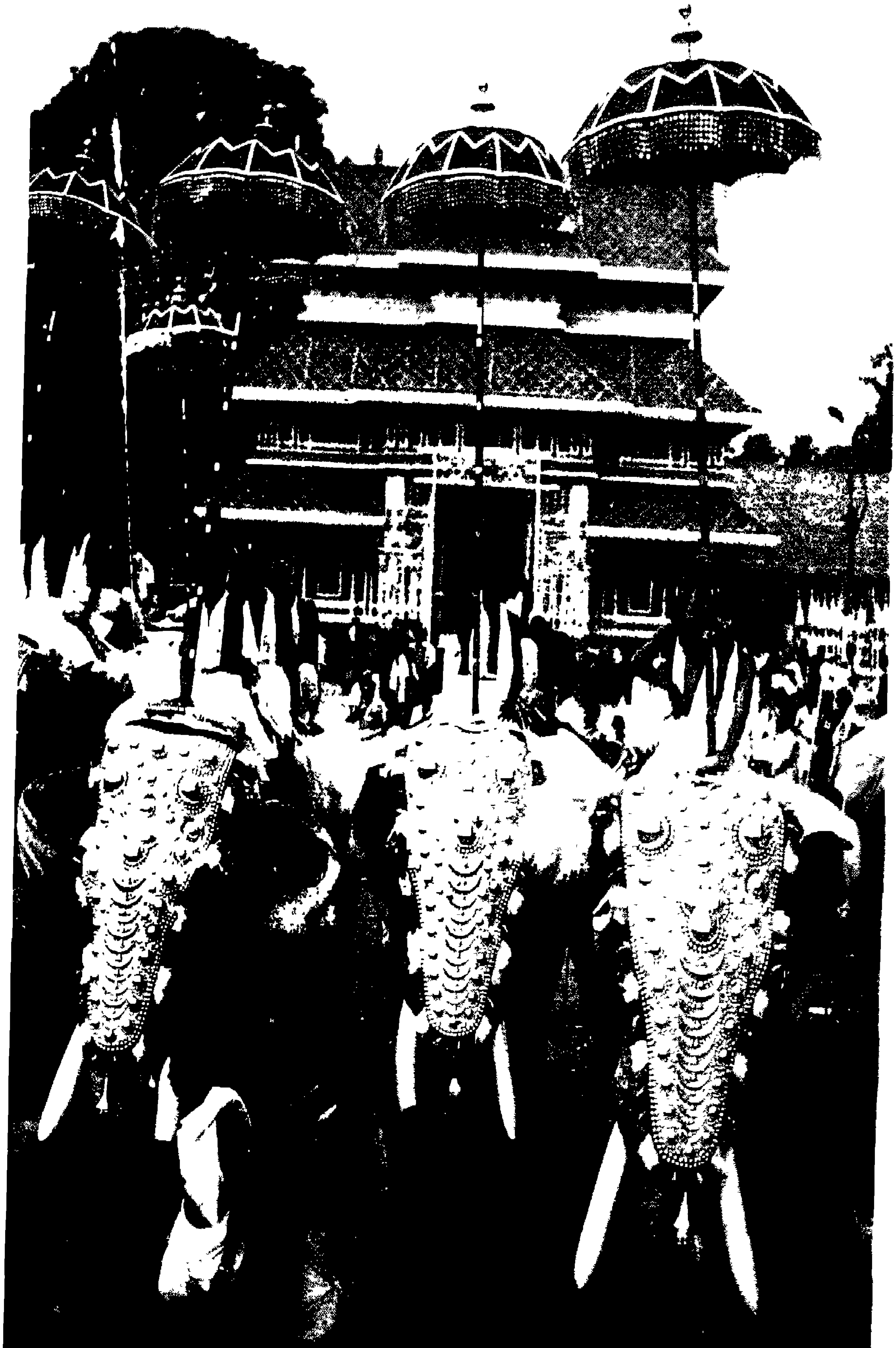
4

मस्ती का दौरा

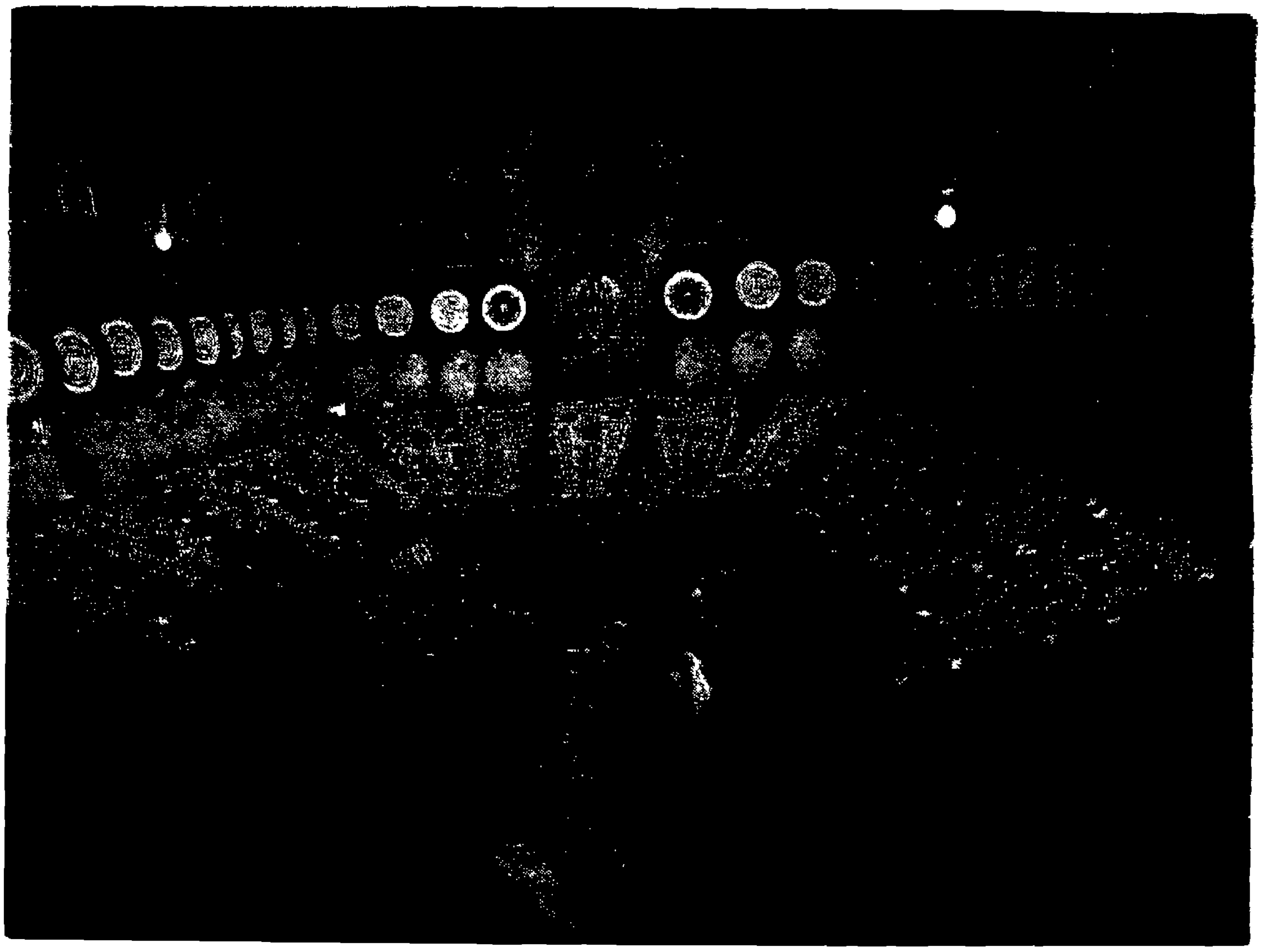
किन्हीं किन्हीं युवा हाथियों को कभी कभी मस्ती का दौरा पड़ता है। कुछ लेखकों के अनुसार अन्य मौसमों की अपेक्षा सर्दियों में अधिक दौरे पड़ते हैं। उत्तर प्रदेश के तराई-भावर क्षेत्र में जंगली हाथियों को मैंने मई महीने में मस्त देखा है।

मस्ती में हाथी के फूले हुए गण्ड-प्रदेशों (temples) में अवस्थित एक छोटे प्राकृतिक छिद्र में से मद बहने लगता है। महावतों की बोली में इस छिद्र को 'दान' कहते हैं। तिरछा, लगभग एक सेंटीमीटर लंबा दान सामान्य अवस्था में बंद रहता है और खाल पर स्पष्ट नजर नहीं आता। जब मद निकलने को होता है तब गण्ड-प्रदेश फूल जाते हैं और दान खुल जाते हैं तथा स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगते हैं। संस्कृत में मद को दान भी कहते हैं।





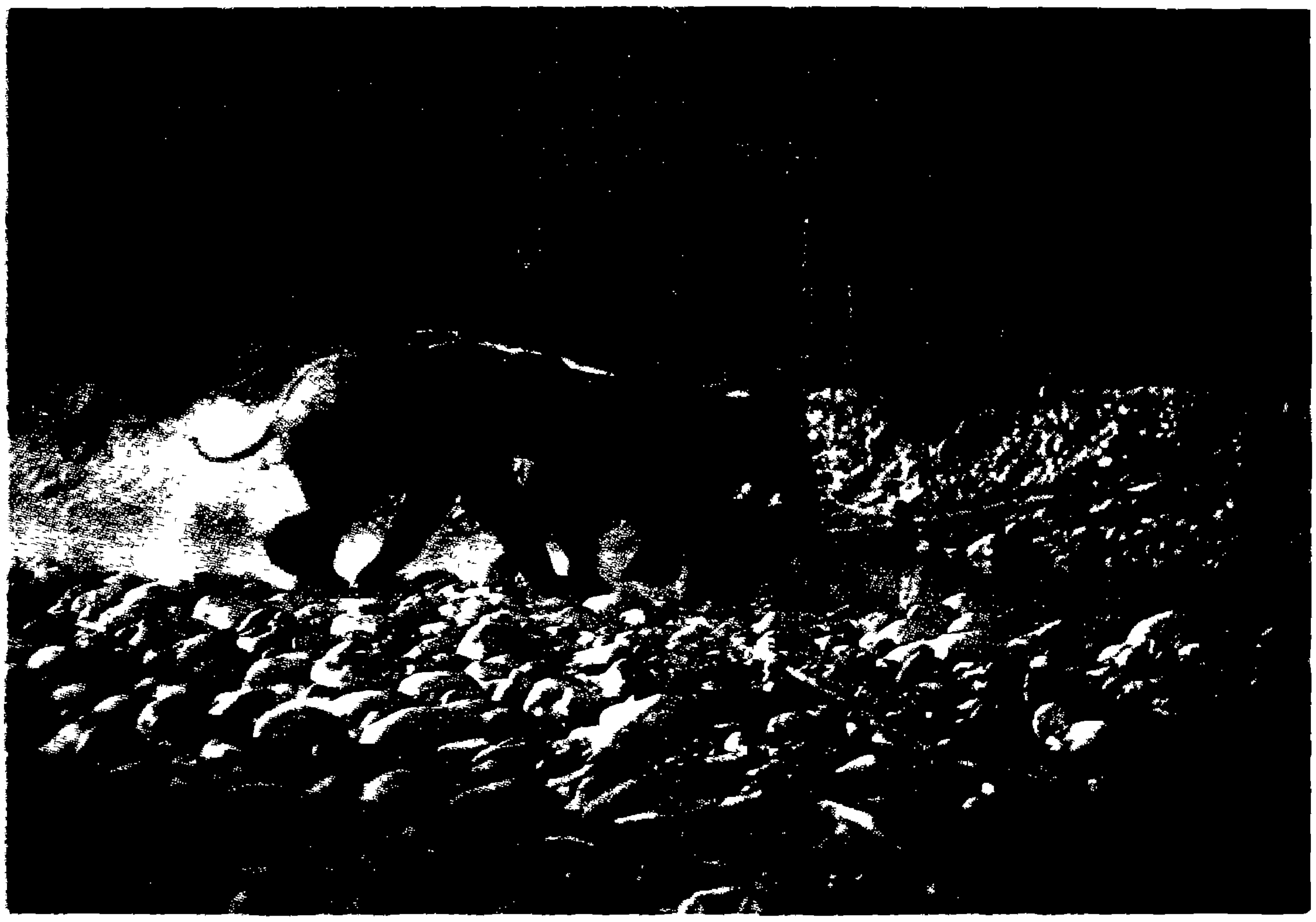
उत्सव के लिए सजाए हुए हाथी







बच्चा मां का दूध पी रहा है। हाथियों के स्तन अगली टांगों के पीछे होते हैं



बोल्डरों के ऊपर बहुत सावधानी से पैर रखते हुए बच्चे बढ़ रहे हैं



मां बच्चे को अपने साथ साथ रखती है



बच्चा मां के संरक्षण में



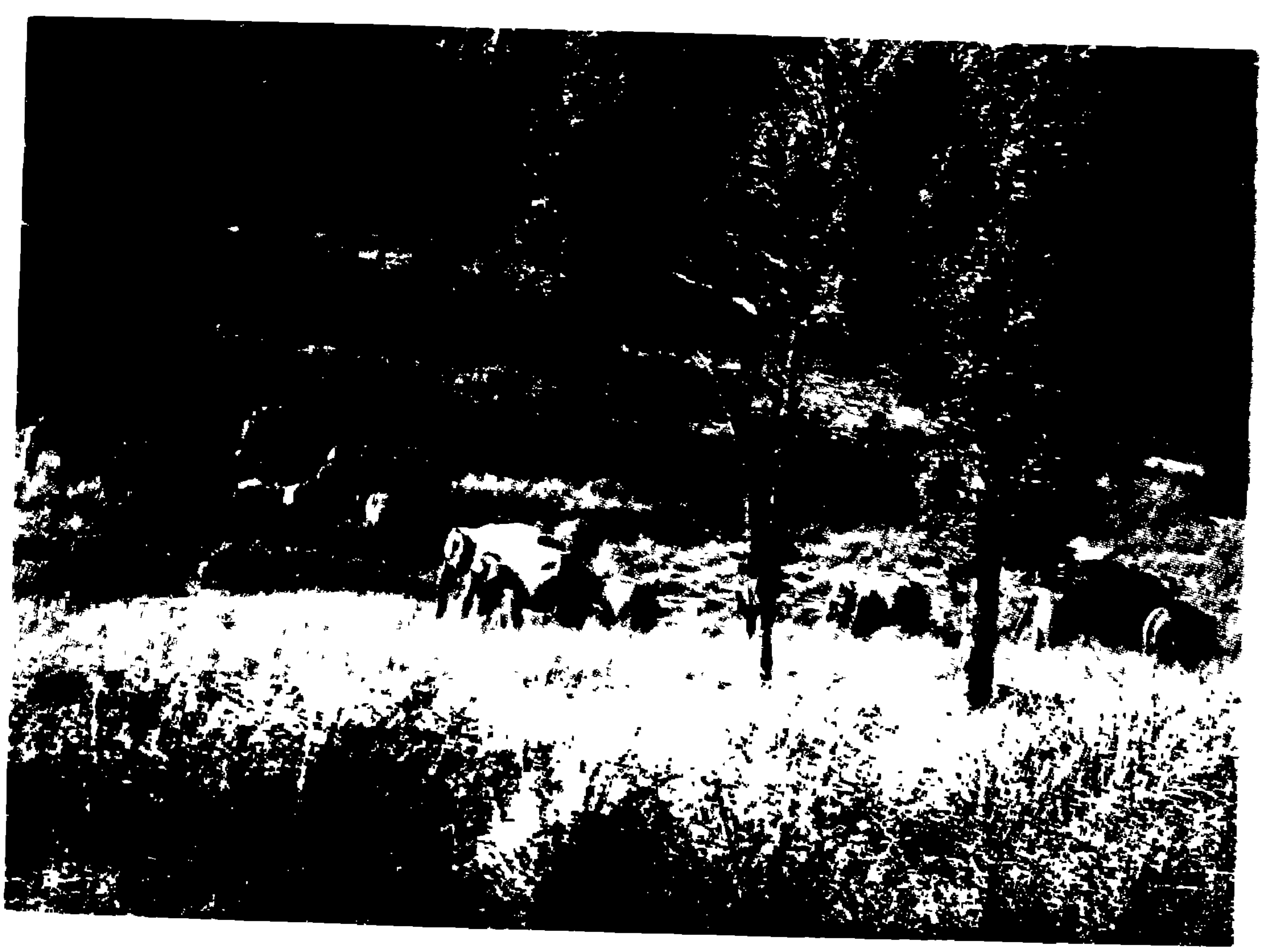
मां और मोती की सूंडों के बीच में सुरक्षित बच्चा



बड़ी मां और उसके संरक्षण में बच्चा



[illegible]



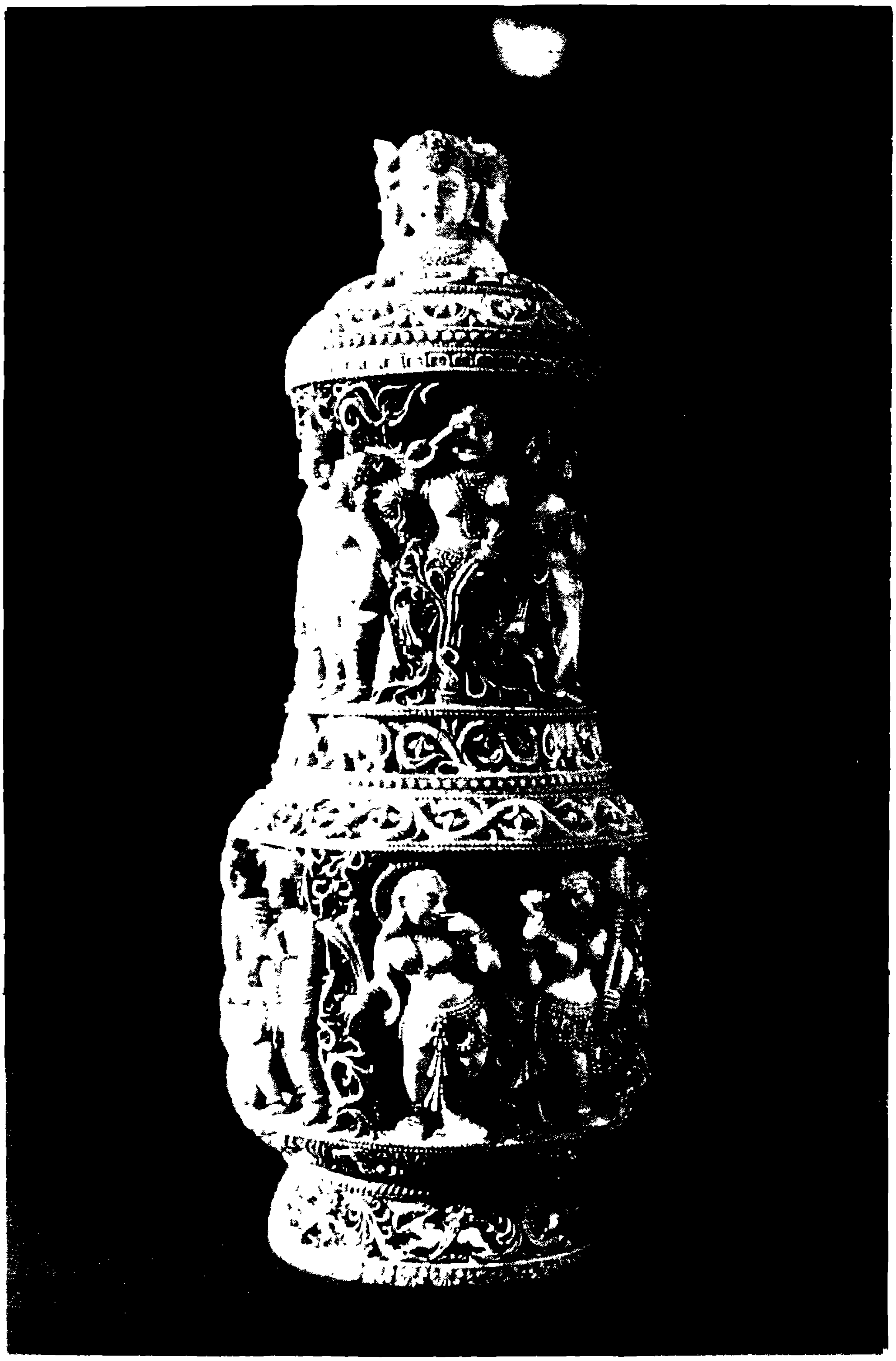
पेरियार में हाथियों का झुंड



मुदुमलई में पोचरों की गोली से जख्मी हाथी



मरे हाथी का हाथीदांत निकाला जा रहा है



हाथीदांत की अमूल्य कलाकृति



हाथी के बच्चे को पिछली टांगों पर खड़ा होना सिखाया जा रहा है



हाथी अपने उद्दंतों और सूंड के बीच में पेड़ के लंबे और भारी तने को उठाकर ले जा रहा है



जुड़वां बच्चे मां का दूध पी रहे हैं



कार्बेट नेशनल पार्क में घास चरते हुए हाथी

नर और मादा दोनों की कनपटियों पर आंख और कान के बीच में दोनों ओर दो दान होते हैं। परंतु मादा के दानों में से मद नहीं बहता। पुराने कुछ ऐसे उल्लेख मिलते हैं जिनमें वन से ताजा पकड़ी गई हथिनियों का मद चूता हुआ देखा गया था। पालतू हथिनियों में यह भाव कभी नहीं देखा गया। हथिनियों में बहने वाले इस स्राव को पुराने पीलवान मद न कहकर मैल कहते हैं। मद में खुशबू अधिक होती है, मैल में नहीं। मैल 8-10 सेंटीमीटर से अधिक बहता भी नहीं। हथिनियों को मस्ती में कभी असंतुलित नहीं देखा गया। क्योंकि नर हाथी मस्ती में आते हैं और खतरनाक हो सकते हैं इसलिए चिड़ियाघरों और सर्कसों में हथिनियों को रखा जाता है।

मद गंदले-काले या भूरे रंग का, चरपरी-सी गंध वाला, गाढ़ा, तैलीय द्रव है। प्रौढ़ और बूढ़े हाथियों में इसका रंग काला होता है, जबकि कम उम्र के हाथियों में भूरा। हाथी की उम्र और स्वास्थ्य के अनुसार इसकी मात्रा कम या अधिक हो सकती है।

पंद्रह साल की उम्र से मद निकलना शुरू हो सकता है। लेकिन यह इतना कम होता है कि दान से निकलकर लगभग एक बालिश्त नीचे तक ही आ पाता है। मद से इतना स्थान गीला रहता है। पैंतीस साल की उम्र तक मद की मात्रा कम रहती है और हाथी अधिक मस्ती में नहीं आता। इस अवस्था को छरेरी कहते हैं। पैंतीस-चालीस साल की उम्र के स्वस्थ और पुष्ट हाथियों में इसकी मात्रा इतनी बढ़ जाती है कि दान से निकलकर गण्ड-प्रदेशों से कपोलों पर बहता हुआ नीचे भी टपकने लगता है। यह वास्तविक मदावस्था है। इस अवस्था में आए हुए हाथी को 'मद्दी हाथी' कहा जाता है। गुस्सा करने से मद अधिक निकलता है। बाल्मीकि ने रामायण में अच्छी नस्ल के हाथियों को पर्वत के समान विशाल, मदोन्मत्त और बलवान बताया है, उनके गण्ड-प्रदेशों से निरंतर मद चूता रहता था। हाथियों का मद से हीन होना अपशकुन माना जाता था।

मद की गंध बहुत तेज होती है जो वातावरण में दूर तक फैल जाती है। जानकार आदमी इस गंध से जान जाता है कि आसपास कोई मद्दी हाथी है। तीव्रता के कारण बहुत से महावत इस गंध को दुर्गंध बताते हैं। संस्कृत के काव्यग्रंथों में इसे आकर्षक गंध माना गया है। किरातार्जुनीय में इस गंध को सप्तपर्ण (Alstonia scholaris R. Br.) या इलायची के फूलों की सुगंध के समान बताया है।[1]

जीव-विज्ञान के अनुसार मद वह स्राव है जो हाथी के गण्ड-प्रदेशों में अवस्थित ग्रंथियों से बाहर निकलता है। मदावस्था में ये ग्रंथियां फूल जाती हैं जिससे गण्ड-प्रदेश जरा से सूजे हुए और पोले नजर आते हैं।

---

1. निःशेष प्रज्ञमितरेणुवारणानां स्रोतोभिर्मदजलमुज्झतामजस्रम्
आमोदं व्यवहितभूरिपुष्पगन्धो मिन्नेलासुरभिमुवाह गन्धवाहः।।
किरात, 7; 38।

हाथियों की अवस्था के अनुसार मद चालीस दिन तक बहता है। शुरू के दिनों में कम मात्रा में, बीच के दिनों में सबसे अधिक और, फिर कम होता हुआ, चालीसवें दिन सूख जाता है।

इन चालीस दिनों तक उसे लगातार पेशाब आता रहता है। उसके मूत्राशय में पेशाब रुकता नहीं। चौबीस घंटे लगातार टपकता रहता है। इन दिनों पेशाब का रंग गाढ़ा पीला हो जाता है और उसमें मद की गंध के समान तेज गंध आती है।

इन शारीरिक परिवर्तनों के अलावा उसके स्वभाव में जो परिवर्तन आ जाते हैं वे बहुत गंभीर हैं। मद के बहिःस्राव से पूर्व चालीस दिन और स्राव बंद होने के पश्चात चालीस दिन, अर्थात कुल 120 दिन तक, जानवर का मिजाज बदला रहता है। इस सारे समय वह जो परिवर्तन दिखाता है उसे मस्ती का दौरा कहते हैं। कुछ विशेषज्ञों ने हाथी की आयु और शारीरिक अवस्था के अुनसार मस्ती की मियाद कुछ दिन या कुछ सप्ताह से लेकर चार-पांच महीने तक बताई है। अच्छे स्वास्थ्य वाले हाथी ही मस्ती के इस दौरे में आते हैं, बूढ़े और रोगी हाथी नहीं।

मद बहने से पहले की अवस्था में कालिदास ने हाथी को अंतर्मदावस्थ बताया है। वे लिखते हैं–किसी मतवाले हाथी के माथे से मद की धारा न भी निकलती हो तो भी देखते ही उसके तेज का अनुमान हो जाता है। राजा दिलीप ने गौ की सेवा के व्रत के कारण यद्यपि छत्र, चंवर आदि राजसी चिह्न छोड़ दिए थे फिर भी अंतर्मदावस्थ हाथी के समान उनके गठे हुए शरीर और मुख के तेज को देखकर कोई भी कह सकता था कि वे सम्राट ही हैं।[1]

मस्ती का दौरा शुरू होने से पहले ही अनुभवी पीलवान जान जाता है कि दौरा पड़ने वाला है और मद निकलना शुरू होने वाला है। हाथी की आंखें चढ़ी होती हैं। वह ऐसी मस्ती की हालत में रहता है कि किसी की परवाह नहीं करता। उसकी मानसिक अवस्था में गड़बड़ी देखी जाती है। ऐसा हाथी जो काम करता है वह उसके प्रतिदिन के काम करने के तरीकों से भिन्न होता है।

मदावस्था में वह आदेशों का पालन कर तो लेता है पर सदा नहीं। वह अपनी मर्जी से चलता है। अत्यंत आज्ञाकारी और विनयशील हाथी भी इन दिनों अपने पीलवान के आदेशों का पालन करने से इंकार करते हुए देखे गए हैं। मदावस्था में हाथी निश्चित रूप से असंतुलित हो जाता है उसके स्वभाव में उत्तेजना तो आ जाती है परंतु आवश्यक नहीं

---

1. स न्यस्तचिह्नामपि राजलक्ष्मीं तेजोविशेषानुमितां दधानः।
आसीदनाविष्कृतदानराजिरन्तर्मदावस्थ इव द्विपेन्द्रः।।

रघुवंश, सर्ग 2; 7।

कि वह आक्रामक और खतरनाक भी हो जाए। उसे क्षुब्ध किया जाए तो वह आक्रामक भी बन जाता है।

मस्ती के दौरान हाथी जब किसी भी तरह काबू में नहीं आता और जानमाल का नुकसान करने पर उतारू हो जाता है तब उसे पागल करार कर देते हैं और गोली से उड़ा देते हैं। मोटे तौर पर प्रत्येक मदमस्त हाथी को पागल हाथी कह देते हैं। यह ठीक नहीं है, क्योंकि पागलपन निश्चित रूप से एक अवस्था है। पालतू हाथियों के अचानक उद्यत हो जाने तथा सहसा खूनी बन जाने का एक कारण मदावस्था भी हो सकता है। सताए जाने से भी ये खतरनाक बनते देखे गए हैं।

ज्यों ज्यों वेग बढ़ता जाता है, मस्त हाथी के स्वभाव में उग्रता तथा चिड़चिड़ापन आ जाता है। वह हर आदमी पर गुस्सा करता है। जिन लोगों को वह सबसे अधिक प्यार करता था और जिन पर भरोसा करता था, उन पर अधिक गुस्सा दिखाता है। सब से पहले सफाई करने वाला भंगी या पीलवान उसके क्रोध का शिकार बनते हैं। ऐसा बेकाबू हाथी अजनबी पीलवान का थोड़ा-बहुत कहना मान लेता है। इसलिए ऐसे अवसरों पर बाहर के पीलवानों को बुलाकर मस्त हाथियों को काबू किया जाता है। यदि ये छूटे हुए हैं तो डरा धमकाकर किसी तरह इन्हें बांधा जाता है। 10 मीटर की एक बेल (जंजीर) अगले पैर में और एक पिछले पैर में बेड़ी के साथ बांध देते हैं। अगली जंजीर को लोड और पिछली को बंधन कहते हैं।

होशियार पीलवान तो मस्ती में आने से पहले ही उसे मजबूती से बांध देता है। उसे अपने थड़े पर ही रखा जाता है। उसके भोजन की संख्या और मात्रा में कमी कर दी जाती है और उसमें नींद लाने वाले द्रव्य भी मिला देते हैं। पुराने पीलवान तो गुंथे हुए आटे के गोले के अंदर अफीम की गोली रखकर खिला दिया करते थे। आधुनिक पशु-चिकित्सक इन्हें ब्रोमाइड की भारी मात्रा पर रखते हैं। तंबाकू भी मस्ती का इलाज बताया गया है। प्रत्येक हाथी को प्रतिदिन लगभग 450 ग्राम सूंघनी खिलाने से वे मस्ती में ऊधम नहीं मचाते। बाल्टीमोर की पशुवाटिका में तो सूंघनी तंबाकू हाथियों की दैनिक खुराक बन गई है।

जब तक वह पूरी तरह दौरे से मुक्त नहीं हो जाता, दूर से ही उसके आगे चारा फेंक दिया जाता है। सामान्यतया मस्ती के तीन-चार महीनों में उससे काम नहीं लिया जाता है और इसी तरह बांधकर रखा जाता है। मस्ती की हल्की अवस्था में, जिसे छरेरी कहते हैं, काम लेने में विशेष खतरा नहीं होता।

जंगल में आवश्यक नहीं कि मदमस्त हाथी अपनी मर्जी से इधर-उधर भटकते फिरें। वे बहुधा झुंड के साथ ही दिख जाते हैं, परंतु कभी कभी झुंड से जरा दूर, लेकिन बगल में ही, थोड़ा बहुत चर लेते हैं। मस्त हाथी असाधारण रूप से बलशाली बन जाता है और वह भयंकर भी बन सकता है। दूसरे नर हाथी उसे देखते ही या उसके मद की गंध पाते

ही, दूर भाग जाते हैं।

पुराने पीलवान मद के संबंध में कई प्रकार की बातें कहते हैं। उनके अनुसार मद दिमाग का रस है और यदि यह रुक जाए तो हाथी पागल हो जाता है। उनकी राय में हाथी की काम-प्रवृति से इसका संबंध हो सकता है। मस्ती के पहले चालीस दिनों में यदि संभोग कर ले तो वह मस्त नहीं होता। प्रजनन अंगों के विकास और कामेच्छा के साथ मद के संबंध में अभी पूर्ण ज्ञान नहीं प्राप्त हो सका है।

हाल के वर्षों में मदावस्था में बिगड़े हाथी का प्रसिद्ध उदाहरण उदयगिरि है। राष्ट्रीय समारोहों में भाग लेने के लिए यह भारत के राष्ट्रपति की गजशाला में था। लगभग आठ बरस की उम्र में उसे असम के वनों में पकड़ा गया था और बड़ी सावधानी से कांजीरंगा के प्रसिद्ध हाथी अकबर के ढंग पर सधाया जा रहा था। 1954 में इसे राष्ट्रपति के लिए दिल्ली भेज दिया गया। 1956 में एक जुलूस का नेतृत्व करते हुए वह बीमार हो गया। बाद में उसे निमोनिया हो गया। अगले साल उसने अचानक अपने सेवादार को मार डाला जब वह उसे सांकल में बांधने की कोशिश कर रहा था, उसने उसे पैर के नीचे कुचल दिया। इसके तुरंत बाद उसने भोजन ग्रहण कर लिया और बिलकुल शांत हो गया।

उसमें मस्ती के चिह्न प्रकट हो रहे थे, इसलिए कुछ समय के लिए उसे बांध दिया गया था। परंतु बाद में वह ठीक हो गया और उसे खोल दिया गया। सैर के लिए उसे घुमाया जा रहा था कि अचानक बिगड़ गया। गुजरते हुए एक मिलिट्री ट्रक पर उसने हमला किया और टक्कर दे मारी। फिर एक आदमी के पीछे भागा जिसने घर में घुसकर अपनी जान बचाई। उसका महावत कोई तीन घंटे तक बड़ी हिम्मत से उसके सिर पर डटा रहा और उसे काबू करने की कोशिश करता रहा। अपनी जान को खतरे में समझकर महावत भी एक पास के मकान की छत पर कूदकर चढ़ गया। काबू करने की सब कोशिशें व्यर्थ जानकर उसे गोली मार दी गई।

ऐसा लगता है कि उदयगिरि असम की जलवायु से आकर यहां अपने को अनुकूल नहीं बना पाया। दिल्ली जैसी कड़ाके की ठंड, भयंकर गर्मी और अत्यंत सूखा उसने असम में कभी नहीं देखा था। सन् 1956 की गरमियां बिताने उसे देहरादून भेज दिया गया था। तब वह मोटा और भरा हुआ नजर आता था। अगले साल जब उसे फिर देहरादून भेजने की तैयारी कर रहे थे तभी यह घटना घटी।

हाथी जब गुस्से में होता है तब उसके अंदर दानव की-सी ताकत आ जाती है। 25 दिसंबर, 1968 के एक समाचार में बताया गया था कि आरा से कुछ दूर जगदीशपुर में एक हाथी ने गुस्से में आकर सड़क पर खड़ी एक कार को अपनी सूंड से उठाकर हवा में उछाल दिया। देखने वालों को ऐसा लगा कि खेल में किसी नन्हें बच्चे ने अपनी खिलौने की मोटर ऊपर फेंकी है। हाथी द्वारा उछाली हुई कार छत के सिरे से जा टकराई। खैर

हुई कि ड्राइवर, हाथी के क्रोध को देखकर, पहले ही भाग खड़ा हुआ था। बाद में महावत ने किसी तरह हाथी को काबू किया।

गजमुक्ता

यह पुरानी धारणा रही है कि किसी किसी हाथी के मस्तक में मोती पाया जाता है।[1] इस दुर्लभ पदार्थ का नाम गजमुक्ता है। देवीपुराण (सातवीं से नवीं शताब्दी) के अनुसार सिंह हाथी के मस्तक को अपने बड़े नखों से फाड़ देता है और गजमुक्ता निकाल लेता है।[2] श्रीकृष्ण के साथ जो राजा रैवतक पर्वत पर चढ़ाई कर रहे थे उन्होंने सिंहों की उन गुफाओं में डेरा डाला था जिनमें गजमुक्ताओं के ढेर पड़े थे। सिंहों ने शिकार में मारे जंगली हाथियों के मांस को तो खा लिया था परंतु मोतियों को वहीं फेंक दिया था।[3] श्रीकृष्ण की सेना के हाथी मार्ग की थकान उतारने के लिए नदी में घुसकर स्नान करने लगते हैं। सूंडों में पानी भरकर वे अपने ऊपर फेंक रहे हैं। माघ कहते हैं कि सूंड से निकली पानी की फुहारें ऐसी लग रही हैं मानों हाथियों के सिरों से गजमुक्ताएं बरस रही हैं।[4] एक डिंगल छंद में कहा गया है कि हाथियों को देखकर शेर ने तो उसका शिकार करने की सोची, भंवरा उसका मद पीने के चक्कर में पड़ गया और हंस यह सोच कर खुश हुए कि चलो गजमुक्ताएं चुगेंगे।[5] कवियों की कल्पना के अर्द्धनारीश्वर अपने गले में एक तरफ गजमुक्ता की माला धारण करते हैं और दूसरी तरफ हड्डियों की माला।[6]

प्राणिशास्त्र के विद्वान इसे कवियों की कल्पना के अतिरिक्त और कुछ नहीं मानते।

---

1. मौक्तिकं न गजे गजे। — भर्तृहरि।
2. कारयेन् मृगराजनतु महाकरि मदापहम्।
   महानख करोन्खात मुक्ताफल पदप्रवम्।। — देवीपुराण, अध्याय 35।
3. उच्छिद्य विद्विष इव प्रसभं मृगेन्द्रानिन्द्रानुजानुचर भूपतयोऽध्यवात्सुः।
   वन्येभमस्तकनिखातनखाग्रमुक्तमुक्ताफलप्रकरभाञ्जि गुहागृहाणि।।
   शिशुपालवध, सर्ग 5; 12।
4. आलोलपुष्करमुखोल्लसितैरभीक्ष्णमुक्षाम्बभूवुरभितो वपुरम्बुवर्षैः।
   खेदायतश्वसितवेगनिरस्तमुग्धमूर्धन्यरत्ननिकरैरिव हास्तिकानि।।
   शिशुपालवध, सर्ग 5; 30।
5. शादूलौ वन संचरै करन गयंदा नास।
   प्रबल सोच भंवरा पड़े, हंसा हुवे हुलास।।
6. आध हड़ माल आध गजमोता।
   विद्यापति के सौ गीत, गीत 88।

इसके विपरीत दूसरा विचार यह है कि किसी किसी हाथी का मद इतना गाढ़ा होता है कि कपोल की खाल की झुर्रियों में जमकर कठोर बन जाता है। तब उसे निकालकर मोती के आकार में घिस लेते हैं और बींधकर मोती के समान धारण करते हैं। चटगांव के पहाड़ों में 1928 में किए गए खेदे में एक वन अधिकारी को एक जंगली दंतुर मारना पड़ा था। उसके एक उद्दंत के मध्य में मांसल भाग के अंदर एक छोटा अंडाकार पदार्थ पाया गया था। आकार में यह मनुष्य की छोटी अंगुली के नाखून के बराबर होगा। शक्ल-सूरत में यह हाथीदांत लगता था, परंतु जरा अनघड़ था। वहां मौजूद महावतों और हाथी पकड़ने वालों ने उसे देखा तो वे अचंभे में पड़ गए। उनके विचार में यह पदार्थ गजमुक्ता था।

दुर्घटनाएं और मृत्यु

असम में एक बार जंगली हाथियों के झुंड के साथ रेलगाड़ी टकराकर पटरी से उतर गई थी। दिसंबर, 1963 की एक दुर्घटना में बताया गया था कि बिहार के सोनपुर पशु मेले से एक हाथी उत्तर प्रदेश के कसिया नामक स्थान के लिए रवाना हुआ। मार्ग में ईख के खेत में किसी जानवर के निकलने से वह भड़क गया और खेत में बने हुए कुएं में जा गिरा। समाचार सुनते ही सारा गांव वहां इकट्ठा हो गया। लगभग एक हजार आदमियों ने रस्सों से बांधकार बड़ी कठिनाई से उसे जिंदा ही बाहर निकाल दिया।

वनों में जंगली हाथी कई बार दलदल में फंस जाते हैं। वाल्मीकि ने ऐसे उदाहरण लिखे हैं। दलदल में से निकलने की ये जितनी कोशिश करते हैं अपने भार के कारण वे उतना ही अंदर धंसते जाते हैं। भूख और प्यास के मारे तब उनका दयनीय अंत हो जाता है।

इस विपत्ति से बचाने के लिए तब अन्य हाथी सहायता के लिए आ जाते हैं। जंगल से छोटे-मोटे पेड़ों को उखाड़कर वे फंसे हुए हाथी के सामने दलदल में डाल देते हैं। उनके ऊपर पैर जमाता हुआ वह कीचड़ से बाहर निकल आता है।

ढिकाला (कार्बेट नेशनल पार्क) में आनेवाले पर्यटकों में एक बार नया शादीशुदा जोड़ा आया। ये लोग बम्बई से घूमने यहां आए थे। दरअसल ये नैनीताल जा रहे थे। पार्क की शोहरत सुनकर सैर-सपाटे के लिए दो दिन यहीं ठहर गए। पार्क की पालतू हथिनी पर हौदा कसा गया और वे उस पर सवार होकर जंगल देखने निकल पड़े। महावत के अतिरिक्त एक बंदूकधारी गेम गार्ड भी इनके साथ हौदे पर बैठा था। उस दिन के कार्यक्रम में इस दंपति को राम गंगा के पार शीशम के मझाड़े में सांभर और पाढ़े (हौग डीयर) के झुंड दिखाना था। रामगंगा की उथली धाराओं को पार करने के लिए कोई निश्चित स्थान

तो है नहीं, बोल्डरों से बचने के लिए हाथी किसी भी कुंड में से नदी को पार कर जाता है। कुंड के तल में प्रायः रेत होती है जिस पर चलने में हाथी को तकलीफ नहीं होती।

ऐसे ही एक कुंड को पार करती हुई यह हथिनी अब बीच में फंस गई। उसे निकालने की महावत की सब कोशिशें बेकार गईं। बम्बई का वह युगल बेहद घबरा गया। गेम गार्ड ने एक एक करके इन्हें पीठ पर उठाकर धारा पार की। उसके बाद हौदे को उतारकर किनारे रख दिया गया। महावत सोचता था कि बोझ हलका हो जाने पर हथिनी शायद निकल जाए। उसने अंकुश से प्रहार किए। हथिनी ने भी अपना पूरा जोर मारा। लेकिन बाहर निकलने की बजाए वह और अधिक धंसती चली गई। अपनी बिगड़ती दशा को देखकर वह बेहद घबरा गई और बार बार चिंघाड़ने लगी। तट पर खड़े नवदंपति की मानसिक दशा तो पहले ही बिगड़ चुकी थी, अब उनकी देह से भी पसीना छूटने लगा। हथिनी की दिल दहलाने वाली चिंघाड़ को सुनकर वे कांप उठते और एक-दूसरे से चिपट जाते।

अपनी जिम्मेदारी की गंभीरता को महसूस करता हुआ गेम गार्ड तरह तरह के उपाय सोचने में लगा था। इतने में मझाड़े के झुरमुट में से जंगली हाथियों की चिंघाड़ सुनाई दी। कीचड़ में फंसी हुई हथिनी की चिंघाड़ के जवाब में यह आवाज थी। जंगली हाथियों ने सहायता के लिए शीघ्र आने का संकेत दिया था। क्षण-भर में ही दो जंगली दंतुर मझाड़े में से निकलकर दूर तक फैली हुई सफेद बालू पर बढ़ते हुए दिखाई दिए। सुहागरात बिताने आया हुआ जोड़ा इतना भयभीत हो गया था कि बेहोश-सा होकर वहीं गिर पड़ा। उन्हें काठ मार गया। कुछ अंगों पर तो उनका नियंत्रण बिलकुल जाता रहा।

गेम गार्ड विचलित नहीं हुआ। हवाई फायर करके उसने जंगली हाथियों को खदेड़ा। पार्क से मदद मंगाई गई और जैसे-तैसे इस विपत्ति से हथिनी को उबारने में सफलता मिली।

हाथियों का जानी नुकसान शेर द्वारा किया जाता है। शिशु हाथी को यह मजे में मार लेता है और उसका मांस स्वाद से खाता है। युद्ध में शेर हाथी के पुट्ठों या पीठ पर झपट पड़े तो वह उसे तुरंत झटककर उतार फेंकता है और अपने पैरों के नीचे कुचलने की कोशिश करता है। यदि सामने से हमला किया जाए तो हाथी घुटने टेककर अपने सिर की चोट से उसे कुचलने की या उद्दंतों से बींध देने की कोशिश करता है। यह सब वह अतिशय फुर्ती, साहस और कुशलता से करता है। शिकार में यदि शेर की जान पर आ जाए तो वह हाथी पर हमला करने से नहीं चूकता। काजीरंगा नेशनल पार्क में अकबर नामक सवारी के हाथी ने शिकार में घायल हो गए एक शेर को दुलत्ती की चोट से मार डाला था। इस घटना के कुल छह सप्ताह बाद अकबर बुढ़ापे के कारण मर गया।

गैंडा ऐसा प्राणी है जो हाथी को मजे से चुनौती दे सकता है। काजीरंगा के नेशनल पार्क में एक बार अकबर नामक बड़े डील-डौल वाले हाथी पर सवार होकर कुछ लोग गैंडों

को जंगल में चरता हुआ देखने गए। अचानक ही गैंडों के एक जोड़े ने उस पर हमला बोल दिया। अकबर ने मैदाने-जंग में डटकर बड़ी बहादुरी से इस विपत्ति का सामना किया। वह झट घुटनों के बल बैठ गया। सूंड को लपेटकर उसने दोनों उद्दंतों में सुरक्षित कर लिया। अपने ताकतवर उद्दंतों के ऊपर दोनों गैंडों को बारी बारी से उठाकर ऐसी पटकनी दी कि उन्हें छठी का दूध याद आ गया। चीखते हुए वे झाड़ियों के झुरमुट में जा छिपे। हाथी ने यह सारा युद्ध बैठे बैठे अपने सिर से इस खूबी के साथ किया कि महावत और सवारियां गिरकर उन दोनों दैत्यों के चंगुल में न पड़ जाएं। अपने शरीर की मांसपेशियों पर उसका कितना अच्छा नियंत्रण था!

हाथियों का शिकार

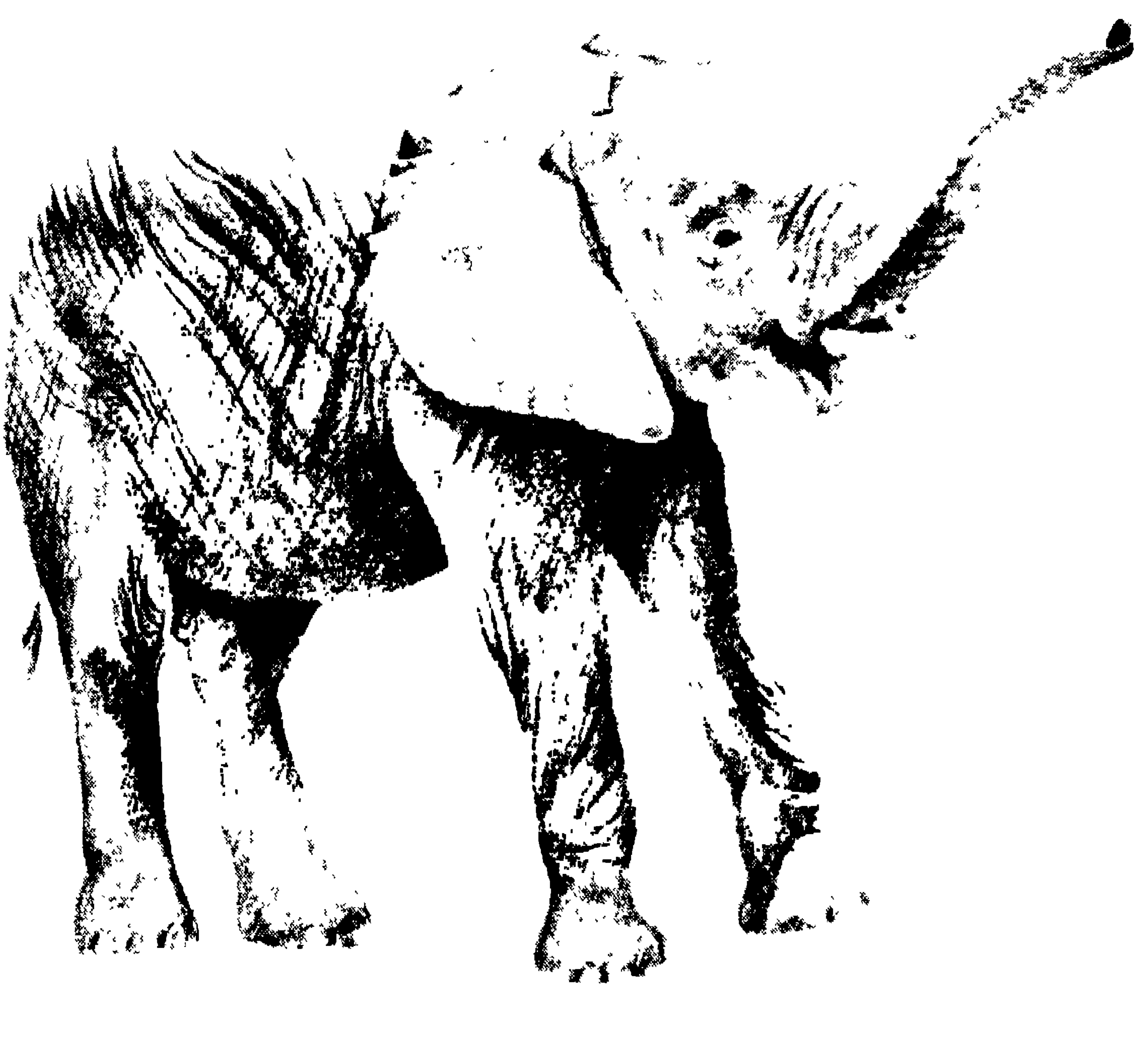
अब तो हाथी को बंदूकों से मारना बहुत आसान हो गया है। पुराने ढंग की एकनली .500 बोर राइफल की गोली से एक बार एक हथिनी मार डाली गई। कान के सूराख से लगभग 25 सेंटीमीटर नीचे गरदन में गोली घुसी और फेफड़े को छेदती हुई हृदय तक पहुंच गई। कुल मिलाकर इसने लगभग एक मीटर छेद कर दिया था। गोली घातक न हो तो दस टन का पशु किस तेजी से दौड़कर हमला करता है, इस पर विश्वास नहीं होता। दिमाग में गोली लगे तो हाथी मर जाता है। मर्मस्थल पर निशाना ठीक बैठने पर यह ऐसे गिर पड़ता है मानो एक ध्वस्त इमारत गिर पड़ी हो।

5

रोग

हाथियों को तरह तरह के रोगों का शिकार होते देखा गया है। प्लीह-ज्वर, चेचक, पैर और मुख के कुछ रोग भी इन्हें दबा लेते हैं। पागल कुत्तों के काटने से ये पागल भी हो जाया करते हैं। उत्तर भारत की कड़ाके की सर्दियां पालतू हाथी को रास नहीं आतीं। सन् 1962 के फरवरी महीने में साधुओं की एक जमात ने एक शहर से बाहर डेरा डाला। उपहार में मिले जमात के हाथी को सर्दी से बचाने और रात को छप्पर के नीचे बांधने का प्रबंध साधू लोग नहीं कर पाए। शीत के प्रकोप में वह खुले मैदान में ठिठुरकर मर गया।

सहसा सर्दी लग जाने से या अचानक गर्म-सर्द हो जाने से हाथी को निमोनिया या प्लूरोनिमोनिया हो जाता है। पकड़ने की कशमकश में हाथी का शरीर गरम हो जाता है।



ऐसी अवस्था में उसे सहसा ठंडा पानी पिला दिया जाए या ठंडे पानी से नहला दिया जाए तो उसे निमोनिया या शूल होने का अंदेशा रहता है। असम में हाथी पकड़ने वालों की इस धारणा के विपरीत दक्षिण में नए पकड़े हाथी को खूब पानी दिया जाता है जिससे वह अपनी देह और मिजाज को ठंडा कर सके।

जंगली हाथी जब बस्तियों पर धावा बोलते हैं तब गुड़, आटा जो कुछ मिले और जितना मिले सब खा जाते हैं। तंबाकू तक को ये नहीं छोड़ते। अंधाधुंध खाने से तब ये उदरशूल और पेचिश जैसे उदर-विकारों से बीमार पड़ जाते हैं। कई बार तो इतना सख्त बीमार हो जाते हैं कि एकांत में कई दिनों तक पड़े पड़े दस्त करते रहते हैं। कहते हैं कि खारा (जिला बिजनौर, उत्तर प्रदेश) के जंगल में कटान करने वालों की झोपड़ी पर इक्कड़ हाथी ने हमला कर दिया। सन् 1966 की गर्मियों का मौसम था। मजदूरों को बांटने के लिए ठेकेदार ने 200 किलोग्राम तंबाकू और सोलह भेली (40 किलोग्राम) गुड़ जमा कर रखा था। खूंखार इक्कड़ के सामने जाने की किसी में हिम्मत नहीं बंधी। उसने अपनी मर्जी से छककर गुड़ और तंबाकू खाया। झोपड़ी में रखे चार मटकों में से शीतल पानी पीकर तृप्त हो गया। इतने में उस पर तंबाकू का नशा चढ़ गया। वह वहीं गिर पड़ा। उसे दस्त होने लगे। पंद्रह दिन तक वह अर्द्धचेतनावस्था में पड़ा रहा। तंबाकू का विष दस्तों में निकल गया। तब वह खुद ही वन में चला गया।

हाथी की आंतों में पराश्रयी पैदा हो जाते हैं जो उसके स्वास्थ्य को खराब करते हैं। इससे बचने के लिए वह कुछ प्राकृतिक दवाओं को जानता है। मुख्यतया वह खनिज लवण से युक्त मिट्टी और पानी पर निर्भर करता है। जंगल में कहीं कहीं ऐसी मिट्टी मिलती है। वहां जाकर यह मिट्टी फांकता है, मानों कि हाजमे का चूर्ण फांक रहा हो। नमकीन मिट्टी के इन स्थानों को लेह-भूमियां (salt-licks) कहते हैं।

एक बीमारी में हाथी के मांस का क्षय हो जाता है और उसके अंगों में पानी संचित होने लगता है। ऐसे बीमार हाथी पर से भी सभी प्रकार के नियंत्रण उठा लिए जाते हैं और उसे स्वेच्छा से जहां-तहां चरने की छूट दे दी जाती है।

उत्तर प्रदेश के तराई जंगलों में मई, 1967 में मैंने एक बड़ी हथिनी देखी थी जिसकी पिछली बाईं टांग के बीचों-बीच एक बड़ा उभार था। यह लंगड़ाकर चलती थी। झुंड के सदस्यों को आत्मरक्षा के लिए तेजी से भागना पड़ता था तो वह पिछड़ जाती थी। लंगड़ी टांग तेजी से भागने में पूरी तरह साथ नहीं देती थी। टांग में इस विकार के दो कारण हो सकते हैं। एक यह कि किसी दुर्घटना में फंस जाने से टांग की हड्डी टूट गई हो और कालांतर में स्वतः ही जुड़ गई हो। दूसरा यह कि किसी विद्रधि (abscess) या अर्बुद (tumour) की उपस्थिति के कारण सोज नजर आ रही हो। हाथियों को गठिया भी हो जाया करता है जिससे वे लंगड़ाकर चलते हैं और पूरे वेग से भाग नहीं पाते।

जंगली हाथियों को गड्ढों में गिराने तथा उसके बाद पकड़कर कैंप तक लाने और उनको सधाने में अनेक बार चोटें लग जाती हैं। बहुत-से जख्म तो ऐसे होते हैं जिन्हें एक अनुभवहीन आदमी देखकर घबरा जाता है, परंतु वास्तव में वे ऊपरी सतह तक ही सीमित होते हैं और जल्दी भर जाते हैं। रस्सों द्वारा बनाए गए जख्म अक्सर अधिक गंभीर होते हैं। खेदे के अधिकारी को सबसे अधिक भय इस बात का रहता है कि कसकर बांधे गए रस्से से कहीं उस जगह की वाहिनियां (nerves) और मांसरज्जु (tendons) न कट जाएं। इसलिए शिविर में नए हाथी के पहुंचते ही बंधनों का दबाव कम किया जाता है।

बड़े हाथी की अदम्य शक्ति ही उसकी सबसे बुरी दुश्मन बन जाती है। भयंकर कशमकश में वह अपने को बुरी तरह जख्मी कर लेता है। उसे काबू करने में भी ताकत व मारपीट का सहारा लेना पड़ता है।

टखनों और गले पर रस्सों के द्वारा जख्म हो जाना एक सामान्य क्षति है। इनको भरने देने के लिए यह ध्यान रखना होता है कि रस्से इनके ऊपर न बांधे जाएं। ये जख्म अधिक गंभीर हों तो टांगों या गरदन से बांधने की बजाए उसके शरीर पर रस्सा कसा जाता है।

हाथी को गिरने से बचाना चाहिए। गिरने पर कुहनियों तथा घुटनों पर लगी चोटों के कारण जबर्दस्त सोज आ जाती है। मुंह के बल गिरे तो उद्दंतों और दंतलियों के टूटने से चेहरे और सूंड पर खतरनाक जख्म बन सकते हैं।

गरदन पर रस्सों की रगड़ से अक्सर ऐसे गहरे और चौड़े घाव बन जाते हैं कि उनमें पूरी मुट्ठी चली जाती है। नाखूनों और टखनों पर घावों के सड़े हुए मांस से ऐसी बू फैलती है कि वहां खड़ा होना मुश्किल होता है। मक्खियां इनमें अंडे दे देती हैं जो कुछ ही दिनों में कुलबुलाते पोतकों का रूप धारण कर लेते हैं। व्यथा से प्राणी बेहद परेशान होता है। प्रतिदिन उसकी शक्ति क्षीण होती जाती है। जख्मों का जहर सारे खून में फैल जाता है। कष्ट से वह लेट भी नहीं पाता। उसकी आंखों में खुमारी भरी रहती है पर असह्य वेदना के कारण वह सो नहीं पाता। जहरबाद के इन लक्षणों को देखकर हाथी को जंगल में मुक्त करना ही श्रेयस्कर होता है।

पालतू हाथियों से टक्कर हो जाने पर जंगली हाथी कई बार उद्दंतों की चोट से ऐसे बड़े घाव बना देते हैं कि उनमें कुहनी तक समा जाती है। इलाज के बाद ऐसा हाथी ठीक भी हो जाए तो पहले जैसा ताकतवर नहीं रहता उससे हल्का काम ही लिया जा सकता है।

गंभीर बीमारी में हाथी यद्यपि कभी लेटता नहीं और लंबे अरसे तक खड़े खड़े ही नींद पूरी कर लेता है परंतु यह देखा गया है कि ऐसा हाथी अंतिम समय तक खाना नहीं छोड़ता। इससे उसे कुछ शक्ति मिलती रहती है। आश्चर्य है कि ऐसा बीमार हाथी जंगल

में भाग निकलने की चेष्टा नहीं करता। उन दिनों वह नाम मात्र के ही बंधन में बंधा होता है।

जख्म जब घातक बन रहे हों, या प्रशिक्षण की यातनाओं में हाथी बुरी तरह हार गया हो या वह किसी ऐसी अज्ञात अंदरूनी तकलीफ का शिकार हो जिसमें रोग मुक्ति के कोई चिह्न न दिखाई दें और प्राणी की सामान्य अवस्था में सुधार होता ही न हो तब उसे पड़ोस के जंगल में छोड़ दिया जाता है। निश्चय ही पकड़ने वालों को इससे भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है।

शिविर के अंदर हाथी का मर जाना अशुभ माना जाता है। इस विश्वास के पीछे मुख्य कारण तो यही होगा कि इतनी बड़ी लाश को ठिकाने लगाना आसान काम नहीं है।

जख्मों पर जब दवा लगाई जाती है तब हाथी बुरी तरह चीख उठता है। बांस के सिरे पर एक कूची बांधकर उसको दवा में डुबो लेते हैं। इस कूची के द्वारा दूर से ही जख्म पर दवा लगाना आसान हो जाता है। एक आदमी गन्ने का लालच देकर हाथी का ध्यान बंटाता है और दूसरा दवा पोत देता है। लेकिन जब सूंड जख्मी हो गई हो तब उस पर दवा लगाने में बहुत दिक्कत पेश आती है। बांस के सिरे को वह झट सूंड में पकड़ लेता है और पटककर तोड़ देता है। इससे सूंड के घावों को भरने में लंबा समय लग जाता है।

हाथियों की चिकित्सा विषयक साहित्य

चिकित्सा विज्ञान की अलग अलग शाखाओं के विकास के साथ साथ, प्राचीन भारत में हाथियों के विविध रोगों का विधिवत अध्ययन किया जाने लगा था। उनके रोगों का निदान तथा इलाज का वर्णन करने वाले शास्त्र को गजायुर्वेद या हस्त्यायुर्वेद कहते थे। असम में हाथियों की संख्या अत्यधिक रही है। इसीलिए इन प्राणियों के जीवन के संबंध में प्रामाणिक जानकारी देनेवाला साहित्य यहीं रचा गया और इनके बारे में अनेक प्रकार की लोककथाओं की सृष्टि भी यहां हुई। ईसा के जन्म से लगभग एक हजार साल बाद में पालकाप्य नामक एक ऋषि पैदा हुए जिन्होंने उस समंय के हाथियों संबंधी ज्ञान को लिपिबद्ध किया। यह ज्ञान संस्कृत भाषा में उपलब्ध है।

एक कल्पना के अनुसार पालकाप्य की उत्पत्ति सामान्य मनुष्य के समान नहीं हुई थी। उन्होंने एक हथिनी के गर्भ से जन्म लिया था। जंगली हाथियों के साथ ही वे पले और उनके साथ ही विचरण करते रहे। उनका भोजन भी वही था जो हाथियों का था। इन प्राणियों को सताने वाले रोगों और उनके इलाज से भी वह भलीभांति परिचित हो गए थे। तब उन्होंने हाथियों की नस्लों पर, उनके रोगों की पहचान तथा चिकित्सा पर हस्त्यायुर्वेद नामक एक ग्रंथ लिखा। समुद्र की ओर बहनेवाली लोहित नदी के तट पर पालकाप्य तप

करते थे। दिहांग (या त्सांग-पो) से जो नदी मिलती है उसे लोग भ्रमवश ब्रह्मपुत्र कहते हैं, पर वास्तव में वह लोहित है।

असम के अहोमों के अलावा तंजौर के चोल राजाओं ने भी हाथियों के बारे में वृहत साहित्य की सृष्टि की थी। उत्तर भारत में तो चार सौ ईस्वी से पहले ही हाथियों के रोगों का इलाज करने में दिलचस्पी पैदा हो गई थी। चरक नाम के एक मेधावी चिकित्सक ने अपने ग्रंथ में मुख के अलावा 'एनीमा' के द्वारा भी बीमार हाथियों को दवाएं देने के निर्देश लिखे हैं।

भारत में हाथियों के लालन-पालन और प्रशिक्षण में मुसलमान लोगों ने अधिक दिलचस्पी ली। इस पेशे में अब भी मुख्यतया वही लोग हैं। इनमें हबीब नामक एक उस्ताद हो गए हैं। उन्होंने संस्कृत में लिखी पुस्तकों को आधार बनाकर अपने अनुभवों के निचोड़ रूप में, क्रियात्मक प्रयोजन के लिए, सरल चौपाइयों में एक पुस्तक लिखी जिसका नाम हबीब चौपाई है। पुरानी पीढ़ी के किसी किसी पीलवान के पास यह मिल जाती है। अपने हाथियों के इलाज के लिए वह हबीब चौपाई में लिखे देसी जड़ी-बूटियों के नुस्खों पर भरोसा करता है।

हिंदी के सरल छंदों में लिखी गई पुस्तकें पुराने पीलवानों के पास सुरक्षित हैं। कुछ किताबें तो सचित्र हैं जिनमें हाथियों की नस्लों के चित्र तथा रोगों में उनकी बदली हुई अवस्था के चित्र हैं। एक अरसे से ऐसी पुस्तकों का प्रणयन और लेखन समाप्त हो गया है। पुरानी हस्तलिखित पुस्तकें ही पीलवानों के कुनबों में पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही हैं। ये लोग किसी को, यहां तक कि अपने आश्रयदाताओं को भी, गजपोथियां नहीं दिखाते। महावतों की सेवा करके और उनका विश्वास प्राप्त करके मैंने कुछ पुस्तकें देखी हैं। मेरी धारणा है कि उन्हें प्रकाशित करने का काम प्राच्य विषयों में शोध करने वाली संस्थाओं ने तुरंत हाथ में न लिया तो ज्ञान का यह दुर्लभ भंडार लुप्त हो जाएगा।

एक गजपोथी की बंदिश में कहा गया है :

गुरमुख वेग हिले, नुगरा भटकत आन।

अर्थात गुरु की कृपा से ज्ञान के द्वार खुलते हैं, बिना गुरु के (नुगरा) तो भटकता ही रहता है।

भाव के तेक हैं फील के, ये महादुःख की खान।

पीलवान की परिभाषा में भाव का अर्थ बीमारी से है। यद्यपि वे हाथी (फील) को महान दुःखों की खान बताते हैं परंतु सुविधा के लिए उनके रोगों का बारह भागों में श्रेणीकरण करते हैं। इस पोथी की अंतिम बंदिश है :

सम्वत् 1720 का सम्वत् परवीन
कारतिक सुदी गुरपंचमी गजपोथी पूरी कीन।

दांत के रोग

दंतरोगों से आक्रांत होने पर हाथी अपने उद्दंत स्वयं ही तोड़ने को बाध्य हो जाते हैं। आर. सी. मोरिस को एक बार एक वृक्ष की दुसंखी के बीच में फंसे हुए हाथी के उद्दंत का 45 सेंटीमीटर लंबा टुकड़ा मिला था। मोरिस का ख्याल था कि हाथी के उद्दंत की जड़ में तकलीफ थी जिससे छुटकारा पाने के लिए उसने जानबूझकर उद्दंत तोड़ा था। पहले तो उसने चट्टानों की दरारों के बीच में अड़ाकर उसे तोड़ने की कोशिश की थी परंतु जब इसमें सफलता नहीं मिली तब दुसंखी में अड़ाकर उद्दंत को तोड़ दिया। जंगली नर हाथियों में कई बार तुमुल युद्ध होता है, जिसमें उनके उद्दंत टूट जाते हैं। पालतू दंतुर हाथियों के उद्दंत जंगली हाथियों के साथ भिड़ंत में टूटते हुए देखे गए हैं।

हाथी की आयु

हाथी दीर्घजीवी प्राणी माना जाता है। प्राचीन भारत में विश्वास था कि ये 300 वर्ष तक जिंदा रहते हैं। सामान्य विश्वास के अनुसार इनकी उम्र 150 से 200 वर्ष तक होती है। मुगलों के मत में इनका औसत जीवनकाल 120 वर्ष है। सैण्डर्सन की सम्मति में जंगली अवस्था में हाथी कम-से-कम 150 साल तक जिंदा रहता ही है। फ्लावर्स यह संख्या 75 तक ले आए हैं। उनके ख्याल में यह मनुष्य के समान ही लंबी उम्र भोगता है। उनके पर्यवेक्षण पालतू हाथी के जीवन पर आधारित थे।

हाथियों के विशेषज्ञों ने इन विचारों को एक मत से स्वीकार नहीं कर लिया। श्रीलंका का हुर्ताला नामक हाथी इसका ऐतिहासिक साक्षी है। डचों के आधिपत्य के समय यह उनकी सेवा में एक सौ वर्ष तक रहा था। विश्वास किया जाता है कि मरते समय यह 170 साल का था। इस शताब्दी के शुरू में प्रिन्सेस एलिस नामक एक हाथी एक अंग्रेजी सर्कस कंपनी के साथ आस्ट्रेलिया ले जाया गया था। यह 152 साल की उम्र भोगकर मरा था। बेतिया रियासत के एक उदाहरण में इमान प्यारी नामक हथिनी 99 साल में पहुंच गई थी। 80 साल तक तो कई पालतू हाथी जिंदा रहते देखे गए हैं। जंगल में ये संभवतया अधिक उम्र भोगते हैं। वहां की स्वास्थ्यप्रद परिस्थितियों में 100 वर्ष तक जिंदा रहते होंगे। इनकी जिंदगी के सबसे अच्छे साल 35 और 45 के बीच होते हैं।

हाथी की उम्र पर बहुत-सी बातों का प्रभाव पड़ता है। पालतू हाथी को सख्त मशक्कत के काम पर लगा रखा है तो उसकी उम्र का कम हो जाना स्वाभाविक है। यदि वह आलसी और निष्क्रिय जीवन बिता रहा है तो इससे उसके स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव अवश्य पड़ेगा। जंगल में हाथी का व्यायाम जरूरत के मुताबिक हो जाता है।

पालतू हाथियों को वह कुदरती खुराक भी नहीं मिल पाती जिसमें पर्याप्त

विविधता रहती है। जंगली हाथी जिन अवस्थाओं में रहते हैं वे बिलकुल ही भिन्न हैं। उन वनस्पति बहुल जंगलों और चरागाहों की कल्पना कीजिए जहां जंगली हाथियों को मनपसंद खाना मिलता है और जलधाराओं तथा सोतों में स्नान का आनंद मिलता है। पुष्ट नर हाथी को जंगल में देखकर मैं दंग रह जाता हूं। कैसा गोल-मटोल, लेकिन गठा हुआ शरीर कुदरत ने इन्हें दिया है। इनके झुंड की हथिनियां भी प्रायः ऐसे भरे बदन वाली होती हैं। उनके देह में भी हड्डियां नजर नहीं आतीं। उद्दंतों वाले एक जंगली हाथी को मनुष्य के सिवाय किसी और से डर भी तो नहीं होता।

उम्र का अंदाज लगाना

खानदानी पीलवान बचपन से ही हाथियों के जन्म को और उनके विकास की विभिन्न अवस्थाओं को गौर से देखते रहते हैं। इसलिए उन्हें हाथियों की उम्र का अंदाज लगाने में दक्षता प्राप्त हो जाती है। हाथियों के विकास के आरंभिक वर्षो में उनके द्वारा लगाया गया अंदाज करीब करीब बिलकुल विश्सवनीय होता है। ज्यों ज्यों शरीर विकसित होता जाता है उम्र के अंदाज में कठिनाई बढ़ती जाती है। जब तक शरीर बढ़ रहा होता है तब तक उसकी ऊंचाई को नापकर अंदाज की गई उम्र पर भरोसा किया जा सकता है। सामान्यतया पच्चीस साल के लगभग हाथी की वृद्धि रुक जाती है। इसके बाद ऊंचाई से कोई सहायता नहीं मिलती। जिन हाथियों की उम्र का हमें सही ज्ञान है उनकी देह से तुलना करना भी इस दिशा में विश्वसनीय मार्गदर्शन होता है। उम्र का पता लगाने में निम्नलिखित बातों पर गौर किया जाता है :

1. गण्ड-प्रदेश उभरे हुए हैं या धंसे हुए?
2. कनौतियां (कान का ऊपरला किनारा) कितनी गिरी हुई हैं?
3. कान की लौल (नीचे लटकने वाला भाग) कितनी शिथिल पड़ गई है?
4. गालों पर सफेदी कितनी आ गई है?
5. सूंड का आधार कैसा है?
6. टांगों और सूंड का पतले होते जाना
7. पूंछ की जड़ के दोनों ओर नालियों की गहराई
8. चाल और गति
9. लीद की अवस्था। बूढ़े हाथी की लीद में अनपचे पदार्थ तथा रस्सीनुमा रेशे निकलने लगते हैं
10. दांतों की हालत। मुख्यतया दांत हाथी की उम्र के सूचक होते हैं।
11. शरीर के ढांचे में सामान्य रूप से गिरावट।

बड़े हाथियों की उम्र का अंदाज उतनी बारीकी से नहीं लगाया जा सकता जितना बच्चों और बढ़ते हुए हाथियों का, जिनमें ऊंचाई मुख्य मापदंड होती है। किंतु किसी भी हाथी की भलीभांति परीक्षा करने के बाद सभी पीलवान उसकी उम्र के बारे में एक ही राय पर पहुंचते हैं।

रहस्यपूर्ण समाधि

आदिवासियों की मान्यता है कि हाथी कहीं दूर घने जंगल में जाकर अपना शरीर छोड़ते हैं, इसलिए इनकी मौत का पता नहीं चलता। मरे हुए हाथियों के अवशेष बहुत कम मिलने के कारण उनकी जीवन लीला की समाप्ति के बारे में कितनी ही रोचक कल्पनाओं को जन्म मिला है। इन कल्पनाओं में मृत्यु और उसके बाद उनकी रहस्यमय समाधि के बारे में दिलचस्प परिकल्पनाओं की सृष्टि हुई है।

जंगली हाथी 'वाईल्ड एलिफेंट' नामक पुस्तक में सर इमर्सन टेन्नेंट ने श्रीलंका के आदिवासियों के विश्वास के बारे में बताया है। ये लोग मानते हैं कि एडम्स पीक के पूर्व में एक घाटी के अंदर हाथियों का गुप्त समाधि-स्थल है। चट्टानों के एक तंग दर्रे से गुजरकर हाथी वहां पहुंचते हैं। भारत में मैसूर के कुर्राबा लोग भी हाथियों के समाधिस्थ होने में विश्वास रखते हैं।

आर्लिन्स के ड्यूक ने मध्य अफ्रीका में एक अभियान दल संगठित किया था। जिसका उद्देश्य हाथियों का कब्रिस्तान तलाश करना था। बोंगो कबीले के एक बहुत बूढ़े आदमी ने दल को बताया था कि कई साल पहले उसने एक लड़खड़ाते हाथी का पांच दिन तक लगातार पीछा किया था। अंत में वह गुप्त कब्रिस्तान तक पहुंच गया था जिसकी रक्षा में संतरी हाथी तैनात थे। उन्होंने उस पर हमला कर दिया।

हाथियों की मृत्यु से संबद्ध एक बात दिलचस्प है कि ये प्रायः पानी के पास या पानी के अंदर प्राण त्यागते हैं। इस प्रसंग में मुझे एक घटना स्मरण है। उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में लाल ढांग से कुछ मील दूर, जमींदार के खेतों में जंगली हाथियों के कुछ झुंड धावा बोला करते थे। एक बार कनस्तर पीटने पर भी जब वे न डरे तब उन्हें भगाने के लिए जमींदार ने हवा में गोली दागी। रात के अंधेरे में वह झुंड के नेता की कनपटी पर जा लगी। झुंड के साथ जख्मी हाथी भी भाग खड़ा हुआ। कोई 805 मीटर जाकर वह झुंड से अलग हो गया और एक जोहड़ में बैठ गया। जमींदार के कारिंदे उसे हर रोज देखने जाते थे। उन्होंने उसे सदा पानी में ही बैठा पाया। खाने के लिए भी वह जोहड़ से बाहर नहीं निकला। तीन-चार दिन बाद वह मरा हुआ पाया गया। बरसात के चार महीने गुजर जाने के बाद मैंने उसकी हड्डियां देखी थीं। वह एक शानदार दंतुर हाथी था।

चिटागोंग पर्वत पथ की कर्णफूली नदी में जल-समाधि लेनेवाले एक हाथी का आंखों

देखा वृत्तांत एक लेखिका ने दिया है। वह और उसका भाई दोनों घटनास्थल पर मौजूद थे। उनके बिलकुल नजदीक से ही वह दंतुर जंगल से निकला। सिर हिलाने के ढंग से पता चलता था कि वह सख्त दर्द से परेशान है। अपने भारी शरीर को सम्हाल न पाने के कारण वह बुरी तरह लड़खड़ा रहा था। जैसे-तैसे वह देह को घसीट रहा था। हर एक कदम लगता था कि वह गिर पड़ेगा। आखिर वह पानी तक पहुंचने में कामयाब हो गया और बड़े शोर के साथ वहां गिर पड़ा। मर्मातक वेदना से अंत पाने की इस घटना को वे दोनों बहन-भाई आश्चर्य के साथ प्रत्यक्ष देखते रहे। पानी की सतह पर वह भारी लाश फिर कभी दिखाई नहीं दी।

चण्डी वनशृंखला में घासीराम सोत के अंदर मरे हुए एक हाथी की हड्डियां मैंने 1952 में देखी थीं। नील नदी में स्टीमर पर यात्रा करते हुए सर विलियम गोवर्स को एक बड़े दंत-विहीन नर हाथी की लाश मिली थी। उसे मरे हुए तीन-चार दिन हो गए होंगे। गोवर्स की राय है कि भूमध्य रेखा के साथ वाले अफ्रीका के पूर्वी भाग में अधिकतर हाथी नरकुलों से व्याप्त दलदली भूमियों में मरते हैं। खारतूम में ब्लूनाइल ब्रिज के स्तंभों को नीचे बिठाते समय नदी के तल से कोई 6 मीटर नीचे हाथी, दरियाई घोड़ों और दूसरे जानवरों की हड्डियां पाई गई थीं। यह अब प्रायः सभी स्वीकार करने लगे हैं कि प्राकृतिक परिवेश में हाथियों की मृत्यु पानी के अंदर या पानी के निकट होती है।

असम में असाध्य और मरणासन्न हाथी को पानी के पास छोड़ दिया जाता था। यदि किसी पंकिल क्षेत्र में पहुंचाना संभव होता था तो उसे वहां ले जाते थे। शिविर का कोई न कोई आदमी प्रतिदिन उसे देखने अवश्य जाता था। बीमार हाथी अनेक दिनों तक उसी जगह पर रहता था। वहीं पर दम तोड़ देने या कुछ ठीक हो जाने पर अन्यत्र चले जाने तक वह खाता बहुत कम था, परंतु पानी पीता रहता था। सूंड के सिरे को पानी में डुबोते हुए उसे कई बार देखा जाता था। यदि वहीं मर गया तो गिद्धों व जंगल के दूसरे भंगियों द्वारा सफाचट कर दिया जाता था। उसकी हड्डियां मृदु पंक में गायब हो जाती थीं।

पालती दून में 8 मार्च, 1957 में आपसी लड़ाई में एक हाथी मारा गया था। मई में मैंने दो स्थानीय गेम गार्डो की सहायता से उसकी हड्डियां तलाश करनी चाहीं। इन दोनों व्यक्तियों ने उसकी लाश को वहां दो महीने पहले सड़ते देखा था। एक घंटे तक हम लोग उसके अवशेषों को तलाश करते रहे, परंतु उनका कहीं नामोनिशान तक नहीं मिला। इस हाथी की लाश पर शेर, गुलदार, गीदड़, सेह, गिद्ध—सभी दावत उड़ाते देखे गए थे। हो सकता है कि इनके द्वारा हड्डियां कहीं दूर घसीटी गई हों।

इन मांसाहारी लुटेरों का तो जंगल की लाश पर कानूनी हक है। उनके द्वारा जाने या अनजाने अवशेषों का बिखर जाना स्वाभाविक है। गैर कानूनी लूट से भी हड्डियों के गायब होने का खतरा रहता है। मीठी-बेरी में मरे एक हाथी की हड्डियों को देखकर मैंने

गुरुकुल कांगड़ी के जीव-विज्ञान संग्रहालय के लिए प्राप्त करने का विचार प्रकट किया। हाथी एक बड़ा दंतुर था, किसी भी संग्रहालय में उसका अस्थि-पंजर होना गौरव की बात होती। अधिकारियों को मेरा विचार पसंद आया। लिखा-पढ़ी करने के बाद हमें उसकी हड्डियां उठाने की अनुमति मिल गई। हम लोग एक ट्रक लेकर वहां पहुंचे तो हड्डियां नदारद थीं। खोज-बीन से पता चला कि हड्डियां जमा करने वाला एक आदमी उन्हें काट-काटकर गधों पर लाद ले गया है और उसने उन्हें पास के हड्डी गोदाम में बेच दिया है।

जंगली हाथी आग से डरते हैं। जब ये फसलें खाने आते हैं तब खेतों में आग जलाकर, जलती हुई मशालें घुमाकर, ढोल और पीपे पीटकर शोर-गुल के साथ इन्हें खदेड़ दिया जाता है। जंगलों के किनारे बसे किसानों को अनुभव है कि अकेले आग की सहायता से इन्हें खदेड़ने के प्रयत्नों में हमेशा सफलता नहीं मिलती। गांवों के पास-पड़ोस के वनों में रहने वाले हाथी मनुष्य की इस युक्ति को निष्फल करने का उपाय भलीभांति जान गए हैं। खेत के सिरे पर आग जलाकर जब किसान चले जाते हैं तब सूंडों में पानी भरकर हाथियों का झुंड आता है और दमकल के पाइपों की तरह उनकी सूंडें देखते ही देखते आग को बुझा देती हैं।

हिंसक जानवरों के समान हाथी भी कभी कभी खौफनाक ओर खूंखार प्राणी बन जाता है। मनुष्य या दूसरे जानवरों की जान लेने के इरादे से यह भिन्न भिन्न तरीकों से हमला करता है। पैर या सूंड से जोर की ठोकर मारकर वह उसे गिरा देता है। कभी कभी सूंड में उठाकर धरती पर दे पटकता है। कई बार पैरों के नीचे रौंद देता है, खोपड़ी को चकनाचूर कर देता है ओर छाती को कुचल देता है। अनेक बार उद्दंतों से देह को बींध डालता है।

दोनों टांगों को चीरकर मनुष्य को मारने की बात भी अक्सर सुनने में आती है। हम्पी, विजयनगर (पंद्रहवीं शताब्दी) में एक प्रस्तर फलक पर राजा की गजशाला के एक सुंदर पलकदंते को इसी तरह संहार करते दिखाया गया है। आगे की ओर खिंची हुई इसकी पुतली और कोर की बड़ी सफेदी से यह पगला हाथी प्रतीत होता है। पांच गजग्रह इसे वश में करने की कोशिश में हैं। एक गजग्रह उसकी पकड़ में आ गया है। अपने बाएं पैर से पलकदंते ने उसकी एक टांग दबा ली है। दूसरी टांग को सूंड में लपेटकर वह ऊपर की ओर खींच रहा है जिससे दोनों टांगें बीच में से चिर जाएं। संहार को प्रभावशाली बनाने के लिए पलकदंता अपने दाएं पैर की अंगुलियों को गजग्रह की टांगों के संधिस्थल पर रखकर नीचे की ओर दबाव डाल रहा है। पीछे से हमला करने वाले गजग्रहों में से एक की टांग को पलकदंते ने अपने पिछले पैर से दबा लिया है। इसे छुड़ाने के लिए दूसरा साथी इसके केशों को पकड़कर खींच रहा है। हत्यारे को वश में करने का यह संघर्ष बड़ा ओजस्वी है। मौत से जूझते हुए गजग्रह की हिम्मत प्रशंसनीय है। सुनिश्चित मौत की इस

घड़ी में भी वह पूरे होश में है। दीनता से वह अपनी जान हत्यारे के हवाले नहीं करना चाहता। एक कोहनी और एक हाथ को धरती पर टिकाकर वह अब भी उठने की कोशिश कर रहा है।

सिंगापुर में एक सर्कस कंपनी के हाथी ने छह वर्षीय चीनी बालक को कुचलकर मार दिया था। इस लड़के ने केले के अंदर लाल मिर्चे भरकर हाथी को खिला दी थीं। हाथी को इतना गुस्सा आया कि उसने सूंड मारकर लड़के को परे फेंक दिया और फिर उसकी छाती पर पैर रखकर कुचल दिया।

कानपुर का एक जमींदार किसी विवाह में शामिल होने के लिए हाथी पर जा रहा था। लंबे सफर को तय करने के कारण हाथी प्यास से व्याकुल हो गया था। पीलवान ने चाहा कि जरा रुककर उसे पानी पिला लिया जाय। जल्दी के कारण जमींदार इससे सहमत नहीं हुआ। उल्टे वह हाथी पर बिगड़ने लगा। इस पर हाथी को गुस्सा आ गया। गांव पहुंचकर उसने पीठ पर बैठे जमींदार तथा उसके साथियों को नीचे गिरा दिया। इस पर भी उसका क्रोध शांत न हुआ। बदला लेने के इरादे से उसने जमींदार को सूंड में उठाकर जमीन पर दे पटका और अपनी क्रोधाग्नि को शांत करने के लिए उसकी देह को पैरों तले बार बार रौंदता रहा।

इसी प्रकार भूखा रहने पर भी यह कभी कभी भयंकर रूप धारण करता हुआ देखा गया है। बुलन्दशहर की एक घटना है। एक हाथी किसी बारात में गया हुआ था। महावत दूसरे कामों में फंसा था। हाथी को खाना नहीं मिला, वह भूखा ही बंधा रहा। ज्यों ही उसके पैर की जंजीर खोली गई उसने महावत को पकड़ लिया और पैरों के नीचे कुचलना शुरू कर दिया। अपना राशन चुराने वाले महावत को भी हाथी नहीं बख्शता। इस अपराध के दंडस्वरूप वह उसका खून कर देता है।

कई बार बिना किसी प्रकट कारण के किसी किसी हाथी में मनुष्य-विरोधी भावना पैदा होती देखी गई है। दक्षिण भारत के गुरुवायुर मंदिर के पद्मनाभन हाथी ने यद्यपि पालतू हाथियों के अति प्राचीन वंश में जन्म लिया था, परंतु बड़ा होने पर न जाने कैसे वह खूंखार हो गया था। वह अचानक ही निरपराध चरकटों पर झपट पड़ता और अपने दांतों तथा पैरों से उन्हें मार डालता। इस तरह गुरुवायुर में इसने छह चरकटों का खून कर दिया था। महंत ने तब उसे गोली से उड़ा देने का आदेश दिया। इस बीच महाराजा मैसूर ने उसे खरीद लिया।

अब तक जिस हाथी ने आराम से जिंदगी बिताई थी उसे लट्ठे ढोने के कठोर काम पर लगा दिया गया। इससे उसकी खूनी प्रकृति फिर जाग उठी। उसने अपना गुस्सा एक चरकटे पर उतारा। सफाई करते समय जब उसने पद्मनाभन को हट जाने के लिए कहा तब झपटकर उसने बेचारे लड़के को अपने उद्दंतों पर उठा लिया। इसी हालत में वह

सीधा नदी के सूने किनारे जा पहुंचा। वहां पहले तो उसने धरती पर पटककर उसकी देह में अपने उद्दंत गाड़ दिए और फिर कोई 30 मीटर तक उसे इधर-उधर पटकता रहा। महावत जब घटनास्थल पर पहुंचा तब अचरज की बात है कि हत्यारे ने आज्ञाकारी बनकर उसके आदेशों का पालन किया। उसके उद्दंतों से तब खून टपक रहा था।

कहा जाता है सन् 1583 में अकबर के दरबारी बीरबल पर चाचर नामक मस्त हाथी ने हमला किया था। बादशाह बड़ी फुर्ती से उनके और हाथी के बीच आ खड़े हुए थे जिससे उनकी जान बच सकी थी।

पश्चिम जर्मनी के निवासी फ्रिट्ज क्राम्पे अपने एक यूरोपियन साथी रॉडक्लिफ के साथ ऊटकमण्ड से लगभग 32 किलोमीटर दूर अनाइकुट्टी के क्षेत्र के जंगल में वन्य-जीवन का अध्ययन करने की गरज से निकले थे। तिरपन वर्षीय क्राम्पे कुछ समय से दक्षिण-पश्चिम अफ्रीका के विण्डहौक स्थान में निवास कर रहे थे। वहां से वे भारत, नेपाल, आदि देशों के दौरे पर निकले थे। वन्य-जीवन के अध्ययन के साथ साथ वे जीव-जंतुओं के चित्र भी बनाया करते थे। उनकी खास दिलचस्पी हाथियों और शेरों में थी।

28 जुलाई, 1966 की शाम के साढ़े छह बजे थे। नाले में से जंगली हाथियों द्वारा बांस तोड़ने की आवाज आ रही थी। उन्हें देखने के लिए ये पर्यटक नाले में उतर गए। उन्हें एक हाथी दिखाई दिया। क्राम्पे ने अपनी दूरबीन से उसकी गतिविधियों पर गौर करना शुरू किया। उनसे 15 मीटर की दूरी पर हाथी चल रहा था। अचानक वह घूमा और उसने आगंतुकों पर हमला कर दिया। ये दोनों भाग खड़े हुए। 10 मीटर पर ही हाथी ने क्राम्पे को पकड़ लिया और अपने उद्दंत से मार दिया। बांस के एक झुंड के पीछे छिपकर उसके साथी ने हमलावार को छका दिया और अपनी जान बचाई। तब हाथी लाश के ऊपर खड़ा हो गया।

रॉडक्लिफ अकेले रह गए। उसी हालत में लाश को छोड़कर वे अनाईकुट्टी में गांव वालों की सहायता पाने के लिए अपनी जीप लेकर चल दिए। वहां पहुंचने पर रात हो गई थी, इसलिए उस रात लाश नहीं उठाई जा सकी।

अगले दिन सुबह एक फौरेस्ट गार्ड, एक फौरेस्ट वाचर और पंद्रह देहातियों के साथ रॉडक्लिफ जंगल में पहुंचे। सबने देखा कि उस समय तक हाथी लाश के पास खड़ा था। तब उन्होंने हत्यारे को भगाया। लाश का निरीक्षण करने पर देखा कि क्राम्पे पीठ के बल पड़े हुए हैं। उनकी छाती में दाईं ओर एक बड़ा छिद्र था जो हत्यारे के उद्दंत से बना था।

उगांडा के नेशनल पार्कों में एक बार एक जर्मन कार से नीचे उतरा और पास से हाथी की फोटो खींचने लगा। हाथी ने उस पर वार किया तो वह कूदकर एक झाड़ी के बीच में चला गया। हाथी ने अपनी सूंड से छिपे हुए आदमी को उठा लिया और हवा में तीन बार ऊंचा उछाला। जब वह जमीन पर गिरा तब उसने अपने उद्दंतों से उसे बींधने

की कोशिश की। इस फोटोग्राफर की उम्र अभी शेष थी, इसलिए वह बचा तो लिया गया परंतु उसका एक गिट्टा टूट गया और जांघ जख्मी हो गई।

सन् 1968 की मई में मैं जंगली हाथियों का अध्ययन करने उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में गया था। उस प्रदेश में फैले हुए हाथियों के आतंक के प्रति मुझे सावधान किया गया था। इसका कारण यह था कि उस इलाके में, जहां मुझे काम करना था, जंगली हाथियों ने चार लोगों को जान से मार दिया था। इस साल मेरे यूनिट में सोलह मिलीमीटर के दो मूवी कैमरे और चार स्टिल कैमरे थे। फोटोग्राफी की दृष्टि से मेरा यूनिट अच्छे साधनों से संपन्न था। हमारे पास शक्तिशाली 'टेलीलैंस' भी थे। जीप या संचार का दूसरा साधन हमारे पास नहीं था इसलिए हमने अधिकतर काम पैदल ही किया या वन-विभाग की हथिनी की पीठ पर बैठकर। कई बार मद्दी दंतुरों ने हमारा पीछा किया।

हाथियों की आदतों का भलीभांति ज्ञान होने से ही हम अपने कीमती कैमरों की हिफाजत करते हुए सफलतापूर्वक काम कर सके। 3 अप्रैल, 1968 को शाम की छुट्टी के बाद ठेकेदार के मजदूरों ने गट्ठर सिर पर उठाए और डेरे की ओर चल दिए। गैरल के पास ही दुमरिया चौड़ में फूस की झोपड़ी में वे रहते थे। उन्हें मालूम था कि हाथियों का झुंड वहीं पर चर रहा है। झुटपुटा हो गया था। जिस रास्ते से वे गैरल जा रहे थे उसके दोनों किनारों के साथ साथ हाथी झाड़ियों को खा रहे थे। इस इलाके में मैंने मजदूरों को अक्सर शोर मचाकर हाथियों को अकारण ही भगाते देखा है। इतने बड़े जानवर को घबराकर भागते हुए देखने में लोगों को बड़ा मजा आता है। इन डोटियाल मजदूरों के हाथ में एक खाली कनस्तर था जिसे पानी से भरकर ये जंगल में ले गए थे। कनस्तर पीटते हुए हो हल्ला करते हुए डोटियाल रास्ते पर बढ़ने लगे। कुछ हाथी तो डरकर और दूर हट गए। चार-पांच हाथियों की एक टोली को कुछ न सूझा तो वह वन-पथ पर डोटियालों के आगे-आगे भागने लगी। कुछ दूर भागने के बाद टोली की एक घुई मुड़कर इन लोगों पर दौड़ी। साथ ही अपने बच्चे की रक्षा के लिए और सहायता के लिए वह चिंघाड़ने लगी। सारा झुंड डोटियालों पर टूट पड़ा। गट्ठर पटककर वे भाग खड़े हुए। दो डोटियाल हाथियों की पकड़ में आ गए। डेरा वहां से 200 मीटर दूर था। शेष छह मजदूर वहां तक पहुंच तो गए पर तब तक अंधेरा हो चुका था। वे इतने अधिक सहम गए थे कि उनमें अपने साथियों को तलाश करने के लिए जाने की हिम्मत नहीं थी। सुबह लाशों की खोज की गई। एक लाश पर हाथियों ने बहुत ठोकरें मारी थीं। वह बहुत क्षत-विक्षत और लहू से लथपथ थी। इस इलाके के कई लोगों से मैंने इस घटना का विवरण पूछा। वे बताते हैं कि डोटियाल की खाल को कई जगह से हाथी ने सूंड से पकड़कर खींच लिया था।

छापावाला में भाभर घास का कटान हो रहा था। आदमियों के साथ औरतें भी काम पर थीं। तीन औरतों ने घास के गट्ठरों को सिर पर लिया और डिपो की ओर चल दीं।

बोझ ऐसी लापरवाही से बांधे गए थे कि लटकती हुई घास उनके चेहरों के आगे आ गई थी। उन्हें काम चलाऊ रास्ता तो दीख ही रहा था, इसलिए वे आगे बढ़ती गईं। रास्ता पहाड़ी था। पानी की तलाश में एक हाथी नीचे जा रहा था। मोड़ पर उसकी औरतों से टक्कर हो गई। इन्हें हाथी दीखा ही नहीं। उसने एक औरत को धक्का मारा। वह परे जा पड़ी। पैर से दबाकर हाथी ने निश्चय कर लिया कि वह मर गई है; फिर अपने रास्ते चला गया।

फसल खाने के लिए हाथियों का झुंड खेत में चला गया था। फार्म के मालिक ने छर्रों से घायल कर के हाथियों को भगा दिया। जिस दंतुर को छर्रे लगे थे वह बदला लेने की ताक में था। जंगल में जो पहला आदमी मिला उसका पीछा करके उसने उसे पकड़ लिया और सूंड में उठाकर पटक दिया।

ये बुद्धिमान प्राणी मनुष्य और राइफल को पहचानते हैं, इसलिए इंसान सामान्यतया हमला करने का साहस नहीं करते। अधकचरे शिकारियों की गोली द्वारा घायल होकर ये भी गोली की तेजी से झपटते हैं। अफ्रीका में चार चोर-आखेटक हाथीदांत की तलाश में घूम रहे थे। उन्हें समुन्नत उद्दंतों वाले हाथियों का एक झुंड चरता नजर आया। नजदीक के हाथी पर एक शिकारी ने गोली चलायी। गरजता हुआ सात टन का वह प्रति-वैरी इन पर लपका। चारों शिकारियों ने दबादब उस पर गोलियां दागनी शुरू कर दीं। उसकी दर्दभरी चिंघाड़ सुनकर सारा झुंड हमला करने लगा। भारी टैंकों की टुकड़ी के समान उन्होंने शिकारियों पर धावा बोल दिया। बचने का कोई मार्ग नहीं था। चारों शिकारी पकड़े गए। उनकी लाशों से पता चलता था कि हाथियों ने किस बेरहमी से खून का बदला खून से लिया था। पहला हाथी जो मर गया था उसकी देह में गोली के चौंतीस निशान थे।

उड़ीसा में फूलवनी जिले के चकापाड़ा फिरका वाले घने जंगलों में एक उन्मत्त हाथी द्वारा एक पखवाड़े में बीस व्यक्तियों को मार डालने का समाचार सुनने में आया था। आदमियों के अलावा उसने कुछ पशु भी मारे थे। फलस्वरूप, फूलवनी के पुलिस सुपरिंटेंडेंट के नेतृत्व में पुलिस का एक शिकारी-दल हत्यारे को मारने के उद्देश्य से जंगल में गया। यह दल जब उसकी तलाश में आगे बढ़ रहा था तब वह अचानक सामने आ गया। दल के सभी सदस्य घबराकर इधर-उधर भाग गए। उसके हमले से सुपरिंटेंडेंट और कुछ लोग घायल हो गए। दल के नेता—पुलिस सुपरिंटेंडेंट—को तो अपनी जान बचाने के लिए सारी रात एक पेड़ पर बैठकर बितानी पड़ी। इस अभियान में उसे सख्त चोट आई और इलाज के लिए उसे अस्पताल में भरती करना पड़ा। उस उन्मत्त हत्यारे को मारने के लिए अधिकारियों ने एक हजार रुपयों के इनाम की घोषणा कर दी थी।

प्राचीन भारत में अपराधियों को हाथियों के पैरों तले रौंदवाकर मौत के घाट उतारा जाता था। इस तरह मृत्युदंड देने के उदाहरण हमें इतिहास में और पुरानी प्रस्तर-मूर्तियों

में मिल जाते हैं। कोणार्क के सूर्य मंदिर के बाएं द्वार के बाहर एक विशाल हाथी की प्रतिमा बनाई गई है जिसे मनुष्य का संहार करते हुए दिखाया गया है। मंदिर के निमार्ता उड़ीसा के प्रतापी राजा नरसिंहदेव (1238-1264 ई.) ने अपनी प्रजा को सचेत करने के लिए यह दृश्य बनवाया था। राजा ने आज्ञा दी थी कि यदि कोई पापी मन से या कलुषित हृदय से सूर्य भगवान की अर्चना करने मंदिर में प्रविष्ट हो तो द्वारपालक हाथी के द्वारा उसकी यह गति की जाए। कोणार्क में ही युद्ध के हाथी की एक सजीव मूर्ति है। इसने शत्रु के एक योद्धा को सूंड में उठा रखा है और उसे फेंकने ही वाला है।

भगवान बुद्ध के चचेरे भाई देवदत्त उनसे जला करते थे। ईर्ष्यावश वे उन्हें मरवा डालना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने अनेक उपाय किए परंतु सभी निष्फल गए। तब उन्हें मारने के लिए एक मतवाला हाथी छोड़ा गया। देवदत्त की आशा के विपरीत, भगवान बुद्ध के समीप पहुंचकर वह सहमकर खड़ा हो गया और उनके चरणों में नतमस्तक हो गया। अजंता के भित्ति-चित्रों में एक कलाकार ने बड़े मार्मिक ढंग से इस घटना को अंकित किया है। श्रीकृष्ण की लीलाओं में वर्णन किया जाता है कि उन्हें मारने के लिए भी एक हाथी भेजा गया था।

दिल्ली के अफगान शासक सिकंदर लोदी ने हुक्म दिया था कि संत कबीर को हाथियों के पैरों तले कुचल दिया जाए। राम के उपासक कबीर जी के पास जब जंगली हाथी पहुंचे तब वे सीधी-सादी भेड़ों के समान नतमस्तक हो गए। संत के सामने वे घुटने टेककर बैठ गए।

हाथी यद्यपि महान बलशाली प्राणी है जो मनुष्य को आसानी से मार डालता है, परंतु उसके दर्प को भी चूर करने वाला वनराज सिंह है। उसके आक्रमण के सामने वह भी दयनीय स्थिति में चुपचाप धरती पर सिमटकर बैठ जाता है। कोणार्क के मंदिर में यह दृश्य विशाल पत्थरों को घड़कर बड़ी सजीवता से मूर्तिमान किया गया है। हाथी की सूंड में एक आदमी मरा पड़ा है। संभवतया यह उसका महावत है जिसे उसने अपनी उन्मत्त अवस्था में मार दिया है। हाथी की साज-सज्जा से पता चलता है कि वह किसी समारोह के लिए सजाया गया है।

बच्चों से प्यार

बड़े जानवरों में हाथी में सबसे अधिक बुद्धि और पारिवारिक भावना देखी जाती है। यह लगभग मनुष्य जैसा ही आचरण करता है। अनेक बार तो उसका व्यवहार इंसान से भी ज्यादा अच्छा होता है, खासकर बच्चों के मामले में।

अफ्रीका में एक मौके पर एक हथिनी को अपने एक दो दिन के मरे हुए बच्चे को

ले जाते हुए देखा गया था। वायलिन के समान उसने इसे अपने जबड़े और कंधे पर रखा हुआ था। जब कभी उसे खाना या पीना होता था, वह रुक जाती थी और उसे नीचे रख देती थी। एक उद्दंत और सूंड से वह उसे फिर उठा लेती थी। सारा दिन उसने इसे इसी तरह ऊपर उठाए रखा।

हाथी के शिशु प्रेम का एक अन्य उदाहरण लान्स कोर्पोरल बाटालेमायो ने रिकार्ड किया है। क्वीन एलिजाबेथ पार्क में गश्त करते हुए उन्होंने एक हाथी की असाधारण चीख सुनी। कुल 200 मीटर की दूरी पर उन्होंने एक हाथी को देखा जिससे छह या सात मीटर की दूरी पर एक भूखा सिंह और सिंहनी लेटे थे और जोर से हांफ रहे थे। उनके मुंह से लार टपक रही थी। हाथी भयावह आक्रमण कर रहा था, इसलिए वे अधिक नजदीक नहीं गए। डेढ़ घंटे वे वहीं खड़े रहे। सारे समय हाथी दुश्मनों को भगाने की कोशिश में कभी आगे बढ़ता और कभी पीछे हटता।

अगले दिन वे फिर उधर ही गश्त पर निकले। अब तक हाथी बहुत थक चुका था और सिंह उसके बिलकुल पास पहुंच गए थे, मानो वे एक ही परिवार के सदस्य हों। नजदीक से देखने पर पता चला कि हथिनी ने अपने मरे हुए बच्चे को पेड़ की शाखा के नीचे छिपा रखा है। तीन दिन बाद सिंह तो वहां से चले गए पर हथिनी छह दिन के बाद गई। मरे हुए बच्चे को उसी तरह छोड़ गई।

हथिनी को उसके बच्चे से अलग करने का दृश्य हृदय-विदारक होता है। नन्हा शिशु बार बार चीख-पुकार करता है। उसका विरोध और क्रंदन बड़ा कारुणिक लगता है। मां की जोरदार चिंघाड़ों में क्रोध और वेदना के साथ साथ उसकी कारुणिक पुकारों में सहानुभूति पाने की आशा भी होती है। मां को मालूम भी हो कि उसका दुलारा पास ही में कहीं बंधा है, परंतु यदि आंखों से ओझल है तो वह चीख-पुकार करने लगती है।

पालतू हाथी अपने पालकों के प्रति अधिकतर स्नेह और सहृदयता का बर्ताव करते हैं। छोटे बच्चों को तो उनसे बेहद लगाव हो जाता है। भारत-भूटान की सीमा के जंगलों से पकड़े गए एक बरस की उम्र के एक हस्ति-शावक को अमेरिका के सेंट लुई चिड़ियाघर भेजना था। बच्चे का नाम ज्योति था। कलकत्ता के दमदम हवाई अड्डे पर उसे एयर-इंडिया हवाई जहाज पर चढ़ाया जा रहा था। उसे विदाई देने वालों में छह बरस का एक बच्चा भी था जो ज्योति के मालिक का बेटा था। दोनों बच्चों में बेहद दोस्ती थी और वे अपना अधिकांश समय एक साथ गुजारा करते थे।

जब ज्योति के पिंजरे को धकेलकर हवाई जहाज पर ले जाया जा रहा था तब वह अपनी सूंड निकालकर बार बार अपने साथी का हाथ पकड़ लेता और उसे अपनी ओर खींचने की कोशिश करता। पिंजरे के दरवाजे के पास खड़े हस्ति शावक की आंखें भर

आई, उधर लड़के की आंखों से टपटप आंसू गिरने लगे। विदाई की घड़ी आ गई। दरवाजा बंद कर दिया गया। क्रोध और विदाई का दुख प्रकट करने के लिए ज्योति जोर से चिंघाड़ उठा। पर कुछ ही क्षणों में एयर-इंडिया का हवाई जहाज दूर निकल गया।

कमला सर्कस की एक हथिनी की घटना तो इससे भी अधिक हृदय-स्पर्शी है। इसका नाम लक्ष्मी था। जब दर्शकों की असाधारण भीड़ दरवाजे पर जमा हो जाती तब सर्कस का मालिक दामोदरन जोर जोर से चिल्लाकर उन्हें हटाने की चेष्टा करता। मालिक की आवाज सुनकर लक्ष्मी झट वहां आ जाती और अपनी सूंड से हल्का-सा 'लाठी चार्ज' करके भीड़ को तितर-बितर कर देती। कई मौकों पर लक्ष्मी ने बाहर खड़े होकर बेकाबू भीड़ को सफलता से नियंत्रित किया था।

महत्वपूर्ण व्यक्ति जब सर्कस देखने आते तब लक्ष्मी उनके गले में पुष्पहार डालकर स्वागत करती थी। इस काम को वह बहुत पसंद करती थी। इसके अलावा, सर्कस के तंबू के अंदर होनेवाली दैनिक पूजा में वह सच्चे भक्त के समान नियमित रूप से शामिल हुआ करती थी। ज्योंही पूजा की घंटी बजनी शुरू होती, वह झट वहां आ खड़ी होती। पूजा का प्रसाद ग्रहण करने के बाद वह चली जाती।

इस अत्यंत बुद्धिमती हथिनी ने सर्कस के तीस हाथियों में से मणि नामक एक हाथी को अपना प्रेमी वरण कर लिया। मणि भी उसे बेहद प्यार करता था। जब कभी वह किसी दूसरे हाथी को लक्ष्मी के पास खड़ा पाता तब बर्दाश्त नहीं कर पाता और विरोध स्वरूप बड़े भयंकर रूप से चिल्ला उठता।

महावतों को अभी इनकी प्रेमलीला का पता नहीं लगा था। वे उन्हें अलग अलग खूंटों पर बांधने की कोशिश करते तब लक्ष्मी एक तीखी चीख में अपनी नाराजगी जताती। आखिर, सर्कस के लोग भी इनके आपसी प्यार को समझ गए और उन्हें सदा एक साथ रखने लगे।

साल गुजरते चले गए। एक दिन, अचानक मणि के पेट में दर्द उठा। बढ़िया से बढ़िया इलाज किया गया, परंतु कोई लाभ न हुआ। कुछ दिनों तक वह असह्य पीड़ा से कराहता रहा और अंत में इस घातक रोग ने उसके प्राण ले लिए। लक्ष्मी उसकी शिथिल, निर्जीव देह को खड़ी देखती रही। उसकी छोटी आंखों से बहती हुई आंसुओं की धारा रुकती ही नहीं थी।

सर्कस के हर सदस्य ने मणि को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की और तब उसका अंतिम संस्कार विधिवत कर दिया गया। लक्ष्मी अपने साथी के वियोग को नहीं सह सकी। वह बार बार उसके खूंटे के स्थान पर चक्कर काटती रही।

पूजा की घंटी बजनी शुरू हुई। सभी सदस्य धीरे धीरे जमा हो गए। परंतु लक्ष्मी

नहीं आई। यह पहला मौका था जब उसने घंटी की पुकार को अनसुना कर दिया था—वह पूजा में शामिल नहीं हुई, न ही उसने पूजा का प्रसाद स्वीकार किया। उसने कुछ भी तो नहीं खाया। मणि के मरने के पंद्रह दिन बाद वह भी मर गई। इस तरह उसने लैला-मजनूं और रोमियो-जूलियट की अमर प्रेम कहानियों की शृंखला में एक नयी कड़ी जोड़ दी।

एक उपयोगी पशु

जहां एक ओर हाथी फसलों को नष्ट करता है और अन्य प्रकार से मनुष्य का नुकसान करता है, वहां दूसरी ओर यह मनुष्य की सेवा भी करता है। दक्षिण में धार्मिक जुलूसों और देवताओं की सवारी के जुलूसों का यह अनिवार्य अंग है। शेर के शिकार में भी यह काम आता है।

ब्रिटिश शासन के आरंभिक काल में सड़कें बनाने और जंगल साफ करने के लिए हाथियों की परम आवश्यकता थी। वनों, पहाड़ों और घाटियों में, जहां संचार साधन नहीं होते, ये बोझा ढोने का काम देते हैं। असम के चाय बागान वाले संचार के लिए हाथी पाला करते थे। जिन नदियों पर पुल नहीं हैं उन्हें पार करने के लिए भी उनका इस्तेमाल किया जाता था। चाय बागानों में कुछ बंगलों के आगे ऊंचा पोर्च बना होता था जिससे बरसात के दिनों में बागानों के मालिक आराम से हाथी पर सवार हो सकें। असम और उत्तर बंगाल जैसे क्षेत्रों में प्रत्येक जिला अधिकारी के पास दौरे के लिए तथा सामान ले जाने के लिए हाथियों का काफिला रहता था।

ये वनों में लट्ठों को लुढ़काने, घसीटने या उठाकर ले जाने के कामों में लगाए जाते हैं। इस प्रयोजन के लिए राज्यों के वन-विभाग पालतू और प्रशिक्षित हाथियों को रखते हैं। एक जवान हाथी 450-540 किलोग्राम का वजन ले जाता है। लकड़ी के पैंतीस से आठ घन फुट नाप के एक बोझ को घसीट सकता है।

लट्ठों को उठाने और लादने का काम हाथी कुशलता, बुद्धिमता और सूझबूझ से करते हैं। सुरेश वैद ने असम के जंगलों में काम करने वाले छह हाथियों का रोचक वृतांत दिया है। वे लिखते हैं—एक डीजल इंजिन ने जब चार वैगनों को वहां लाकर खड़ा कर दिया तब हाथियों का काम शुरू हो गया। तुरंत ही एक हाथी दूसरी तरफ जाकर सब से आगे वाले वैगन के पीछे खड़ा हो गया। महावत के पैर के अंगूठे का संकेत पाकर उसने वैगन के साथ लटकते हुए लोहे के पिन को अपनी सूंड से पकड़कर वैगन के दूसरे सूराख में डाल दिया। इसके बाद दूसरे दो हाथी, जो शहतीरों के ढेर के पास खड़े थे, आगे बढ़े और उन्होंने ढेर में से एक शहतीर को अपनी सूंडों में उठा लिया तथा उसे करीब 6 मीटर दूर तक, सबसे आगे वाले वैगन के पास पहुंचा दिया। यहां बाईं तरफ वाला हाथी तो अब

भी उस शहतीर के बाएं भाग को उसी तरह आगे धकेलता रहा, परंतु दाईं तरफ वाला उसके दाएं भाग को पैर से इस तरह दबाकर खड़ा हो गया कि वह इंच भर भी आगे न बढ़ सके। इस प्रकार उन्होंने शहतीर को वैगन के समानांतर कर लिया।

इतना कर चुकने के बाद, दोनों हाथियों ने उस वैगन में से एक एक बल्ली उठा ली और उन्हें वैगन के सहारे तिरछा खड़ा कर दिया। यहां तक तो काम सरल था। अगले काम में पूरी चतुराई की जरूरत थी, क्योंकि अब उन्हें इस भारी शहतीर को इन दोनों बल्लियों के सहारे वैगन में चढ़ाना था। शहतीर के दोनों सिरों के नीचे सूंड डालकर वे उसे बड़ी सावधानी से उन ढलाऊ बल्लियों पर चढ़ाने लगे। इस कठिन काम में उन्हें कितना बल और सावधानी बरतनी पड़ रही थी यह उनके कसे हुए जबड़ों से स्पष्ट पता चलता था।

शहतीर धीरे धीरे ऊपर चढ़ता गया और अंत में दांतों और सूंड के सम्मिलित झटके के साथ उन्होंने उसे वैगन में पटक दिया। शहतीर के वैगन में निर्विघ्न पहुंच जाने पर हाथियों ने संतोष प्रकट करने के लिए अपने कान हिलाए। लेकिन अभी आखिरी काम करना बाकी था। वैगन के और नजदीक जाकर उन्होंने उसके भीतर पड़े हुए शहतीर को लुढ़काकर लोहे के दोनों पिनों के सहारे जमा कर दिया। इस अंतिम काम में पीछे खड़े हुए हाथी को ब्रेक का काम करना पड़ा। अपनी सूंड का गद्दा बनाकर उसने शहतीर के साथ इस तरह जमा दिया कि शहतीर के तेज झटके खाकर भी वे दोनों पिन टूटने से बच गए। यह कार्य अत्यंत आवश्यक था, क्योंकि शहतीर का भार लगभग 4320 किलोग्राम रहा होगा।

इस सारे कार्य में दोनों हाथियों को पूर्णतया एक-दूसरे पर भरोसा करना था। शहतीर को बल्लियों पर चढ़ाते समय उसके दोनों सिरे बिलकुल समानांतर रखने थे। कोई सिरा एक इंच भी नीचे झुका रह जाता तो वह नीचे गिरकर हाथी के पैरों को भी कुचल देता। यदि कभी एक हाथी से शहतीर का संतुलन बिगड़ जाता तो दूसरा हाथी अपने सिरे को उतना ही नीचे झुका देता। केवल असाधारण बुद्धि वाले हाथी ही यह समझ सकते हैं कि ऐसा कब और कैसे करना चाहिए।

इसके बाद जब दूसरा शहतीर भी इसी तरह वैगन में डाल दिया गया तो हाथियों ने उन दोनों बल्लियों को वैगन के साथ इस ढंग से खड़ा किया कि उनके सहारे चढ़ता हुआ तीसरा शहतीर उन दोनों शहतीरों के ठीक बीच में जा गिरा। तब, उन्होंने वैगन के दोनों कोनों में लोहे के दो पिन भी लगा दिए और काम समाप्त हो गया। हाथियों का यह सारा कार्य आश्चर्यजनक तो था ही, नए दर्शकों के लिए रोमांचकारी भी।

लदान के मामले में निस्संकोच मानना पड़ेगा कि मशीन हाथी की बराबरी नहीं कर सकती। इस कार्य में जिस विचार-शक्ति की जरूरत होती है वह अचेतन मशीनों के पास नहीं है। फिर, इसमें समय भी कुछ अधिक नहीं लगा। शहतीरों को वैगन तक पहुंचाने

में कुल मिलाकर 45 मिनट और उन्हें वैगन में लादने में तीन घंटे लगे। इस प्रकार कुल 225 मिनट में उन्होंने लगभग 52,000 किलोग्राम शहतीरों का लदान सफलतापूर्वक कर दिया।

इन हाथियों पर बैठे हुए महावतों को भी साधारण महावतों की अपेक्षा अधिक होशियार मानना पड़ेगा। हाथियों पर उनका नियंत्रण अद्भुत था। अंकुश का प्रयोग तो उन्हें करना ही नहीं पड़ा। आदेश सूचक शब्दों को भी बहुत कम बोलना पड़ा। बहुधा तो वे केवल अपने पैर के अंगूठे से ही सब काम ले लेते थे। इस सफलता में महावत को यदि 60 प्रतिशत श्रेय दिया जा सकता है तो हाथी को 40 प्रतिशत। इनके मालिक इन्हें संसार के सर्वोत्तम हाथी मानते थे।

इनके संपूर्ण परिश्रम का अधिकतर बोझ उद्दंतों के सिरों पर ही पड़ता है। इसलिए, वे प्रतिवर्ष 15 सेंटीमीटर घिस जाते हैं। इस हानि को रोकने के उद्देश्य से इन्हें हर साल छह महीने की छुट्टी दी जाती है। इस अवधि में घिसे हुए सिरे बहुत हद तक पूरे हो जाते हैं। तो भी सत्य यह है कि वे जितने घिसते हैं उतने पूर्ण नहीं हो पाते और पंद्रह वर्ष में ही इतने घिस जाते हैं कि केवल बटन सरीखे दिखाई पड़ते हैं। ऐसे हाथियों को लदान के काम से हटा लिया जाता है और केवल घसीटने का काम ही उनके जिम्मे रह जाता है।

जंगल में बोझ उठाने, लट्ठों को लादने और घसीटने के लिए हथिनियों की अपेक्षा हाथी अधिक उपयोगी सिद्ध होते हैं, क्योंकि इस प्रकार के कार्यों के लिए उनमें आवश्यक बल होता है।

लगातार तीन घंटों से अधिक उनको काम पर नहीं लगाया जाता। एक स्वस्थ हाथी सुबह व शाम की शीतल बेला में छह-सात घंटे काम कर सकता है। बोझ उठाए हुए हाथी को दिन में 16 किलोमीटर से अधिक नहीं चलाना चाहिए और हर हालत में उसे सूरज की गर्मी तथा लू से बचाना चाहिए।

पुलों के निर्माण में हाथी बड़े बड़े शहतीरों और लोहे के ढांचों को उठाने में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। किसी नदी पर पुल न बना हो और उसके पार सामान पहुंचाना हो तो शहतीरों को बांधकर बनाए बेड़े पर सामान रख दिया जाता है। हाथी इसे पानी में खींचते या धकेलते हुए नदी के पार पहुंचा देते हैं। सड़क कूटने के रोलरों को हाथी बखूबी खींच लेता है।

पेट्रोल और डीजल से चलने वाली भारी लारियां अब घने जंगलों के अंदर पहुंचकर लट्ठों का ढुलान करने लगी हैं। इससे हाथियों की कद्र कम होती जा रही है। बर्मा के उदाहरण से यह स्पष्ट है, सागवान के जंगलों में काम करने वाले हाथियों की संख्या वहां 1938 में 6,000 थी जो 1964 में 1,500 ही रह गई।

दिसंबर, 1968 में प्रकाशित एक समाचार से पता चलता है कि थाईलैंड में अब भी हाथी पुलिस की सेवा में नियुक्त हैं। उत्तर-पूर्व थाईलैंड के सुरीन नामक स्थान में हाथियों के वार्षिक समारोह को देखने के लिए 20,000 से अधिक लोगों की भीड़ जमा हो गई थी। उसे नियंत्रित करने के लिए मिलिटरी पुलिस हाथियों पर सवार थी।

हाथियों की देखभाल में बड़ी सावधानी की जरूरत होती है। उन्हें मल-मलकर नहलाया जाता है और अच्छा आहार दिया जाता है। देखभाल के लिए प्रत्येक हाथी पर दो आदमी रहते हैं। बीस साल से कम आयु के हाथी पर एक आदमी रहता है। उनके साथ जितना अच्छा व्यवहार किया जाता है वे उतनी ही अधिक मनुष्य की सेवा करते हैं।

घास-पात खाने वाले पालतू पशुओं और हाथियों के स्वभाव में एक बड़ा अंतर यह है कि पालतू बन जाने पर भी हाथी के मन में जंगल की ओर लौट जाने की इच्छा जड़ से नहीं मिट पाती। यह इच्छा गजशाला में पैदा हुए हाथियों के मन में भी किसी समय जागृत हो सकती है। इसलिए हाथियों को कोमल, सभ्य और सहानुभूति पूर्ण बर्ताव द्वारा स्नेहपूर्वक वश में करना आवश्यक होता है। काम पर जाने से पहले और काम से लौटने के बाद उनके शरीर की जांच करके देखा जाता है कि कहीं गुमड़ियां (galls) तो नहीं बनी हुई हैं। सूंड और पैर कहीं से कटकर जख्मी तो नहीं हो गए या उन पर छोटी-मोटी खरोंचें तो नहीं पड़ गईं। काठियां ठीक तरह न बैठती हों तो पीठ पर जख्म बन जाते हैं।

काम के अनुसार हाथियों पर दो किस्म की काठियां लगाई जाती हैं–(1) बोझ खींचने में सहायक, और (2) बोझ लादने में उपयोगी। बोझ घसीटने के लिए सामान्य संनाह (harness) में बोरियों का बना एक नमदा होता है जो पीठ पर रखकर बांध दिया जाता है। इसके ऊपर दो लट्ठे टिकाए जाते हैं जिनके अंदर लोहे की जंजीरों को टिकाने के लिए नालीदार गढ़े बने होते हैं। चमड़े का एक पट्टा छाती पर आता है, जो जंजीरों को अपनी जगह पर टिकाए रखता है। काठी के जो भाग हाथी की खाल के संपर्क में आते हैं उन्हें सूअर की चरबी से पोत दिया जाता है और बालु-कणों से मुक्त रखा जाता है।

आमतौर पर अगली टांगों में लोहे की या बेंत की बेड़ियां डालकर हाथियों को बांधा जाता है। बेंत की बेड़ियां सामान्यतया प्रशिक्षण पाते हुए बच्चों के पैरों में बांधते हैं। एक टांग में लंबी जंजीर बांधकर हाथियों को किसी पेड़ के साथ बांधना भी आम रिवाज है।

हाथियों के निवास-स्थान को गजशाला कहते हैं। गजशालाओं के फर्श ईंटों के बने होते हैं और भूमि की सतह से कुछ उठे रहते हैं जिससे पेशाब और पानी नालियों में बह जाए। गजशालाओं की छत फूस के छप्पर की या खपरैल की होती है। गजशालाओं में सूर्य की सीधी किरणों से हाथियों को बचाया जाता है।

हाथी की दिनचर्या में स्नान महत्वपूर्ण है। जल-क्रीड़ा में हाथी को बहुत आनंद आता है। जब वह पानी में स्नान के लिए उतर जाता है तब उसकी सूंड और रीढ़ के अलावा कोई अंग नहीं दिखाई देता। पहले कुछ देर वह एक करवट लेटता है और तब दूसरी करवट। इस तरह लोट लगा चुकने पर महावत उसके सिर, सूंड और रीढ़ पर क्रमशः पानी डाल-डालकर उन्हें मलता जाता है। उसके बाद टांगों की बारी आती है। पीठ, पेट और छाती को भी इसी तरह पानी के साथ मलकर साफ किया जाता है। इस सफाई में पैर के नाखूनों और उनके बीच की तहों को भी महावत सावधानी से साफ कर देता है।

इतने से हाथी तरोताजा और प्रसन्न हो जाता है। फिर वह गहरे पानी में तैरने या दूसरे हाथियों के साथ जल-क्रीड़ा में मगन हो जाता है। पालतू हाथियों को स्नान का यह आनंद दिन में दो बार मिलता है। एक तो सुबह छह बजे, जब रात भर चरने के बाद उन्हें जंगल से वापस लाया जाता है और फिर तीसरे पहर जब वे काम करके लौटते हैं—कोई पांच बजे।

जंगली हाथी भी घंटों पानी में स्नान करते हैं। पानी थोड़ा है तो उसमें खड़े खड़े ही घंटों गुजार देते हैं। सूंड में पानी भरकर बदन के ऊपर तथा दाएं और बाएं फेंकते रहते हैं। मैंने देखा है कि चाहे कितना ही स्वच्छ पानी नदी में बह रहा हो यह उसके तल में से कीचड़ या रेत को सूंड में लेकर अपने ऊपर फेंकता है। इसका कारण यह है कि बदन पर पड़ी हुई मिट्टी में देर तक तक नमी बनी रहती है जो उसे ठंडक देती रहती है। एक ही जगह वह स्थिर होकर नहीं खड़ा रह सकता। बार बार अपनी स्थिति को बदलता रहता है।

कुछ हाथी पानी में लेट जाते हैं और घंटों पड़े रहते हैं। सांस लेने के लिए सूंड का सिरा बाहर रखते हैं।

बच्चे पानी में खूब खुश होते हैं। नन्हें बच्चों को नहलाने के लिए उनकी माताएं उन्हें सूंड में उठाकर पानी में दाएं-बाएं फेरती हैं जैसे कि कपड़ों को धो रही हों। मई के महीने में एक दिन मैंने देखा कि पानी के दो जोहड़ों की ओर जंगली हाथी बढ़ रहे थे। कुंड पर पहुंचकर छोटे बच्चों ने जरा-सा पानी पिया। फिर यह टोली दूसरे कुंड पर पहुंची। वहां दो बच्चे तो पानी में लोट गये, पानी में खूब डुबकियां लगाने लगे। साढ़े दस बजे की धूप तेज हो गई थी। पांच मिनट स्नान करके ये चरने निकल गए। बड़ों ने स्नान नहीं किया। उनके पेट तक पानी था। पानी में घुसकर कुंड के दूसरे पार जंगल में चले गए। दूसरे कुंड में बारह हाथियों का एक झुंड गाढ़ा कीचड़ अपनी पीठ पर फेंकने में लगा था। कोई दो घंटे तक हाथी यहां पंक स्नान करते रहे। हाथी को पानी में खेलना उतना नहीं भाता जितना कीचड़ में।

डेढ़ बजे फिर मैंने इस झुंड को एक अन्य जोहड़ पर देखा। सारा झुंड कुंड में घुस गया। एक बच्चा सिर को और कभी सूंड को पानी में पटक पटककर नहा रहा था। इससे सारा कुंड मथा गया। पानी गंदला हो गया और कुंड से बाहर बहने लगा।

दो दिन से हम जिस मद्दी हाथी पर गौर कर रहे थे वह आज शाम चार बजे ही शालवन से निकल आया था। उसका मद बहकर नीचे तक आ गया था। झुंड के अन्य हाथियों से यह असाधारण बर्ताव करता था। सभी हाथी अभी जंगल के अंदर थे। कुछ ही मिनटों में यह नदी की ओर चल दिया और सीधा पानी में जा घुसा। सूंड में पानी भरकर वह अपने दानों, मुख और बाज[illegible]ने लगा। आधा घंटा स्नान करने के बाद यह ठंडा और तरोताजा हो गया। उसका मद धुल गया था। शरीर चमकीला काला बन गया था। उसने फिर गरम रेत सूंड में भरकर फेंकी। फिर यकायक झुका, दोनों उद्दंतों को तट की बालू में गाड़ दिया, मस्तक से जोर लगाया जिससे मद की ग्रंथियों पर दबाव पड़ा और मद बहना शुरू हो गया।

हाथी की एशियाई और अफ्रीकी दोनों जातियां कुशल तैराक हैं। 1.6 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से पानी को काट लेती हैं। ढाका और बैरकपुर के बीच में गंगा और ब्रह्मपुत्र की संयुक्त धारा में हाथियों को लगातार छह घंटे तक तैरते देखा गया है। यहां पानी इतना गहरा है कि नदी के तल में उनके पैर भी नहीं छू पाते। पिछली दो टांगें बंधी होने पर भी हाथी एक बार 300 मीटर चौड़ी नदी को तैरकर पार कर गया था।

तैरते समय इनका शरीर पानी के अंदर डूबा रहता है। सूंड बाहर सीधी तनकर खड़ी होती है जिससे वह सांस लेता रहता है। गहरे पानी में तैरते हुए हाथी की सूंड के सिरे को देखकर अफ्रीका के आदिवासी अपनी डोंगियों को उधर दौड़ाते हैं। पास पहुंचकर वे भालों से सूंड पर हमला करते हैं। इस तरह पानी के अंदर ही हाथी का शिकार कर लेते हैं।

क्योंकि हाथी को तैरने और पानी में लोट लगाने में बड़ा मजा आता है इसलिए जब उससे नदी पार करवाई जा रही हो तब सवारियों को बड़ा खतरा रहता है कि कहीं वह पानी में लोट न लगाने लगे। महावत तब बार बार अंकुश मारकर उसके इरादों को बदलता है।

6

पकड़ना और सधाना

हाथियों को पकड़ना

हाथियों को पकड़ने और उन्हें सिखाने का पहला उल्लेख ईस्वी पूर्व पांचवीं शती में उपलब्ध होता है। मेगस्थनीज (200 ईस्वी पूर्व), स्टैवो (130 ईस्वी पश्चात) और इण्डिकोप्लेन्स्टेस (600 ईस्वी पश्चात)–इन तीनों ग्रीक लेखकों ने इस विषय पर लिखा है। हैदरअली ने सत्रहवीं शताब्दी के आरंभ में इस कला को प्रोत्साहन दिया था। अपनी सेना को सुदृढ़ बनाने के



उद्देश्य से उसने हाथियों का विशाल समूह जुटाना चाहा था। मैसूर से 24 किलोमीटर दूर काकनकोट के वनों में उसने पहली बार हाथी पकड़ने का अभियान किया था। बीसवीं शती के आरंभ तक हाथियों को पकड़ना लाभदायक व्यवसाय रहा। उसके बाद इसका ह्रास होने लगा।

भारत के बहुत से वनों में जंगली हाथियों को पकड़ने का काम होता था। इस अभियान का मौसम बरसात के बाद शुरू होता था। पकड़ने की मुख्य रूप से निम्नलिखित विधियां प्रचलित थीं :

1. गढ़े में गिराना
2. खेदा–नदी का खेदा
   भूमि का खेदा
3. मेला शिकार
4. नमक के स्थानों या पानी के जोहड़ों के चारों ओर गाड़े गए खंभों के अंदर पकड़ना।

अब प्रत्येक का संक्षिप्त विवरण यहां देते हैं।

गढ़ों में पकड़ना

दूसरे तरीकों की तुलना में यह कम खर्चीला था। इसलिए बहुत-सी जगहों पर इसी तरीके से हाथी पकड़े जाते थे। हाथियों के आने-जाने के रास्ते जहां मिलते हैं, उसके चारों ओर गढ़े खोदे जाते थे। प्रत्येक मार्ग पर गढ़ों को इस तरह खोदा जाता था कि कई त्रिभुजों का एक समूह बन जाता था। गढ़ों की गहराई 4-5 मीटर रखी जाती थी। भूमि की सतह पर ये 4 मीटर लंबे और 4 मीटर चौड़े होते हैं तथा तल में 3 मीटर लंबे और 3 मीटर चौड़े। इससे गढ़े की दीवारें ढलवां बन जाती थीं। इससे, अंदर गिरते समय हाथियों की हड्डियां टूटने का खतरा कम हो जाता था। चोट से बचाने के लिए गढ़ों के तल से 2 मीटर ऊंचाई तक झाड़ियों की टहनियां और घास भर दी जाती थी। पूरी सावधानी बरतने के बावजूद भी गढ़ों में गिरने से अनेक हाथी क्षत-विक्षत हो जाते थे और कई बार उनके अंगभंग हो जाते थे।

इस नाप के गढ़ों में हाथी पूरा समा तो जाता था परंतु इनमें गिर जाने पर वह हिल-डुल नहीं सकता था और न ही गढ़ों से बाहर निकल सकता था।

बांस की खपचियों से इन्हें छत दिया जाता था। फिर पत्तियों से ढककर मिट्टी की हल्की तह छिड़क दी जाती थी। इसके ऊपर घास, बांस के पत्ते या आसपास जो भी ऐसी चीज मिले उसे इस तरह बिछा देते थे कि वह जगह साथ की जगह के समान ही नजर आती थी। यह सब हाथियों को धोखा देने के उद्देश्य से किया जाता था।

हर रोज कुछ आदमी गढ़ों का निरीक्षण करने जाते थे। उस क्षेत्र में उन्हें बार बार देखते रहने से हाथियों के मन में उनके प्रति संदेह नहीं रहता। गढ़े में गिरते ही हाथी चिंघाड़ना शुरू करता था। यह चिंघाड़ डेढ़ किलोमीटर दूर से या अधिक दूर से भी सुनाई देती थी। तुरंत कुशल महावत घटनास्थल पर पहुंच जाते थे। वे हाथी के गले और पिछले एक पैर में रस्सी बांध देते थे। अब मोटी मोटी लकड़ियों से गढ़े को पाटना शुरू करते थे। जिससे उन पर चढ़कर हाथी गढ़े से बाहर निकल आए।

कुमकियों (सधाए हुए हाथियों) के घेरे में इन्हें सबसे नजदीक के क्राल में ले जाया जाता है। मजबूत लकड़ी की दीवार से बनाए 6 मीटर लंबे और 6 मीटर चौड़े घेरे को क्राल कहते हैं। इसके नीचे बढ़िया फर्श होता है और इसमें पेशाब तथा पानी की निकासी की ठीक व्यवस्था होती है।

यहां हाथी को खिलाया जाता है और भरपूर पानी दिया जाता है। महावत के प्रति हाथी का विश्वास बढ़ता जाता है। इसके विपरीत, पहले जमाने में नए पकड़े गए हाथी को भोजन न देकर कमजोर किया जाता था जिससे वह हताश अनुभव करने लगता था और लाचारी में पूर्णतया आत्मसमर्पण कर देता था।

कम उम्र (चार-पांच साल) के बच्चे लगभग दस दिन में इतना हिल जाते हैं कि महावत के हाथ से भोजन स्वीकार करने लगते हैं। इन पर इतना भरोसा हो जाता है कि एक या दो पालतू हाथियों के संरक्षण के अंदर इन्हें बाहर घुमाने और चराने के लिए ले जाया जा सकता है। अठारह से बीस साल के हाथी कहीं एक महीने के बाद घुटने टेकते हैं। प्रौढ़ हाथियों को कम से कम अठारह महीने लग जाते हैं और तब वे कुछ उपयोगी कार्य पर लगाए जा सकते हैं।

हाथी की सूंड बड़ी संवेदनशील होती है। यदि वह सूंड पर महावत से थपकी लेना स्वीकार कर लेता है तो यह इस बात का संकेत होता है कि उसका जंगलीपन समाप्त हो गया है।

तमिलनाडु में पचास साल से ऊपर के हाथी! बिलकुल नहीं पकड़े जाते। यदि वे फंस भी जाएं तो उन्हें तुरंत छोड़ दिया जाता है। छोटे बच्चों को भी सामान्यतया पकड़ना पसंद नहीं किया जाता। इसका एकमात्र कारण आर्थिक है। जब तक वे पन्द्रह साल के नहीं हो जाते उनसे बोझ उठाने का या कोई दूसरा कमाने का काम तो लिया नहीं जा सकता और इस बीच में उन्हें खिलाने-पिलाने का भारी बोझ उठाना पड़ता है। इसलिए यदि बच्चे पकड़ में आ जाएं तो उन्हें छोड़ दिया जाता है। अठारह और पच्चीस वर्ष के बीच की आयु के हाथी पकड़े जाने के लिए सर्वोत्तम सिद्ध होते हैं।

रामायण कालीन भारत में भी गढ़ों में हाथी पकड़ने का उल्लेख मिलता है। वाल्मीकि

ने लिखा है कि रात के समय बहुत से लोग मशालें लेकर वन में हाथियों का पीछा करते हैं और उन्हें तिनकों से आच्छादित गढ़ों में खदेड़ देते हैं।

खेदा

हाथी को पकड़ने का सबसे अधिक जाना-पहचाना खेदा (stockade) है जिसमें हाथियों के झुंडों को खदेड़कर पकड़ा जाता है। खेदा एक प्रकार का आखेट है और संभवतया इससे बड़ा शिकार दुनिया में दूसरा नहीं होगा। एक बारी के खेदे में लाखों रुपयों का खर्च आ जाता है और अब तक कभी भी एक खेदे में 100 हाथी नहीं पकड़े गए।

उड़ीसा के राजा नरसिंहदेव तेरहवीं शताब्दी में खेदा पद्धति से जंगली हाथियों को पकड़वाया करते थे। कोर्णाक मंदिर की दीवारों पर खेदे की विविध क्रियाएं मूर्तिमान की गई हैं। वनगजों को खदेड़ने वाले शिकारी दल के कुछ सदस्य तो कुनकियों और कुछ घोड़ों पर सवार हैं। कुछ लोग पैदल ही इस अभियान में शरीक हो गए हैं। ढोल पीटकर और तुरही बजाकर हाथियों को खदेड़ा जा रहा है। झुंड में प्रायः सभी घुई हैं जिनके साथ छोटे बच्चे हैं। इन्हें खदेड़कर एक घेरे में पहुंचा दिया गया है जो लकड़ी के खंभों को गाड़कर बनाया गया है। खंभों के साथ आड़े रुख बल्लियां बांधकर घेरे को अधिक मजबूत बना लिया गया है।

अठारहवीं शताब्दीं के मध्य हैदरअली ने पहला खेदा किया था। ब्रिटिश शासन में कर्नल पियर्सन ने उन्नीसवीं शती के मध्य दूसरा प्रयत्न किया। ये दोनों प्रयत्न असफल रहे। पहला खेदा जी.बी. सेण्डर्सन ने 1873 में किया जिसमें 53 हाथी पकड़े गए थे। यह कहा जा सकता है कि मैसूर के खेदे की नींव उसी वर्ष पड़ी। तब से वहां समय समय पर खेदे द्वारा हाथी पकड़े जा रहे हैं।

सन् 1950 के खेदे में मैसूर राज्य के वन-विभाग को ढाई लाख रुपये खर्च करने पड़े थे। इसमें कुल सत्तर हाथी पकड़े गए थे। इसमें एक हाथी के पकड़ने का खर्च साढ़े तीन हजार से अधिक बैठा था।

हरिद्वार के जंगलों में हाथियों को पकड़ने के बहुत कम प्रयत्न किए गए हैं। प्राकृतिक कठिनाइयां होने से सफलता भी कम मिलती है। 1899-1900 की शीत ऋतु के खेदे में कुल सात हाथी हाथ आए थे। ज्वालापुर के रांगड़ों (मुसलमान राजपूत) ने मुझे बताया कि उनके पुरखे जब इन जंगलों के मालिक थे तब वे लोग हाथियों को पकड़ने और उन्हें बेचने का काम करते थे। पंडों की बहियों में ऐसा उल्लेख मिलता है कि हाथियों को खरीदने की गरज से कुछ राजा हरिद्वार आया करते थे। शुभ अवसरों पर हाथियों को दान में देने की प्रथा संवत 1876 तक हरिद्वार में मिल जाती है। श्रवणनाथ मठ में मुझे एक शिलालेख

मिला है। मठ के संस्थापक ने महादेव जी तथा गंगा जी का मंदिर बनवाया था तब दूसरी चीजों के साथ पांच हाथी भी दान में दिए थे।

किसी जमाने में यह लाभदायक धंधा था। उदाहरणार्थ 1948 के खेदे में पकड़े गए 35 हाथियों की बिक्री से 66,000 रुपये आ गए थे। सन् 1949 में पकड़े गए 39 हाथियों में से 35 की बिक्री से 1,47,370 रुपये मिल गए थे। यह एक रिकार्ड था। इससे अधिक कीमत पर खेदे में पकड़े हुए हाथी कभी नहीं बिके। सन् 1954 में इतनी मंदी आ गई कि पकड़े गए 68 दंती मिट्टी के भाव बेचने पड़े। शानदार दंती को कुल 500 रुपये में नीलाम करना पड़ा था। शायद यही कारण था कि मैसूर में खेदे के प्रति निराशा हो गई थी और यह छोड़ दिया गया था।

कुल मिलाकर अब तक 34 खेदे किए जा चुके हैं जिनमें 1873 जंगली हाथी पकड़े जा चुके हैं। सन् 1960 के बाद अंतिम खेदा जनवरी, 1967 में हुआ था। खेदे के लिए आमतौर पर ऐसे स्थान चुने जाते हैं जहां हाथियों के झुंड पर्याप्त संख्या में उपलब्ध हों। हाथियों को खेदे द्वारा घेरकर पकड़ने से पहले मैसूर में भी गढ़े में गिराकर हाथी पकड़े जाते थे। दक्षिण भारत के कुछ भागों में अब भी यह पद्धति व्यवहार में है। निर्दयतापूर्ण कार्य समझकर मैसूर में इसे बिलकुल बंद कर दिया गया है। मैसूर में खेदा शुरू करने से पहले बंगाल में इस पद्धति द्वारा शताब्दियों पहले हाथी पकड़े जा रहे थे। दोनों प्रदेशों की पद्धतियों की बारीकियों में बहुत अंतर थे। मुख्य भेद यह है कि बंगाल में हाथियों को पहले जंगलों में घेर लिया जाता है। उसके बाद पास में लकड़ी का घेरा खड़ा किया जाता है। तब हाथी इसमें खदेड़े जाते हैं और पकड़े जाते हैं। इस प्रकार लकड़ी के घेरे एक जगह पर स्थिर नहीं होते, परंतु एक जगह से दूसरी जगह पर आवश्यकतानुसार बदल दिए जाते हैं। मैसूर में निश्चित जगहों पर घेरे स्थापित रहते हैं। ये इस बात को ध्यान में रखकर बनाए जाते हैं कि दर्शक खेदे के सभी क्रिया-कलापों को काफी पास से देख सकें।

खेदे के लिए सर्वोत्तम मौसम दिसंबर या जनवरी है जब कि जंगल गीला नहीं होता, पानी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होता है और वन में आग लगने का अंदेशा भी अधिक नहीं होता। खेदे का प्राथमिक उद्देश्य तो हाथियों को पकड़कर वन-सेवा में लगाना है।

मैसूर डिविजन में दो जगहों में खेदा होता है : चामराज नगर तालुक में बूढ़ीपड़गा और हेग्गाडा देवाना काटे तालुक में काकनकोटे। इनमें काकनकोटे अधिक आकर्षक स्थल है क्योंकि यहां नदी का खेदा संपन्न होता है। मैसूर शहर से काकनकोटे 80 किलोमीटर दूर वनशृंखला का मुख्यालय है।

हाथियों का झुंड जब नजर आता है तब उसकी गतिविधियों को सावधानी से देखा जाता है। हाथियों को मनुष्यों की उपस्थिति का भान नहीं होने दिया जाता। खेदे के घेरे के स्थान से यह झुंड 11-12 किलोमीटर दूर भी हो सकता है। जब यह झुंड घेरे की ओर

बढ़ता है तब इसकी गतिविधियों पर सावधानी से गौर किया जाता है कि हाथियों को पता नहीं चले। इसी काम के लिए भरती किए गए आदमियों के घेरे में यह बढ़ रहा होता है। आदमी से आदमी की दूरी लगभग 20 मीटर रहती है। दिन में तो ये धुआं किए रखते है और रात को आग जलाए रहते हैं। फटे हुए बांस के पटाकों से लैस रहते हैं। हाथी घेरे से बाहर निकलने का रुख करें तो इन्हें धरती पर पटक पटककर शोर मचाते रहते हैं और उन्हें वापिस भगा देते हैं। धीरे धीरे घेरा छोटा करते रहते हैं। खेदे के अंतिम दिन जब दर्शकगण अपना स्थान ग्रहण कर लेते हैं तब आदमियों की परिधि तेजी से सिकुड़ने लगती है और हांके वाले बाड़े की दिशा की ओर बढ़ते हैं जिससे झुंड भी उधर खदेड़ा जाता है।

हांके के दल में कुछ अफसर कुनकियों पर सवार होते हैं और शेष पैदल। कुछ खोजिये जगह जगह पर नियुक्त रहते हैं। वे ऊंचे पेड़ों पर चढ़कर झुंड की गतिविधियों को देखते रहते हैं और हांका करने वाले दल को संकेत देते रहते हैं। बाड़े की ओर वाले हिस्से में एकदम चुप्पी रखी जाती है जिससे उधर बढ़ते हुए हाथियों को जरा भी आशंका न हो।

खेदे की मूल पद्धति में एक बड़े स्थान को गोल खाई खोदकर घेर लिया जाता था। यह खाई 10 मीटर चौड़ी और 8 मीटर गहरी होती थी। खुदाई में निकली मिट्टी को बाहर की ओर फेंककर खाई की गोलाई के साथ साथ एक सीधी दीवार खड़ी कर ली जाती थी। घेरे के अंदर घुसने के लिए केवल एक प्रवेश स्थान रखा जाता था जो वस्तुतया एक गहरा गढ़ा होता था। इसके ऊपर घास-फूस व मिट्टी की एक मोटी तह बिछाकर एक पुल बना दिया जाता था। घेरे के अंदर पालतू हथिनियों को छोड़ दिया जाता था, जो जंगली हाथियों को लुभाने का काम करती थीं। घेरे की दीवार में जगह जगह छिपने के स्थान बने होते थे जहां बैठे हुए लोग जंगली झुंड पर निगाह रखते थे। हथिनियों से आकृष्ट होकर नर हाथी अपने झुंड समेत उधर आते और देर या सवेर घेरे के अंदर घुस जाते थे। उचित अवसर देखकर अंदर दाखिल होने का पुल तोड़ दिया जाता था।

पकड़े गए हाथियों को कुछ समय तक पानी और भोजन के बगैर रखकर कमजोर किया जाता था। तब दुबारा पुल बनाकर पालतू हाथियों को घेरे के अंदर दाखिल करते थे। जंगली और पालतू हाथियों में तुमुल युद्ध छिड़ जाता था। एक एक हाथी को घेरकर पहले उनकी टांग में और बाद में गले में रस्से बांध दिए जाते थे। उनकी गरदनें भी आपस में बांध दी जाती थीं। बूढ़े और बेकार हाथी तथा बहुत छोटे बच्चे छोड़ दिए जाते थे।

पकड़ने के इस तरीके में कुछ सुधार होते रहे। अब इस घेरे का व्यास 20 मीटर से लेकर 60 मीटर तक रखा जाता है। 4 मीटर ऊंची मजबूत बल्लियों को गाड़कर घेरे की हदबंदी की जाती है। कभी कभी घेरे के अंदर परिधि के साथ साथ 2 मीटर चौड़ी तथा 1.3 मीटर गहरी खाई भी खोद दी जाती है। इसके अंदर घुसने का 4 मीटर चौड़ा रास्ता

खुला रखा जाता है। झुंड को घेरे की ओर ले जाने में प्रशिक्षित हाथियों की भी सहायता ली जाती है।

घिरे हुए हाथियों को असहाय तथा निराश पाकर सुशिक्षित चतुर महावत पालतू हाथियों के साथ घेरे के अंदर प्रवेश करते हैं। जंगली हाथियों को काबू करने के लिए उनकी पिछली टांगों में फंदा डालकर एक मोटे तने के साथ बांध दिया जाता है। इससे उनकी आक्रमण और प्रतिरोध करने की क्षमता में कमी आ जाती है। जरूरत के अनुसार उनके अन्य भागों पर भी बंधन डालकर उन्हें पूरी तरह जकड़ लिया जाता है।

बचाव के सभी मार्ग बंद हो जाने पर और रस्सियों से पूरी तरह जकड़े जाने पर हाथी अब पालतू हाथियों के समूह द्वारा घेरे हुए नए बंदी-स्थान–पीलखाने या क्राल में ले जाए जाते हैं।

हाथियों को बांधने का बाड़ा 10 मीटर व्यास का घेरा होता है। इसमें नाना प्रकार के घास-पत्ते, टहनियां और गन्ने का कचरा पड़ा रहता है। रात के ठंडे समय में इसमें हाथियों को दाखिल करते हैं। छह से आठ तक हाथी अंदर चले जाएं तो दरवाजा बंद कर देते हैं। अगले दिन कुनकियों को अंदर ले जाकर बंधन का काम शुरू होता है। कुनकी जंगली हाथी को घेरकर उसके इतने पास आ जाते हैं कि वह हिलडुल नहीं सकता। तब उसके गले के चारों ओर रस्सा फेंकते हैं। टांगों को भी बांध देते हैं।

जो हाथी एक समय वन में स्वच्छंद घूमते थे अब पस्त होकर बंदी बनाने वालों के आदेश मानने के लिए विवश हो जाते हैं। एक समय जो शक्ति का प्रतीक था, वह गजराज अब पूरी तरह स्वामिभक्त बन जाता है–ठीक पालतू घोड़े या गाय की तरह। लेकिन, यह भी देखा जाता है कि कई साहसी तथा शक्तिशाली हाथी इन यातनाओं के सामने सिर झुकाने की बजाए आत्महत्या करना पसंद करते हैं। वे खाना-पीना छोड़ देते हैं। उपवास के कारण उनमें कमजोरी बढ़ती जाती है, उनके माथे की हड्डियां बाहर निकल आती हैं और गाल गढ़ों में धंस जाते हैं।

नदी का खेदा

यह कार्य बहुत ही साहस और चतुराई का होता है। जंगल में हाथियों के मुख्य केंद्रों का पता लगाकर वन के सभी नाकों पर कोई दो हजार आदमी तैनात कर दिए जाते हैं। ये लोग जंगली हाथियों की आदतों से परिचित रहते हैं और उन्हें पकड़ने की कला में कुशल होते हैं। उन्हें यह पता होता है कि हाथी प्रतिदिन साथ बहती हुई नदी में जल-क्रीड़ा के लिए जाते हैं। झूमते-इठलाते हुए हाथियों का बड़ा झुंड जब उधर रुख करता है तब उनके पिछवाड़े तथा दोनों ओर से उन्हें घेर लिया जाता है। एक निश्चित समय पर नाकेवाले

लोग हवा में गोलियां चलाते हैं और उसके साथ भीषण आवाज में नगाड़े तथा ढोल पीटना शुरू कर देते हैं। चारों ओर मशालें जला दी जाती हैं। इससे हाथियों का झुंड भयभीत हो जाता है। उसे नदी की ओर जाने वाले एक नियत मार्ग पर बढ़ने के लिए मजबूर किया जाता है। कोशिश यह की जाती है कि सबसे पहले हाथियों का राजा उस ओर दौड़े। फलतः दल के अन्य हाथी भेड़-चाल की तरह नेता के पीछे चलने के लिए मजबूर हो जाते हैं।

काकनकोटे में खेदा को देखना दिलचस्प और रोमांचक है। छोटे-बड़े और विभिन्न उम्रों के हाथी चिंघाड़ते हुए नदी के अंदर घुसते हैं। कभी तो वे धारा के विपरीत तैर जाते हैं, तब इन्हें घेरकर नदी के पार बाड़े की ओर भेजने में कठिनाई होती है। दर्शकों के लिए रोचक अनुभव होता है। इस संकट के समय बुजुर्ग हाथी नन्हें बच्चों को अपने बड़े उद्दंतों, पर उठा लेते हैं और इसी तरह तैरते हुए जलधारा को पार कर लेते हैं। डूबने से रक्षा करने का यह प्रयत्न देखते ही बनता है। भागने का साहसिक प्रयत्न भी कुछ हाथी करते हैं। कुमकियों के पास आने पर घुई अधिक विरोध दिखाती हैं। यदि उनका उपद्रव कुमकियों द्वारा वश में न आए तो गोली चलाकर डराते हैं और उन्हें नदी में खदेड़ देते हैं। नदी पार करने के बाद झुंड का नेता घेरे के अंदर घुस जाए तो शेष सभी उसके पीछे हो लेते हैं। घेरे की बल्लियों को पत्तों और टहनियों से ढक दिया जाता है जिससे हाथी समझें कि घने उगे हुए वृक्षों की ही पंक्ति है। अंतिम हाथी अंदर जाता है तो दरवाजे के ऊपर बैठा आदमी रस्से को काट देता है। उनके जंगली जीवन पर यह सील लग जाती है।

पास ही एक ऊंचा मचान होता है जहां से हाथियों को बंदी बनाने की सारी प्रक्रिया देखी जाती है।

मेला शिकार

इसे एक प्रकार का खेल कहा जा सकता है। कुमकियों पर सवार होकर फंदी लोग जंगली हाथियों के झुंडों का पीछा करने निकलते हैं। फंदों की सहायता से हाथियों को फांसने वाले लोगों को फंदी कहते हैं। पहले प्रायः बच्चे पकड़ में आते हैं।

हाथियों का झुंड जैसे ही किसी ऊबड़-खाबड़ जगह पर, तंग घाटी में या टेढ़ी-मेढ़ी पहाड़ी जगह पर पहुंचता है, ये लोग झट से मशालें जला देते हैं, पटाखे छोड़ते हैं, आतिश-बाजियां चलाते हैं और कनस्तरों को पीटते हैं। डर के मारे झुंड भाग खड़ा होता है। ये लोग उसका पीछा करते हैं। हाथियों को और अधिक भयभीत करने के उद्देश्य से ये उसी तरह शोर-गुल के साथ उनके पीछे भागते जाते हैं। झुंड के शेष सदस्यों के साथ बच्चे दौड़ नहीं पाते और साथियों से पिछड़ जाते हैं।

नमक के स्थानों पर पकड़ना

शाकाहारी प्राणियों के समान हाथी भी नमक चाटता है। वनों में कुछ जगहों पर प्राकृतिक रूप में भूमि की सतह पर नमक पाया जाता है। रघुवंश में ऐसे स्थानों को सैन्धव-शिलाएं कहा गया है। जिन सैन्धव-शिलाओं पर हाथियों के झुंड अक्सर आया करते हैं उनके चारों ओर मजबूत खंभे गाढ़कर घेरे बना दिए जाते हैं। इसी तरह पानी से भरे उन तड़ागों के चारों ओर भी घेरे बना दिए जाते हैं जहां हाथी बहुधा आया करते हैं। कुछ दिनों में हाथी घेरों को देखने के आदी हो जाते हैं और उन्हें जंगल की ही एक प्राकृतिक रचना समझकर उनसे नहीं डरते। हाथियों को पकड़ने वाले लोग उन पर कड़ी निगाह रखते हैं। ज्योंही कोई हाथी या हाथियों का झुंड बाड़े के अंदर घुसा कि प्रवेश मार्ग बंद कर दिया जाता है। घिर गए हाथियों को तब उसी तरह वश में किया जाता है जैसे कि खेदे के प्रसंग में वर्णन किया गया है।

प्रशिक्षण

प्रशिक्षण के समय हाथी के साथ निर्दयता का व्यवहार नहीं किया जाता। महावत अत्यंत धैर्य से काम लेते हैं। वे जानते हैं कि नया कैदी उजड्ड और हत्यारा है और महावत को मार डालने के दांव भी लगा रहा है। परंतु महावत की कुशलता, स्नेह भरा बर्ताव, सेवाभाव और मेहनत से ये मुश्किलें धीरे धीरे दूर हो जाती हैं। इस समय कुमकी हाथी उनके नजदीक पहुंच जाते हैं और उन्हें घेर लेते हैं। तब फंदी आगे बढ़ता है और फंदा डालकर बच्चे को कुमकियों के साथ बांध देता है।

प्रतिरोध में बच्चा जोर से चिंघाड़ उठता है। जिसे सुनकर उसकी मां और कभी कभी सारा झुंड उसे छुड़ाने के लिए आ जाता है। परंतु कुमकियों पर सवार गज बंधकों द्वारा किए जाने वाले शोर-गुल के कारण उन्हें सफलता नहीं मिलती।

एकाकी नर हाथियों को सोते समय पकड़ने का भी एक तरीका है। पीछा करके उन्हें लगातार दौड़ाते रहते हैं। उन्हें सोने का मौका भी नहीं देते। जब वे थककर चूर हो जाते हैं तब रुक जाते हैं। अब हस्ति-बंधकों का दल धीर व स्थिर प्रकृति वाले हाथियों पर सवार होकर उनकी ओर बढ़ता है। हस्ति-बंधकों ने काले कंबल ओढ़े होते हैं जिससे जंगली हाथी उन्हें देख न पाए। वे हाथी पर सतर्क दृष्टि रखते हैं। जब हाथी सो जाता है तब कुमकियों को समीप ले जाते हैं। हस्ति-बंधक नीचे उतरते हैं और फुर्ती से पिछली टांगों को एक साथ बांध देते हैं।

लंका में शिकारी इससे भी अधिक साहसपूर्ण तरीका अपनाते हैं। भागते हुए हाथियों की पिछली टांगों में फंदा डालकर उन्हें वश में कर लेते हैं। इस जोखिमपूर्ण कार्य में अतिशय

दक्षता की जरूरत होती है। कोई विरले ही शिकारी इस तरीके से हाथी पकड़ पाते हैं।

प्रशिक्षण के दौरान जरूरत पड़ने पर महावत बेंत से हाथी को पीटता है। शारीरिक दंड देने के साथ साथ वह उसके मन को भी अपने वश में करने की कोशिश करता है।

घटनाओं तथा शब्दों को स्मरण रखने और व्यक्तियों को पहचानने की हाथी में असाधारण योग्यता होती है। हाथी के समान समझदार शायद ही कोई जंगली जानवर हो।

प्रशिक्षण में उसे सामान्यतया कुल सत्ताईस शब्द याद करने होते हैं। इन्हें सीख लेने पर वह घूमना, बैठना, उठना, पैर या सूंड उठाना और ठोकर लगाना आदि क्रियाएं कर लेता है। इन शब्दों को सिखाना तथा उनके अनुसार कार्य कराना इतना आसान नहीं होता। प्रशिक्षण में अच्छे कार्यों के लिए महावत हाथी को पुरस्कार रूप में गन्ने का टुकड़ा देकर उसका उत्साह बढ़ाता है। गन्ने के लालच से वह उसे नमस्ते करना तथा दूसरी बातें सिखा देता है। बाद में, गन्ने लिए बिना ही वह इन शब्दों को सुनकर आदेशों का पालन करने लगता है। तीन महीने में वह बारह शब्दों का अर्थ समझ जाता है। दक्षिण भारत में लट्ठे खींचनेवाले हाथी को आदेश के चालीस शब्द सिखाए जाते हैं।

आहार

यह शाकाहारी प्राणी बेहद पेटू है। जंगल में तो लगभग चौबीसों घंटे घास, पेड़ों के पत्ते, बेलें तथा फल खाता रहता है। बीच बीच में दोपहर के आराम के लिए रुक जाता है और फिर पेट भरने के धंधे में लग जाता है। रात को कुछ समय के लिए लेटकर गाढ़ी नींद सो जाता है और कभी कभी तो खुर्राटे भी भरने लगता है। पालतू हाथी के आगे पर्याप्त परिमाण में नाना प्रकार के चारे डाल दिए जाते हैं। प्रशिक्षण की अवधि में उसे कुछ स्वादिष्ट पकवान भी दिए जाते हैं।

पालतू हाथियों का यह भोजन होता है : पीपल, बरगद, पिलखन, कटहल आदि के पत्ते और टहनियां; बांस, बांस व ताड़ के अंकुर तथा सुकुमार पत्ते; धान, ज्वार, बाजरा व मक्की की चरी; गन्ने; अनेक प्रकार की घासें; सब तरह के अनाज; केले के पत्ते व तने; नारियल, केला और सभी फल। ईसा की दसवीं शताब्दी में हाथियों के आहार में जौ, गेहूं, मटर, चने और शालिधान दिए जाने का उल्लेख मिलता है।

कार्बेट नेशनल पार्क में जंगली हाथी निम्नलिखित चीजें खाते हुए देखे जाते हैं : घासें—बांस, कास, ऊला, नरकुल और कुछ अंश में पटेरा। कोंपलें—कम्पिल्ल (रोहिणी), पीपल, बरगद, खावड़, सांदन, कचनार, पिलखन, बहेड़ा, हरड़, खैर, बेंत आदि। पेड़ों की छालें—रोहिणी, शीशम, बरगद, सेमल, साल, कचनार, सांदन आदि। पेड़ों के तनों पर वह उद्दंतों से चोट करता है और छाल कट जाने पर सूंड से पकड़कर खींच लेता है। ऐसा लगता है कि किसी किसी पेड़ की छाल अधिक स्वादिष्ट और पोषक होती है। 20 मई, 1968

की सुबह सवा सात बजे मैंने शाल वृक्ष के तने पर आठ-दस हाथियों को छाल के लिए छीना-झपटी करते देखा था। नर हाथी तने पर उद्दंत को ऊपर से नीचे की ओर गड़ाता था। हाथीदांत की छुरी से जरा-सी भी छाल कट जाती थी तो वह स्वयं तथा हथिनियां सूंड के अग्रभाग से तथा सूंड के मोड़ से पकड़कर खींचते थे। बच्चे, माताएं और पट्ठे शाल के दो-तीन पेड़ों पर छाल को नोचने, छुड़ाने और खाने में जुटे थे। जरा-से टुकड़े के लिए भी उनमें लूट मचती थी। एक साल की उम्र का सबसे छोटा बच्चा भी छाल खाने की कोशिश कर रहा था और खुद भी तोड़ने की कोशिश कर रहा था। वृक्ष का जीवन इस छाल में प्रवाहित होता है, इसलिए हाथियों को भी इससे अपने जीवन के लिए उत्तम पोषण मिल जाता है। छाल उतर जाने से जिन पेड़ों के तने नंगे हो जाते हैं वे मर जाते हैं।

कार्बेट पार्क में जंगली हाथियों का मुख्य भोजन रोहिणी है। हाथी एक पेड़ को गिराकर उसकी कुछ टहनियां ही खाता है और आगे चल पड़ता है। एक बार में मैंने बीस हाथियों के झुंड को रोहिणी के पेड़ पर तीस मिनट तक जमे देखा। इस जंगल में उगने वाले रोहिणी के पेड़ों से यह बड़ा अवश्य था। संभवतया यह अधिक स्वादिष्ट भी था जिससे वे उसे खत्म करके ही हिलना चाहते थे।

पार्क में उगने वाली घासों में सरकंडे और कलम घास को हाथी सबसे अधिक खाते हैं। इनकी जड़ें उन्हें अधिक पोषण प्रदान करती हैं, इसलिए उनका बस चले तो वे केवल जड़ें ही खाएं। ऐसा करने में व्यावहारिक कठिनाई यह है कि जड़ों को खोदने में अधिक समय लगता है। जब पत्तियां खानी होती हैं तब सूंड में पकड़कर वह मरोड़ी देता है और 60 से 90 सेंटीमीटर लंबी घास का गुच्छा तोड़ लेता है। जब जड़ें खाना चाहता है तब पत्तों के गुच्छों को पकड़कर कई झटके देता है। इससे जड़ समेत घास उखड़ जाती है। मिट्टी को छुड़ाने के लिए वह जड़ को पैरों पर पटकता है, धोबी जिस तरह से कपड़ों को पटकता है उस तरह यह अपनी देह पर दाएं-बाएं घास को पटकियां देता है। अच्छी तरह साफ करने के बाद वह जड़ को खाता है। अनेक बार वह घास की केवल जड़ खाता है और ऊपर के पत्र-गुच्छों को कुतरकर फेंकता जाता है। इनसे हम हाथियों के आने-जाने के मार्गों को तलाश करते हैं। गर्मियों में कई जगह घास सूख जाती है परंतु उसकी लंबी जड़ें रेतीली भूमि में कई मीटर तक फैली रहती हैं। इन्हें निकालने के लिए हाथी अपने पैर का उपयोग करता है। अगले पैर की ठोकर मारकर वह जड़ को खोद लेता है और सूंड से पकड़कर खींच लेता है।

असम में काम करनेवाले हाथियों का मुख्य भोजन तारा घास या अल्पीनिया है। कामवाले दिन 9 किलोग्राम और छुट्टी के दिन 5 किलोग्राम धान प्रतिदिन दाने के रूप में उन्हें दिया जाता है। कुछ जगहों पर चावल और गेहूं के आटे से बनाई हुई 9-14 किलोग्राम चपातियां दी जाती हैं। हाथियों को दिन में कई बार खिलाया जाता है। बच्चे वाली हथिनी-घुई

को मैसूर में दस नारियल और 3 किलोग्राम चावल प्रतिदिन देते हैं।

तमिलनाडु के माउंट स्टुअर्ट और करगुड़ी वन-शृंखलाओं में उन्हें निम्नलिखित भोजन दिया जाता है :

	दाना किलोग्राम	*सूखा चारा* किलोग्राम	*हरा चारा* किलोग्राम	*नमक* ग्राम	*तेल* ग्राम
बड़ा हाथी	7	90	216	56	28
मझोला हाथी	7	79	180	56	28
छोटा हाथी	7	68	145	56	28

हाथी का पाचन अधिकतर आंतों में होता है। एक जंगली हथिनी को मारने के बाद उसके अमाशय में कुल 68 किलोग्राम मिली-जुली वनस्पतियां निकली थीं लेकिन उसकी आंतों में 568 किलोग्राम आहार मिला था। हथिनी का कुल वजन 3150 किलोग्राम से अधिक था। उसकी उदर गुहा में पूरा बना हुआ एक बच्चा भी था जिसे बाद में स्पिरिट के अंदर संरक्षित करके रखा गया था। इस उदाहरण से पता चलता है कि हाथी अपने भार के पांचवें भाग से भी अधिक परिमाण में घास-पात खा जाते हैं।

हाथी एक बार में 59 से 81 लीटर तक पानी पी जाता है। दिन भर में लगभग 225 लीटर पानी पीता होगा। पानी पीने के लिए ये दिन में दो बार नदियों या तालों पर जाते हैं। पानी में लोटना और पानी से खेल करना उनको बहुत अच्छा लगता है।

आजादी से मुंह मोड़नेवाले ये गुलाम

सन् 1934 में भोलोभद्र सेकिया ने एक हाथी खरीदा। उस समय वह 2 मीटर से कम ऊंचा था। कुछ ही वर्षों में वह बढ़िया कुनकी बन गया और एक हथिनी के साथ मिलकर हाथियों को पकड़ा करता था। उसके सिर पर घने बाल थे और सूंड की दीवार में एक चीरा था। जब यह पानी पीता था तब कुछ पानी चीरे में से बाहर निकल जाता था। अपने घर से 129 किलोमीटर दूर ये दोनों हाथी मेला शिकार के कार्य में लगे थे। एक सुबह फंदी ने एक बड़े हाथी पर फंदा फेंका। उसने जबर्दस्त मुकाबला किया। फंदी और महावत दोनों ही कुनकी की पीठ से गिर पड़े। फंदेवाला हाथी गलत दिशा में भाग निकला। दूसरा कुनकी एक अन्य हाथी को पकड़ने में लगा था, इसलिए इधर सहायता नहीं कर सका। जंगली हाथी के साथ बंधा हुआ बड़ा मखना वन में दूर ही दूर घिसटता चला गया। वहां मौजूद लोग कुछ भी नहीं कर पाए। कुछ देर बाद कुनकी को गुम हो गया मानकर वे शिविर को लौट आए। गांव में पहुंचकर उन्होंने घटना का विवरण सुना दिया।

नौ महीने बाद कुनकी अपने घर लौट आया। इस बात पर गांव का हर आदमी अचरज करता था। उसकी कमर में अब भी रस्सा बंधा हुआ था। पीठ को काटता हुआ रस्सा गहराई में चला जा रहा था। वहां एक बड़ी और लंबी विद्रधि बन गई थी। बात यह हुई कि कुनकी और उसके जंगली साथी एक-दूसरे से तब तक बंधे रहे जब तक कि रस्सा टूट नहीं गया। पालतू मखने ने आजादी को चुनने की बजाए लौट आना पसंद किया। 129 किलोमीटर दूरी तय कर के उसने गांव में आकर संतोष की सांस ली। मार्ग में उसे कई जंगलों और दो बड़ी नदियों को भी पार करना पड़ा था। खुले प्रदेश में से भी वह गुजरा था जहां विपत्ति के समय छिपने का स्थान भी नहीं था। जंगल की आजादी को छोड़कर आने के दो कारण हो सकते थे। एक तो यह कि वह रस्से से व्यथा की मुक्ति पाना चाहता था जो उसे पालकों के हाथों ही मिल सकती थी। दूसरे यह कि वह उसी स्थान में रहना चाहता था जहां उसने बचपन के पंद्रह बरस बिताए थे।

गौरीपुर के कुमार का एक दंतुर हाथी पूरे पांच साल की अनुपस्थिति के बाद स्वेच्छा से घर लौट आया था। सन् 1925 में जब वह पकड़ा गया था तब उसकी उम्र लगभग पंद्रह बरस थी। धीरे धीरे वह एक सुंदर मखना हाथी बन गया था। सन् 1942 में जब हाथी पकड़े जा रहे थे तब वह निकल भागा। उसके मालिक लालजी को बड़ी खुशी और आश्चर्य हुआ जब पूरे पांच साल बाद वह अपनी मर्जी से वापिस आ गया। यहां तक पहुंचने में उसे लगभग 800 किलोमीटर खुली धरती पर या खेतों के बीच में से गुजरना पड़ा था। उसके उद्दंत अधिक लंबे हो गए थे। उसे तुरंत हाथियों की देखभाल करने तथा उन्हें सधाने के काम पर लगा दिया गया। देखा गया कि वह कुछ भी नहीं भूला था।

असम के वन-विभाग में कम से कम ऐसे दो उदाहरणों का तो ज्ञान है जिनमें भगोड़े हाथी फिर लौट आए थे। इनमें से एक उत्तर तट पर वन संरक्षक के सर्दियों के दौरों में सम्मिलित था। उस दिन यह गोली से मारे गए एक हिरण को लादे ला रहा था। दोपहर के खाने का सामान भी उस पर लदा था। सोडा वाटर की बोतल के फटने के धमाके को सुनकर वह बिदक गया। उसने महावत को गिरा दिया और जंगल में भाग गया। खोज करने पर भी उसका पता न चला तो उसे गुमशुदा मान लिया गया। कई महीनों बाद कामरूप के दक्षिण तट पर उसे अपने घर पर आया देखकर सब अचंभे में पड़ गए। मरा हुआ हिरण और पिकनिक लंच का सामान उसकी पीठ पर वैसे ही बंधे हुए थे।

वन-विभाग की सुंदरमाला हथिनी को तो जंगल में भाग जाने की आदत पड़ गई थी। पुनः पकड़े जाने पर उसके साथ सदा छोटे बंच्चे मिलते थे जो जंगली हाथियों की संतान होते थे। जंगल से हाथी की पुकार सुनकर वह अपने को रोक नहीं सकती थी और मौका पाते ही उनके साथ भाग खड़ी होती थी। तीसरी बार भागने के कारणों की जांच करने से पता चला कि उसके पैरों की जंजीर दोषपूर्ण थी। इस बात की सूचना रेंज

आफिसर को देने में महावत से लापरवाही हो गई। सामान्यतया अंतिम कड़ियों में पेंच के साथ ढिबरी को कसकर जंजीर बांधी जाती थी। इसकी जगह महावत जूट की रस्सी के एक टुकड़े को अंतिम कड़ियों में पिरोकर काम चलाने लगा। एक दिन गांठ टूट गई और सुंदरमाला भाग गई।

कई दिनों तक उसकी तलाश की जाती रही, पर व्यर्थ। बेंत के उस रक्षित वन में बहुत-से जंगली हाथी रहते थे और उनके निशान भी इतने अधिक थे कि उनमें सुंदरमाला को खोज निकालना संभव नहीं हुआ। यह किस्सा 1933 का है।

चौदह वर्ष बाद 1947 में हाथियों को पकड़ते समय वह फिर पकड़ ली गई। मेला शिकार करनेवाले कुनकियों के एक दल ने दो बच्चों वाली एक घुई को घेर लिया। छोटा बच्चा तो अभी मां के दूध पर निर्भर था। जब घुई जरा भी नहीं डरी, उलटे पालतू हाथियों को खड़ी देखने लगी तब एक महावत ने सहसा अनुभव किया कि वह कहीं भगोड़ी तो नहीं है। उसे आदेश देते हुए वह ऊंचे स्वर में चिल्लाया : "बैठ! बैठ!" ताज्जुब की बात कि हथिनी बैठ गई। पीलखाने के लोग जानते हैं कि भगोड़े हाथी भी बैठ जाने के आदेश को कभी नहीं भूलते। फंदी झट कुनकी के ऊपर से कूदा, हथिनी की तरफ दौड़कर उसका कान पकड़ लिया और उछलकर उसकी गरदन पर जा बैठा। दोनों बड़े बच्चे भाग गए। हथिनी को जब हांककर डिपो वापिस ले जाया जा रहा था तब छोटा बच्चा पीछे चलता गया। इतनी आसानी से फिर पकड़े जाने की बात पर डिपो हंसी-मजाक और खुशी का केंद्र बन गया था। उसके आत्मसमर्पण को कुछ महावत निरी मूर्खता और कायरता बता रहे थे जब कि कुछ लोग फंदी के साहस की प्रशंसा कर रहे थे। इस समाचार को सुनकर वन के अधिकारी उधर दौड़े। पहचान सूचक निशानों से सुंदरमाला को पहचान लिया गया। खुशी की बात तो यह थी कि उसका रजिस्टर अब तक सुरक्षित था जिसमें रिकार्ड किए गऐ निशानों से इसके निशानों को मिला लिया गया। उसके बच्चे का नाम रुपहि रखा गया। सन् 1951 में प्रधानमंत्री पंडित नेहरू की ओर से उपहार के रूप में उसे जापान भेज दिया गया। यात्रा के पहले दौर में उसे रेलगाड़ी द्वारा कलकत्ता भेजना था। विदाई के समय बच्चा और सुंदरमाला दोनों ही बहुत शोकातुर थे। अपने बच्चे को ट्रक में चढ़ाने का दुखद काम मां को स्वयं करना पड़ा था। विदाई अत्यंत करुणाजनक थी।

एक बार एक हथिनी भागने के बारह बरस बाद दुबारा पकड़ी गई थी। उसके तीन बच्चे साथ में थे। अड़तालीस हाथियों के झुंड के साथ वह जंगल में विचरण करती थी। टांगों पर पड़े रस्सों के निशानों से वह पहचान ली गई। भाला चुभाकर जब उसे बैठने को कहा गया। तब उसने एकदम घुटने टेक दिए।

तीन साल पहले पकड़ी गई एक कुनकी हथिनी एक हांके में डरकर भाग खड़ी हुई। साढ़े चार बरस बाद वह भागने की जगह से 160 किलोमीटर दूर दोबारा पकड़ ली गई।

उसके साथ एक बच्चा और बीस अन्य हाथी पकड़ में आ गए। वह इतनी आज्ञाकारिणी थी कि तीन दिन में ही अपने साथियों को पकड़ने और उन्हें प्रशिक्षित करने के काम में लग गई।

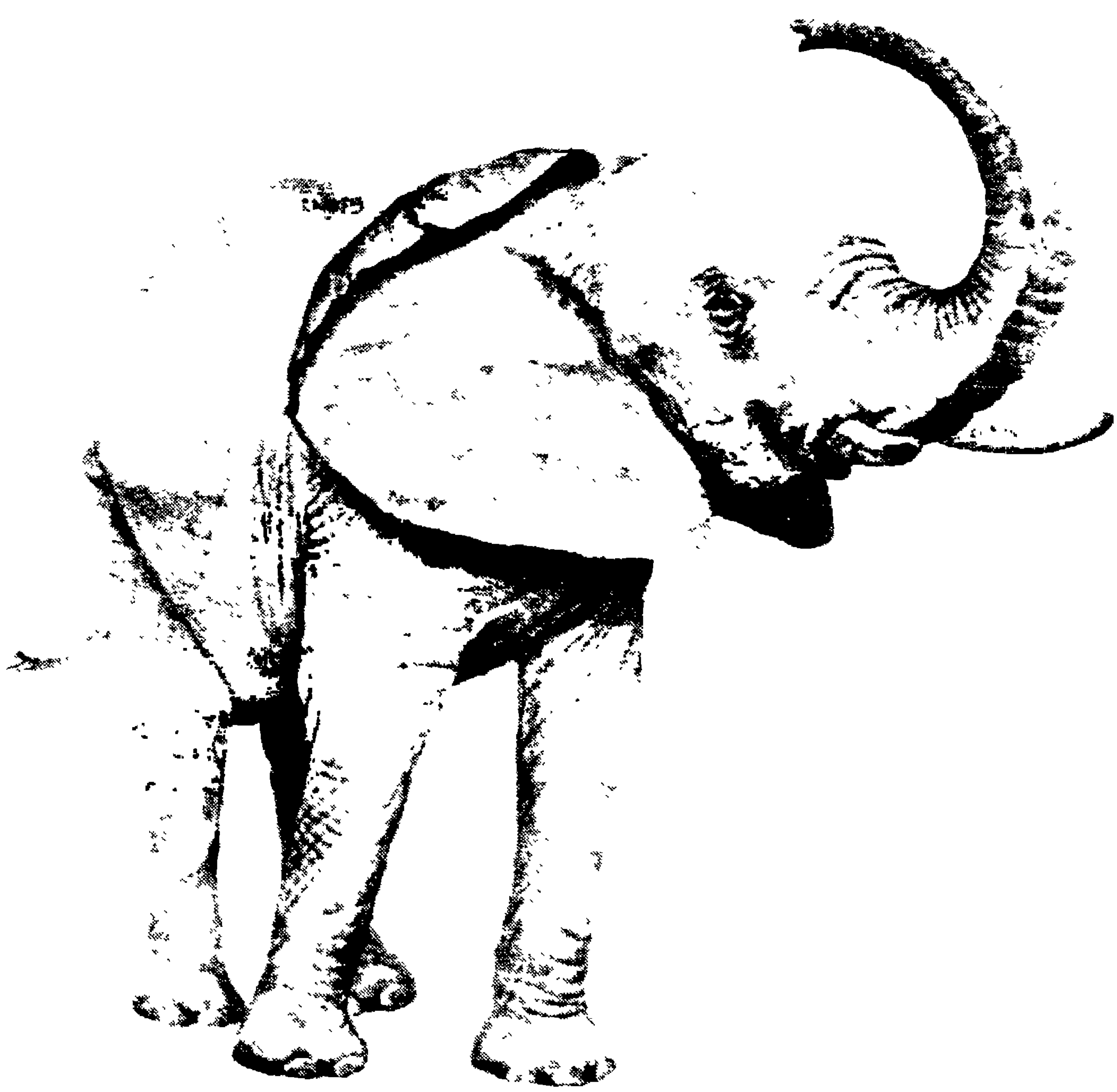
असम में भगोड़े हाथियों का दोबारा पकड़ा जाना एक साधारण बात है। वन-अधिकारी या प्रशासक के लिए ऐसे हाथी स्वामित्व के संबंध में समस्या बन जाते हैं। ऐसे एक उदाहरण में असम के एक न्यायाधीश ने पचास साल पहले एक निर्णय दिया था जिसमें भगोड़े हाथी को दोबारा पकड़ने वाले महलदार के पास ही रहने दिया गया था। इस निर्णय को देते हुए न्यायाधीश ने रोमन सम्राज्य में प्रचलित न्याय का हवाला दिया था जिसके अनुसार जंगली पशु, पक्षी, मछलियां सभी प्राणी जो धरती, समुद्र और आकाश में पैदा हुए हैं, पकड़े जाने के बाद तुरंत पकड़ने वाले के बन जाते है, क्योंकि उससे पहले वे किसी की संपत्ति नहीं थे। ऐसा प्राणी तभी तक आपका माना जा सकता है जब तक वह आपके पास है। एक बार यदि वह अपनी प्राकृतिक स्वतंत्रता में लौट जाता है तो आपका नहीं रहता । उसके बाद वह उसकी संपत्ति बन जाती है जो उसे पकड़ता है। परिणामस्वरूप हाथी की पहचान भी हो जाए तो वह पुराने मालिक का नहीं माना जाता। परंतु सरकारी हाथियों के बारे में यह नियम है कि दोबारा पकड़े गए भगोड़े हाथी सरकार को लौटाने होंगे। हां, पकड़ने आदि में जो खर्च होता है वह दे दिया जाता है।

7

व्यापार और उद्योग में

सफेद हाथी

कहा जाता है कि गौतम बुद्ध की माता महामाया ने स्वप्न में एक सफेद हाथी को अपने शरीर में प्रवेश करते देखा था। ज्योतिषियों ने इस स्वप्न का अर्थ बताया था कि आने वाला बच्चा या तो महान सम्राट बनेगा अथवा उच्च कोटि का महात्मा। यह कथा भरहुत



स्तूप (दूसरी सदी ईस्वी पूर्व) में "माया देवी का स्वप्न" नामक दृश्य में चित्रित की गई है।

एशिया में सफेद हाथी को विशेष सम्मान से देखा जाता है। हिंदू इसे राजा इन्द्र का ऐरावत हाथी मानते हैं। महर्षि वाल्मीकि के एक वर्णन में ऐरावत हाथी कैलाश पर्वत के समान श्वेत, चार उद्दंतों वाला, विविध प्रकार के आभूषणों से अलंकृत और स्वर्ण-घंटों से युक्त बताया गया है।

एक जन्म में बोधिसत्व विश्वन्तर नामक युवराज थे। वे हिमालय की चोटी के समान उज्वल, विशाल, मदधारा से अलंकृत मुखवाले, सुलक्षणों से युक्त, विनम्र, वेगवान, बलवान तथा विख्यात गंधहस्ती पर सवार होते थे। नगर के चारों ओर बनाए गए अपने दान-गृहों को देखने के लिए वे इसी हाथी पर सवार होकर जाया करते थे। एक बार पड़ोसी देश के किसी राजा ने विश्वन्तर को नीचा दिखाने की ठानी। विश्वन्तर की दानशीलता की प्रशस्ति दूर दूर तक फैल चुकी थी। ईर्ष्यालु राजाओं ने ब्राह्मणों को उस श्रेष्ठ हाथी का अपहरण करने के लिए भेजा। जयकार करते हुए ब्राह्मणों ने कहा : 'सुंदर चाल वाले आपके इस हाथी के गुणों से तथा आपकी दान वीरता से आकृष्ट होकर हम यहां आए हैं।'

यह जानते हुए भी कि द्वेष से आकुल चित्त वाले पड़ोसी राजाओं की यह चाल है, युवराज उस श्वेत गंधहस्ती पर से शीघ्र ही उतर आए। एक हाथ में पानी से भरा सोने का कलश लेकर और दूसरे हाथी में गजेन्द्र की सूंड पकड़कर वे ब्राह्मणों के सामने खड़े हो गए। 'स्वीकार कीजिए'—कहकर युवराज विश्वन्तर ने बिजली से युक्त शरदऋतु के बादल सरीखे, सोने के सुंदर आभूषणों से विभूषित उस गजेन्द्र को दान कर दिया। युवराज अत्यंत प्रसन्न थे। परंतु, सारा शिवि देश आवेश में आ गया। प्रजा कहने लगी : 'यह राज्यलक्ष्मी जा रही है।'

मदमस्त भ्रमरों से अलंकृत एवं मद-धारा से सुगंधित जिस हाथी के मुखमंडल का स्पर्श कर पवन दूसरे हाथियों के मद-लेप को अनायास ही पोंछता है, जिस हाथी के तेज से शत्रुओं का बल एवं प्रभाव क्षीण होता है तथा उनका अभिमान विलीन होता है उसको युवराज विश्वन्तर ने दान कर दिया। इस मूर्तिमान विजय को दूसरे देश ले जाया जा रहा है।

गौ, स्वर्ण, वस्त्र और भोजन—यह द्विजों को देने योग्य हैं, किंतु जिस श्रेष्ठ श्वेत हाथी में विजयलक्ष्मी प्रतिष्ठित है उसका दान करना दानवीरता का अतिक्रमण करना है।

इस गंभीर अपराध में बोधिसत्व विश्वन्तर को निर्वासित होना पड़ा था। भरहुत से प्राप्त एक प्रस्तर फलक वेस्सन्तर जातक में वर्णित गजेन्द्र को दान देने का यह दृश्य अंकित किया गया है। अतिशय विनीत भाव से गंधहस्ती खड़ा है। एक हाथ में स्वर्ण-कलश और

दूसरे में हाथी की सूंड को पकड़कर वे दान देने की रस्म को संपन्न कर रहे हैं।

सफेद हाथी प्रकृति का वैसा ही अद्‌भुत जीव है जैसे कि कभी कभी सफेद शेर, सफेद अजगर या कोई दूसरा सफेद प्राणी मिल जाता है। अन्य सफेद जीवों की अपेक्षा सफेद हाथी के पाए जाने के हमें अधिक उल्लेख मिलते हैं। प्रतीत होता है कि प्राचीन भारत में हाथियों की नस्लों को उन्नत करने वाले विशेषज्ञ इस दुर्लभ प्राणी में गहरी दिलचस्पी लेते रहे हैं। रामायाण के पाठक जानते हैं कि रावण के महलों में शुभ्र मेघों के समान श्वेत वर्ण के कुछ हाथी विद्यमान थे। दक्षिण विएतनाम की केंद्रीय तराई के जंगलों में बानगे थू ओट के पास कवायलियों ने 1961 के मार्च महीने में एक सफेद हाथी पकड़ा था। विएतनामी लोग सफेद हाथी को स्वर्ग के राजाओं का अवतार समझते हैं।

स्याम के उत्तरी जंगल में पकड़े गए एक सफेद हाथी को शाही गजशाला तक ले जाने की रस्म बड़ी रोचक थी। जंगल में कोई सड़क नहीं थी। इसलिए पहला काम एक खुला पथ बनाना था जिस पर सुखपूर्वक चलता हुआ वह समीप की नदी तक जा सके। वहां एक तैरता हुआ घर उसकी प्रतीक्षा में खड़ा था। इस घर की छत फूलों से बनाई गई थी और उसके चारों ओर लाल रंग के परदे लटक रहे थे। यात्रा मंद तथा कुछ थकाने वाली थी। हाथी को जब आराम करना होता था। तब गवैयों और नर्तकों की मंडलियां उसका मनोरंजन करती थीं। ये लोग इसी उद्देश्य से साथ लाए गए थे। तैरते हुए अस्थाई निवास से एक बार उसे उतारा गया तो उसकी शान के अनुकूल ही उसका ध्यान रखा गया। जिस फर्श पर वह खड़ा हुआ उसके ऊपर सोने की चटाई बिछाई गई थी। चमेली के फूलों से सुवासित जल से उसे स्नान कराया गया। चावल के आटे की रोटियां तथा गन्ने पेट भर खाने को दिए गए।

उसका स्वागत करने के लिए स्वयं स्याम के राजा, उसके दरबारी और कई ब्राह्मण तथा पुरोहित लंबी यात्रा तय करके नदी पर पहुंचे थे। बैंकाक पहुंचने पर हाथी को खूब सजाए हुए एक रंगीन मंडप में रखा गया। एक समारोह में उसकी देह पर अभिमंत्रित तेल चुपड़ा गया। गरदन में सोने की जंजीर पहनाई गई। दांतों पर सोने के पतरे चढ़ाए गए। नौ दिन तक जन-साधारण ने उसे उपहार दिए और उसकी पूजा की। उसके बाद बड़े समारोह के साथ उसे स्थाई गजशाला में भेज दिया गया।

ऐसा बेशकीमती हाथी कहीं रास्ते में ही नदी में डूब जाता तो? और, सचमुच 1966 की अगस्त में ऐसी दुर्घटना हो गई। थाईलैण्ड का एक सफेद हाथी राष्ट्रपति जॉनसन को भेंट किए जाने के लिए जहाज पर चढ़ाया गया था। यात्रा के बीच में ही वह जंजीर तुड़ाकर भाग खड़ा हुआ। इस उत्पात से सारा जहाज ही समुद्र में डूब गया जिसके साथ हाथी की भी जल-समाधि हो गई।

बर्मा के जंगलों में भी कभी कभी सफेद हाथी मिल जाते हैं। स्याम के समान यहां

भी शाही गजशाला में उन्हें आदर से रखा जाता था। राजकुमार और फुंगी उनकी सेवा में लगे रहते थे। लाल रेशम के रस्सों से उनके पैर बांधे जाते थे। सोने और चांदी के बरतनों में उन्हें भोजन परोसा जाता था। पक्षियों के परों से बनाए गए, सोने के हत्थे वाले, बड़े बड़े पंखों को डुलाकर मक्खियां उड़ाई जाती थीं। शुद्ध हृदयवाले, पुनीत लोग इस काम को स्वयं करते थे। उनकी नींद सुखद बनाने के लिए रात को उनके ऊपर कामदार मसहरियां तान दी जाती थीं।

जातक की कई कथाओं में सफेद हाथी का वर्णन पाया जाता है। इन गजकथाओं को अजंता की गुफाओं में चित्रित किया गया है तथा भरहुत, सांची आदि में प्रस्तर फलकों पर छेनी से उकेरा गया है। अजंता में चित्रित एक कथा में सामान्य रंग की एक हथिनी के साथ उसके दो सफेद बच्चे दिखाए गए हैं। सत्रह नंबर की गुफा में कलाकार ने षड्दंत जातक को चित्रित किया है। इसमें छहदंते हाथी के साथ में एक बहुत छोटा बच्चा है जिसका वर्ण सफेद है। बोधिसत्व की एक अन्य कथा में अंधी मां के प्रति पुत्र के स्नेह व कर्तव्यनिष्ठा का उदाहरण एक सफेद हाथी के माध्यम से इस प्रकार दिया है :

उन दिनों बनारस में ब्रह्मदत्त शासन करते थे। बोधिसत्व हिमालय प्रदेश में एक भव्य हाथी के रूप में प्रकट हुए। उनकी मां अंधी थी। एक बार उन्होंने एक वनचर की रक्षा की थी। सात दिनों से वह जंगल में भटक रहा था। अपनी पीठ पर बिठाकर उन्होंने उसे हिंस्र प्राणियों से व्याप्त सघन वन से बाहर निकाल दिया। वह वाराणसी चला गया। जंगल से आते हुए मार्ग के पेड़ों और पहाड़ों की याद करता चला था।

उन्हीं दिनों राजा का हाथी मर गया। राजा की सवारी के योग्य एक हाथी की तलाश जारी थी। वनचर की बुद्धि कलुषित हो गई। उसने राजा के शिकारियों को याद किए हुए मार्ग की पहचान बता दी। महान शक्ति-संपन्न होने के बावजूद भी बोधिसत्व ने शिकारियों को मारा नहीं। कमलताल में वह पकड़ लिया गया और राजा की गजशाला में ले जाया गया। खूबसूरत फूलों से बनाई मालाओं द्वारा उसका शृंगार किया गया। राजा ने बढ़िया पदार्थ मंगाए और उसे खाने को दिए। लेकिन, उसने जरा भी नहीं खाया।

"अपनी मां से जुदा होकर मैं कुछ नहीं खाऊंगा"—उसने कहा। राजा को जब उसकी अंधी मां की असहाय अवस्था का बोध हुआ तो उसने सफेद हाथी को मुक्त करने का आदेश दे दिया। वह वापस पहाड़ों में अपनी मां के पास चला गया। भूखी-प्यासी और पुत्र-वियोग से दुखी वह बेसुध पड़ी थी।

बोधिसत्व एक जोहड़ में से स्वच्छ पानी सूंड में भरकर ले गया, मां के ऊपर उसने छिड़का। उसे पता लगा कि मेरा बेटा आ गया है। उसने राजा को आशीर्वाद दिया।

सफेद हाथियों के शरीर के विभिन्न भागों पर हल्के रंग के दाग पड़े रहते हैं। कानों और सूंड पर ये विशेष रूप से स्पष्ट होते हैं। लेकिन, असली सफेद हाथी तो वह होता

है जिसकी सारी देह का रंग ही बदला होता है। दरअसल वह एकदम सफेद नहीं होता, अपितु हल्के लाल या गुलाबी रंग का होता है। ऐसा एक हाथी 1926 में लंदन के चिड़ियाघर में लाया गया था। उस जमाने में भी उसका दाम कई हजार पौंड था। बर्मा के जंगलों में यह एक झुंड के साथ विचरता हुआ पाया गया था। मुगलों के जमाने में भी बर्मा में सफेद हाथी पाए जाने का उल्लेख है। राजा मानसिंह ने अकबर से वायदा किया था कि वह अराकान के राजा को परास्त कर सफेद हाथी लाएंगे और सम्राट के सुपुर्द कर देंगे। पहले जमाने में सफेद हाथी तलाश करने वाले को ऊंचा सम्मान और ओहदा दिया जाता था। उसे बड़ी धन-राशि देने का रिवाज था, जीवन भर उसे करों से छूट मिल जाती थी।

सफेद हाथी पवित्र माना जाता है इसलिए उसे सवारी के काम नहीं लाया जाता। ऐसा माना जाता था कि जिसके पास यह रहता था उसके देश में वर्षा की कमी नहीं होती थी। अपार धन-धान्य होता था और सुख-समृद्धि होती थी। चक्रवर्ती राजा ऐसे हाथी को प्राप्त करने के लिए हर तरह के उपाय करते थे। उनके अमूल्य रत्नों में एक सफेद हाथी होता था। यहां दिए गए विवरणों से पाठकों को अनुमान हो गया होगा कि इसे पालने में कितना भारी खर्च बैठता है। इस विवरण से पाठक सफेद हाथी बांधने के मुहावरे का ठीक अभिप्राय भी समझ गए होंगे।

राम और रावण के युद्ध में महोदर नामक राक्षस ने कृष्ण मेघ के समान काले हाथी पर सवार होकर युद्ध किया था। मालूम होता है कि सफेद हाथी के समान काले हाथी भी मुश्किल से मिला करते थे और शायद इसीलिए वे खूबसूरत माने जाते थे। महोदर के हाथी का नाम ही सुदर्शन था। एक उपमा में वाल्मीकि लिखते हैं कि काले-कलूटे रावण के बाहुपाश में पड़ी हेमवर्णा सीता वैसी ही सुशोभित हो रही थीं जैसे किसी काले हाथी को सुनहरा कमरबंध पहना दिया गया हो।

संख्या पर नियंत्रण

डगलस हैमिल्टन के अनुसार अफ्रीका के 35 देशों में 1979 में हाथियों की संख्या 13,43,340 थी।

कीन्या के सरकारी बंद जंगल में 1962 में 11,000 के लगभग जंगली हाथी थे। सरकार का अनुमान था कि वहां जितने भी वृक्ष और वनस्पतियां हाथियों के खाने के लिए थीं उससे हाथियों की संख्या दुगुनी थी, इसलिए वहां 5,000 हाथियों को गोली से उड़ा देने का प्रस्ताव था।

सन् 1995 के मार्च महीने में प्रकाशित समाचारों के अनुसार जिम्बाब्वे के नेशनल पार्कों में हाथियों की संख्या 70 से 80 हजार तक हो गई थी। ये पार्क आमतौर पर

30 से 45 हजार हाथी संभाल सकते हैं। पार्कों का बोझ हल्का करने के लिए जिम्बाब्वे सरकार 8,600 हाथी बेचना चाहती थी। यदि ये न बिके तो सरकार के सामने इन्हें मार देने के अलावा कोई विकल्प न था।

पुर्तगाली अफ्रीका में एक बार 2,254 हाथी पकड़कर मार डाले गए और उनके मूल्यवान उद्दंत निकाल लिए गए थे। चोर-शिकारियों ने यह सब रातों-रात कर डाला था। 26 किलोमीटर लंबाई में उन्होंने तार के फंदे डालकर हाथियों के समूहों को घेर लिया था और उपने कार्य में सफलता प्राप्त की थी।

श्रीलंका में समस्या इससे भिन्न थी। वहां एक समय हाथियों की संख्या 10,000 थी, जो बाद में 800 से कम रह गई। इस विनाश को देखते हुए वहां की सरकार को इनकी सुरक्षा के प्रयत्न करने पड़े और इन्हें पकड़ने पर प्रतिबंध लगाने पड़े। संरक्षण मिलने पर वहां के वनों में इनकी वृद्धि होने लगी। आर. आलिविएर के अनुमान अनुसार 1978 में श्रीलंका में 2,000 और 4,000 के बीच में हाथी थे। भारत में जंगली हाथियों की आनुमानिक संख्या 9,950 से 15,080 है। इनमें से उत्तर-पूर्वी भारत में 1,000 से 8,000; पश्चिमी घाटों में 4,500; मध्य भारत में 900 से 2,000; पश्चिम हिमालय की तराई में 500 और अंडमान द्वीपों में 30 होंगे।

एशिया के अन्य भागों में सब से अधिक बर्मा में 5,000; फिर थाईलैंड में 2,500 से 4,500; कम्प्यूचिआ, लाओस और विएतनाम में 3,500 से 5,000; मलय में 3,000 से 6,000 और बोर्नियों में 2000 हाथी हैं।

संख्या को सीमित करने के लिए हाथियों का अंधाधुंध संहार नहीं करना चाहिए। योजना बनाकर उन्हें मारना चाहिए। भारतीय हाथियों के जीवन के विभिन्न पहलुओं पर बहुत कुछ अनुसंधान करने की आवश्यकता है। कुछ विश्वविद्यालय तथा बम्बई नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी जैसे संस्थान इसमें सक्रिय सहयोग दे सकते हैं। भारतीय तथा विदेशी फिल्म कम्पनियां और टेलीविजन की यूनिटें हाथियों को खदेड़ने, उन्हें शूट करने, उनकी चीरफाड़ आदि से संबद्ध विषयों पर छोटी शिक्षाप्रद फिल्में बना सकती हैं। मारे गए हाथियों के ढांचे अजायबघरों की शोभा बन सकते हैं। इसलिए जब भी हाथियों को शूट करना हो तब ऐसे संस्थानों को लाभ उठाने का अवसर देना चाहिए।

व्यापार के केंद्र

हाथी की बिक्री के मुख्य केंद्र उत्तर भारत में बिहार राज्य और दक्षिण भारत में कालीकट हैं। उत्तर बिहार के चार प्रसिद्ध पशु-मेलों में असम और बंगाल के जंगलों से सैकड़ों वर्षों से हाथी जाते रहे हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध सोनपुर का मेला है जिसे हरिहर क्षेत्र का मेला

भी कहते हैं। नवंबर (कार्तिक) मास की पहली पूर्णिमा में यह लगता है। इसमें लाखों नर-नारी गंगा स्नान करने यहां आते हैं। किसी समय इस मेले में छह से आठ सौ तक हाथी बिकने आते थे।

बिहार में हाथियों को बेचने का दूसरा स्थान खगड़ा मेला है, यह जनवरी में लगता है। फिर फरवरी-मार्च में सिंहेश्वर मेला लगता है और उसके बाद अप्रैल में नाकमर्द मेला।

असम और बंगाल में हाथी पकड़ने वालों के लिए चारों स्थान सदियों से माल बेचने की मंडियां रही हैं। चन्द्रगुप्त मौर्य के लड़ाकू हाथियों के खरीदने की ये मुख्य मंडियां रही होंगी। आजकल के पटना के पास जब पाटलीपुत्र में उसकी राजधानी थी, इन चारों मेलों में हजारों-लाखों हाथी बिके होंगे। पूर्व के समृद्ध जंगलों के ये निवासी उत्तर में दूर तक राजाओं के उपयोग के लिए भेजे जाते रहे होंगे।

मंगलकारी हाथी की पहचान

भारतीय हाथी के व्यापार में शरीर के भिन्न भिन्न अंगों व चिह्नों और लक्षणों को बारीकी से देखकर उसके स्वभाव आदि का अंदाज लगाने की विद्या बहुत विकसित हो चुकी है। शुभ लक्षणों वाले हाथी के अच्छे दाम मिल जाते हैं जब कि अशुभ लक्षणों वाले हाथी के लिए ग्राहक तलाश करना मुश्किल होता है। ऐसे हाथी के दाम अत्यधिक गिर जाते हैं। ये हाथी मालिक के लिए नुकसान-देह होते हैं और मौके पर दगा दे सकते हैं।

हाथी के अगले दोनों पैरों में सामान्यतया पांच पांच नाखून होते हैं और पिछले पैरों में चार चार। इस तरह नाखूनों की कुल संख्या अठारह बन जाती है। इससे कम या अधिक नाखून हों तो हाथी श्रीहीन होता है। सोलहनखा तो एकदम अशुभ होता है और इसलिए उसे बेचना लगभग असंभव होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से नाखूनों की संख्या का विचार बेमायने हो सकता है। परंतु ऐसे हाथी को अपने पास रखने में या उसे बेचने में यह महत्वपूर्ण बात होती है। निर्यात किए जाने वाले हाथी में तो इसकी उपेक्षा की ही नहीं जाती।

नया पकड़ा गया हाथी ज्यों ही डिपो में पहुंचता है उसके चारों ओर जमा हुई भीड़ की आंखें झट उसके पैरों पर पहुंचकर नाखून गिनने में लग जाती हैं। ऐसे ऐबदार हाथी को पकड़कर लानेवाले फंदी भरसक कोशिश करते हैं कि नीलामी से पहले उसे ग्राहक को दिखाया ही न जाए। उधर, खरीदार परीक्षा के लिए उसे खुली जगह पर लाने का आग्रह करता है। होशियार व्यापारी इस ऐब को छिपाने के लिए सिप्पी या किसी दूसरी चीज को उसकी शक्ल का बनाकर चिपका देता है और नाखूनों की गिनती पूरी कर देता है। खरीदार को ठगने की यह तरकीब अक्सर कामयाब हो जाती है।

अकबर के जमाने में जरा लाली लिए पीली और सफेद आंखों का होना शुभ लक्षण माना जाता था। मालूम होता है कि उस समय लोग हल्के रंगवाली आंख के हाथी को शुभ

मानते थे। आजकल के गज-विशेषज्ञ ऐसे हाथी को खतरनाक और अविश्वसनीय समझते हैं। भड़क जाने पर या खतरे के वक्त ये डरपोक साबित होते हैं। ऐसे उदाहरण मिलते हैं जब सफेद या पीली आंख वाले हाथी अभिशाप बन गए हैं और उन्हें गोली से उड़ा देना पड़ा है।

जीभ काली हो या जीभ पर काला धब्बा हो तो यह अशुभ लक्षण माना जाता है। तालू का स्याह होना भी अपशकुन है। ऐसा हाथी सवार को गिरा देता है। अशुभ सूचक इन काले निशानों को साफ करके हाथी मंडी में बेचने के लिए प्रस्तुत किया जाता है। हाथी को बांधकर जमीन पर गिरा लिया जाता है। उसे रस्सों द्वारा भलीभांति जकड़ लेते हैं जिससे वह हिलडुल न सके। मुंह को खोलकर काले दाग पर नीलाथोथा रगड़ देते हैं। इससे वह जगह जल जाती है। जख्म को भरने के लिए घी चुपड़ देते हैं। यह उपचार केवल उन्हीं हाथियों का किया जाता है, जो कम उम्र के हों। नीलेथोथे द्वारा यह सफाई अस्थायी होती है। लेकिन काले निशान के दुबारा प्रकट होने से पहले ही व्यापारी उस हाथी को बेच देते हैं।

किसी किसी हाथी के गले में बकरे की तरह दो गलथनी होती हैं, यह हाथी ऐबदार होता है। शेर की तरह तनी हुई गरदन वाला (शेरगरदना) हाथी निचगरदने के मुकाबले में अच्छा होता है। गरदन नीचे झुकाकर चलने वाले की निगाह दूर तक नहीं जाती।

उद्दंत की परीक्षा में भी यही बात देखी जाती है। जिसके उद्दंत जमीन की ओर जा रहे हैं वह पातालदंता हाथी उतना अच्छा नहीं जितना कि पलकदंता जिसके उद्दंत उठे हुए हों और पलकों की तरफ जा रहे हों। उद्दंतों से हमला करते समय पलकदंते की स्थिति लाभप्रद होती है।

हिरन जैसी आंखों वाला, उभरे मत्थेवाला (पीतवान) और बड़े कानों वाला हाथी श्रेष्ठ होता है। कान बहुत छोटे नहीं होने चाहिए।

सामने के ककुद् का खूब विकसित होना और सिर पर बालों का होना—ये अच्छी निशानियां हैं।

खाल मोटी, झुर्रीदार और जिस्म से ऐसी ढीली लटकती हुई होनी चाहिए कि मुट्ठी में पकड़ी जा सके। कबरा मोहरा होने से भी हाथी की मांग बढ़ जाती है, ऐसे हाथी की खाल पर सफेद-काले, चितकबरे निशान पड़े रहते हैं।

दुम लंबी, सत्ताईस गांठों वाली, आसानी से मुड़ने वाली, ऊपर से मोटी, ढालदार और तले से पतली होनी चाहिए। लंबाई इतनी हो कि वह पिछली टांगों के मोड़ को छूती हो। सबसे अच्छी दुम वह है जिसमें चमकीले अर्धेन्दु-आकृति बाल हों जो जरा जरा एक दूसरे के ऊपर चढ़े हों। दुम हरदम चलती रहनी चाहिए, रात को भले ही रुक जाए।

ठूंठ जैसी पूंछ होने पर दाम गिर जाते हैं। पूंछ झब्बेदार हो, असाधारण रूप से इतनी

लंबी हो कि पैरों से नीचे लटक जाए और धरती को बुहारती चले तो ऐसे हाथी को झड़दुमी हाथी कहते हैं। यह अत्यंत अशुभ माना जाता है, ऐसे हाथी को स्ट्रेसी ने भंयकर रूप से नर-संहारी बनते देखा है।

जिसकी बगलें कंधों के साथ चिपकी न हों वह हाथी बढ़िया माना जाता है क्योंकि वह बंदबगल वाले के मुकाबले तेज दौड़ सकता है। ऐसे हाथी को खुलीबगल कहते हैं।

पकड़ने के समय जो हाथी खूब लड़ता है वह भला निकलता है और अचरज की बात है कि प्रशिक्षण में वह कम तकलीफ देता है।

अच्छे सधे हुए हाथी का दाम ज्यादा मिलता है। सौदा तय करने में उम्र का भी ध्यान रखा जाता है। चालीस साल की उम्र के बाद दाम कम होते जाते हैं। मैसूर राज्य में गैर-सधाए हुए दंतुर की औसत कीमत लगभग 8,000 रुपये थी, और गैर-सधाई हथिनी की कीमत 5,000 रुपये।

हाथीदांत की कलात्मक वस्तुएं

हड़प्पा और मोहनजोदड़ो की खुदाई में प्राप्त नमूनों से ज्ञात होता है कि भारत में पांच हजार साल पहले भी हाथीदांत पर नक्काशी का काम किया जाता था। उस समय तक हाथीदांत का सजावट में महत्व हो गया था और मनुष्योपयोगी छोटे-बड़े अनेक पदार्थ इससे बनाए जाने लगे थे। पूजा के उपयोग के लिए हाथीदांत के नोकदार शंकु और मंडल बनाए जाते थे जो घरों की सजावट के भी काम आते थे। यहां मिले हाथीदांत के कुछ खिलौनों में नक्काशी का बढ़िया काम किया गया है। हाथीदांत से बनाई हुई चार पहलू वाली शलाकाएं तो अनगिनत मिली हैं जिन पर समान केंद्रवृत्त और आड़ी रेखाएं अंकित हैं। ये शलाकाएं खेलने के पासे, हार पेंडेंट और ताबीजों के रूप में प्रयोग की जाती थीं। जान पड़ता है कि उन पर जो निशान अंकित हैं उनका कुछ तांत्रिक रहस्य था।

हिंदुओं में विवाह से पहले हाथीदांत से बनाया हुआ चूड़ा कन्या की मंगलकामना से मामा उसकी कलाई में पहनाता है। कन्या के मन में भी इस चूड़े के लिए बड़ी चाह होती है। जिसकी अभिव्यक्ति हमें लोक-गीतों में मिलती है। करनाल जिले की नववधुएं, जिनकी कुहनियों तक चूड़ा सजा होता है, सावन के महीन में झूले पर बैठी गाती हैं :

चूड़ा तो हाथीदांत का
मेरी जान से प्यारा

पुराने जमाने में हाथीदांत के कारीगरों को दंतकार कहा जाता था। रथों, सिंहासनों, शयनासनों तथा राजमहलों की विविध सामग्री में हाथीदांत की पच्चीकारी करने का रिवाज था। बाणभट्ट (630 ई. पू.) ने राजा हर्ष के चरित्र में दिखाया है कि मगरमच्छ के मुख की आकृति वाले जल निर्गम मार्ग हाथीदांत के बनाए जाते थे। कैकेयी के महल में हाथीदांत

की चौकियां तथा आसन रखे रहते थे। लंका के राजमहलों में हाथीदांत के खंभे तथा झरोखे बने हुए थे जिन पर सोने की जालियां पड़ी रहती थीं। रावण के रथ में भी हाथीदांत की प्रतिमाएं बनी हुई थीं। कुम्भकर्ण के महल का तोरण हाथीदांत की चित्रकारी से सुसज्जित था।

उधर, अफ्रीका के राजमहलों में भी हाथीदांत का सम्मानित स्थान था। नाइजीरिया में कबीली सरदारों के सेवक व परिचारिकाएं अपने से ऊंचा हाथीदांत लेकर राजमहलों में खड़े रहते हैं।

हाथीदांत का तक्षण भारत के बहुत से भागों में पुराने जमाने से होता आया है। लकड़ी की अपेक्षा हाथीदांत पर नक्काशी अधिक निखरती है। दिल्ली, मुर्शिदाबाद, मैसूर और त्रावनकोर में बनी हाथीदांत की कलात्मक सामग्री सारी दुनिया में प्रसिद्ध है। केरल तथा मैसूर की चीजें बारीक काम की होती हैं। कटक में भी हाथीदांत का काम होता है। होशियारपुर और मुंगेर में हाथीदांत की पच्चीकारी का जो काम किया जाता है वह बहुत विख्यात है। देवी-देवताओं की मूर्तियां बनाने के लिए भी हाथीदांत बड़ा उपयोगी माध्यम है। इससे आम व्यवहार की चीजें, जैसे बटन, मनके, कंघियां, सुरमेदानियां, सुरमचू, मंजूषाएं, सिगरेट केस, शतरंज के मोहरे, गोटियां, कंगन और अनेक प्रकार के छोटे-मोटे आभूषण बनाए जाते हैं। अधिक महीन और महंगे कामों के लिए अफ्रीका का चुना हुआ हाथीदांत लिया जाता है।

भारत में कितने ही कुशल कारीगरों की आजीविका हाथीदांत पर निर्भर है।

बोस्टन, अमेरिका में लगी एक प्रदर्शनी में भारत में बनी हाथीदांत की वस्तुओं ने दर्शकों को आश्चर्य में डाल दिया था। उल्लेखनीय कृतियों में हवा के इशारे से हिलने वाले सुदंर गुलदस्ते और हाथीदांत के चार सौ महीन बालों से बनाया गया चंवर भी था।

हाथीदांत का संघटन

हाथीदांत आवश्यक रूप से दंती (dentine) होता है। इसमें 57 से 60 प्रतिशत चूर्णातु (कैल्शियम) के लवण रहते हैं जो मुख्यतया भास्वीय (फास्फेट) होते हैं। साथ ही 40 से 43 प्रतिशत एक कोशान्तर्द्रवय (organic matrix) और 0.24 से 0.34 प्रतिशत चर्बी पाई जाती है। अन्य दंती-रचनाओं से यह मुख्यतया इस बात में भिन्न है कि इसमें जीव द्रव्य (organic matter) बड़े परिमाण में उपस्थित होता है। बनावट में भी यह अन्य दंतियों से भिन्न है। हड्डी और हाथीदांत में एक बड़ा भेद यह है कि इसमें जो लचक विद्यमान होती है वह हड्डियों में नहीं पाई जाती; दूसरे, रुधिर ले जाने वाली बड़ी वाहिनियां इसमें नहीं होतीं जबकि हड्डी में होती हैं।

सूखने पर हाथीदांत सिकुड़ जाता है। तैयार माल को इस दोष से बचाने के लिए यह सावधानी बरती जाती है कि जो चीजें बनाई जाती हैं उसकी मोटी आकृति पहले काट ली जाती है। उसके बाद उसे स्वतः सूखने दिया जाता है। जल्दी हो तो कृत्रिम गरमी में रखकर सुखा लिया जाता है। तब पदार्थ को अंतिम रूप देने के लिए साफ कर लिया जाता है।

भास्विक अम्ल (फौस्फेरिक एसिड) द्वारा उपचार करके हाथीदांत को लचीला बनाया जा सकता है। खुले पानी में धोकर सुखा लिया जाए तो वह फिर पहले के समान सख्त हो जाता है। इस उपचार से हाथीदांत के गुणों में अंतर पड़ जाता है। यह भलीभांति रंगा जा सकता है। धूप में रखकर या उद्जन अतिजारेय (हाइड्रोजन परऔक्साइड) की क्रिया द्वारा या दहातु अतिलोहकीय (पोटाशियम परमेग्नेट) और तिग्मिक अम्ल (औजेलिक एसिड) के साथ बारी बारी से धोने के द्वारा इसका रंग उड़ाया भी जा सकता है।

कतरनें और बुरादा इकट्ठा करके हस्तिदंत-कालिमा (आइवरी ब्लैक) या 'बोन जिलेटीन' बनाने के काम में लाया जाता है। उपयुक्त उपचार करने के बाद हाथीदांत का कचरा सांचों के एक घटक के रूप में खप जाता है। इसे दो से तीन किलोग्राम प्रति घन सेंटीमीटर के दबाव पर पानी के साथ चार घंटे तक ओटोक्लेव में रखा जाता है। धोने, रंग उड़ाने और सुखाने के बाद एक पदार्थ प्राप्त होता है जिसे पीसा जा सकता है और संश्लिष्ट उद्यासों (सिंथेटिक रेजिन्स) के साथ मिलाया जा सकता है। हाथीदांत के चूरे को सांचों में भरकर कमरे के तापमान पर या ऊंचे तापमान पर संपीड़ित करके अनेक प्रकार के पदार्थ बनाए जा सकते हैं। सांचों के प्रयोजन के लिए हाथीदांत के बुरादे के साथ हड्डियों का चूरा और कृत्रिम सींग भी मिलाए जाते हैं।

छनित पारजम्बु प्रकाश (filtered ultra violet light) में रखकर संश्लिष्ट (सिंथेटिक) नकली हाथीदांतों से असली हाथीदांत में अंतर किया जा सकता है। हाथीदांत एक विशिष्ट नीली-सी आभा लिए हुए श्वेत आभा (flourescence) दिखाता है जो नकली नमूनों में नहीं होती है।

विभिन्न अंगों के उपयोग

बर्फ से ढकी हिमालय की चोटियों पर रहने वाले पुराण पुरुष शिवजी के विषय में कल्पना की जाती है कि सर्दी से बचने के लिए वे हाथी की मोटी खाल को ओढ़कर सोते हैं।[1]

---

1. प्रालेयशीतमचलेश्वरमीश्वरमीश्वरोऽपि
सान्द्रेभचर्मवसनावरणोऽधिशेते।

शिशुपालवध, सर्ग 4. 64।

पैर और सूंड की खाल को सुंदर कारीगरी के काम में लाया जाता है। इससे बक्से, छाते के स्टैंड, छोटी छोटी मेजें, तिपाइयां आदि बनाई जाती हैं।

पूंछ के मोटे कड़े बालों पर पालिश करके उन्हें सोने से मढ़ लेते हैं और उसकी अंगूठियां, चूड़ियां तथा कंगन बनाते हैं। केरल में इन बालों के छल्ले इस विश्वास से धारण किए जाते हैं कि पहनने वाले को सुख व समृद्धि प्राप्त होगी।

चौड़े और मोटे खुर चाकुओं के हत्थों, बटनों, चम्मचों और तश्तरियों को बनाने के काम आते हैं। व्यापारिक उपयोग के लिए इनकी उपलब्धि सीमित है इसलिए आर्थिक दृष्टि से इनकी उपादेयता नहीं है।

हाथी का मांस

भारतीय चिकित्सक चरक की राय में हाथी का मांस तपेदिक के रोगियों के लिए लाभदायक है। आहार में इसे नियमित रूप से सेवन किया जाए तो उनके सूखे तन की मांसपेशियां भरने लगती हैं।[1]

बर्मा में हाथी का मांस खाया जाता है। नागा लोग हाथी को पालते नहीं, यद्यपि नागा प्रदेश में हाथियों के झुंड काफी पाए जाते हैं। वे लोग शायद अपने जंगलों में पालतू हाथियों को काम करते हुए भी देखते हैं परंतु शायद ही कोई नागा महावत का काम करता होगा। इसका कारण यह है कि वे हाथी को एक बवाल समझते हैं, जो उनके धान के लहलहाते खेतों का सफाया कर डालता है और मौका मिलने पर उनके गांवों को भी नहीं छोड़ता। इसलिए वे उसका शिकार करना ही उचित समझते हैं। इस शिकार में एक तरफ तो वे एक शत्रु पर विजय पाने का गर्व अनुभव करते हैं और दूसरी ओर उन्हें दावत के लिए प्रचुर मांस की प्राप्ति हो जाती है।

मध्य अफ्रीका की चारी नदी के नाविकों का एक गीत है :

''हम गजराज को मार देंगे, हम गजराज को खा जाएंगे।

हम उसके पेट में घुस जाएंगे, गजराज का दिल और जिगर खा जाएंगे।

डेस्मौण्ड बाराडे (1964) ने एक खूनी एकदंते को गोली से मारा था। उसके मारे जाने की खुशी में गांव वाले सारी रात आग के चारों ओर नाचते रहे। उन्होंने कई टन मांस को तेज हथियारों से काट-काटकर पका लिया था। अफ्रीकी आदिवासियों को ऐसी बड़ी दावत भाग्य से ही मिलती है।

---

1. चरक, राजयक्ष्मचिकित्सित अध्याय 8, 154।

दवा-दारू में

पहले जमाने में विष देने के अनेक तरीकों में एक यह भी था कि हाथी की पीठ पर विष लगा दिया जाए। उस पर बैठने वाले मनुष्य पर विष चढ़ जाता था।[1] विषों के प्रभाव से बचने के लिए चरक बताते हैं कि हाथी के मस्तक से निकले मोती को धारण करना चाहिए।[2]

सूखी बवासीर में मस्सों पर हाथी की हड्डी, नीम और भिलावे का लेप करने की सिफारिश की जाती है।[3] हाथी के दांतों को जरा से पानी में घिसकर फोड़ों पर लेप किया जाता है। मलय में खाल के दागों को मिटाने के लिए मद का प्रयोग किया जाता है।

बाल उगाने के नुस्खों में हाथीदांत भी पड़ता है। सुश्रुत नामक वैद्य ने बताया है :

हाथीदांत को जलाकर बनाए कोयले को पीस लें। इसमें रसौंत को मिलाकर बकरी के दूध के साथ घोट लें। इसका लेप करने से हथेली पर भी बाल उग आते हैं।[4]

हाथी का शिशु जब तक घास खाना शुरू नहीं करता उसका मल दवा-दारू के काम आता है। संस्कृत में इसे करिगूथ कहते हैं। केरलीय सिद्ध वैद्यों में यह कण्डिवेन्ना या करिवेन्ना के नाम से ज्ञात है। उत्तर भारत के रस-वैद्य इसे कंकुष्ठ नाम से शूल, वायुगोला, गुदा के रोग और तिल्ली के विकारों में विरेचन के लिए देते हैं।[5]

प्राचीन संस्कृत साहित्य से पता चलता है कि हाथी का मद भी बाजार में बिकता था। द्रव्यों के श्रेणीकरण में इसे 'पण्यवर्ग्य' में गिनाया है। एक चिकित्सक इसे बालों के लिए हितकर बताता है। उसकी राय में यह त्रिदोषघ्न है, मिर्गी के दौरे को दूर करता है, विष के प्रभावों को नष्ट करता है। यहां तक कि चमड़ी के कुष्ठ को तथा कुष्ठ रोग में निकलने वाली गुमड़ियों को भी ठीक कर देता है।[6]

किसी रोगी को जब एनीमा देने से भी शौच न उतरता हो तब उसे हाथी का भय दिखाया जाता था, इससे मल प्रवृत हो जाता था।[7] इसी तरह पागल आदमी जब बेकाबू

---

1. चरक, विषचिकित्सित अध्याय 23; 119।
2. चरक, विषचिकित्सित अध्याय 23; 252।
3. चरक, अर्शचिकित्सित अध्याय 14; 15।
4. सुश्रुत. द्वियणीय चिकित्सित 1; 88।
5. केचिद्वदन्ति कुङ्कुष्ठं सद्योजातस्य दन्तिनः।
   वर्चश्च श्यामपीताभं रेचनं परिकथ्यते।।
   कङ्कुष्ठं तिक्तकटुकं वीर्योष्णिं चातिरेचनम्।
   व्रणोदावर्तशूलार्तिगुल्मप्लीहगुदार्तिनुत्।।
   रसरत्नसमुच्चय, अध्याय 3; 115, 118।
6. त्रिदोषघ्नो पस्मारविषकुष्ठचर्मकुण्ठग्रन्थिव्रणपामाविसर्पशमनः केश्यश्च।
7. चरक, सिद्धिस्थान 7; 34।

हो जाता था तब उसे वश में लाने के लिए चरक हाथी से डराया करते थे।[1] केरल में माता-पिता अपने छोटे बच्चे को हाथी की टांगों के नीचे से गुजारते हैं। उनका विश्वास है कि बड़ा होने पर बच्चा डरपोक नहीं बनेगा। हाथियों को वश में करनेवाले लोगों को अपनी सामर्थ्य से अधिक श्रम करना पड़ता है। इस से उनकी छाती में जख्म पैदा हो सकते हैं और खांसी आने लगती है।[2] चरक बताते हैं कि सांस के स्रोतों में बलगम अधिक परिमाण में आ रहा हो तो हाथी की लीद के रस को शहद में मिलाकर चाटना चाहिए।[3]

हाथी के नाखून को फूंककर सुरमों में डालते हैं। हथिनी का दूध आंखों के लिए हितकर माना जाता है।

हथिनी का दूध पोषक है। दूध देते रहने की अवधि के अनुसार इस के संघटन में अंतर होता है। बच्चा देने के कुछ दिनों बाद लिए गए दूध का निम्नलिखित संघटन मालूम किया गया है :

कुल ठोस पदार्थ	17.5	से	17.9	प्रतिशत
वसा	7.2	से	7.8	प्रतिशत
प्रोमूजिन (प्रोटीन)	2.8	से	3.9	प्रतिशत
दुग्धशर्करा (लैक्टोज)	6.5	से	6.9	प्रतिशत
राख	0.42	से	0.49	प्रतिशत

गौ के दूध की तुलना में इसमें विटामिन ए और डी कम परिमाण में रहते हैं, बी और सी अधिक तथा बी$_2$ लगभग उसी मात्रा में पाया जाता है।

हथिनी के दूध से निकाले हुए घी की स्वफेनि अर्हा (सेपोनिफिकेशन वैल्यू) 180 से 192 तक और जम्बुकी अर्हा (आयोडीन वैल्यू) 14 से 18 तक है।

यह घी कफनाशक, पित्तनाशक, भूख को बढ़ाने वाला और पेट के कृमियों को निकालने वाला है।

---

1. चरक, उन्मादचिकित्सित अध्याय 9; 82।
2. चरक, हिक्काश्वासचिकित्सित अध्याय 18; 20।
3. चरक, हिक्काश्वासचिकित्सित अध्याय 18; 116।

संदर्भ सूची

एलिफेंट गोल्ड, पैट्रिक स्ट्रेसी, 1963

वेल्थ ऑफ इंडिया, जिल्द, 3, 1952

हड़प्पा, केदारनाथ शास्त्री, 1959

रामायण

चरक संहिता,

जंगल की ओर, सुरेश वैद्य

शिशुपाल वध, माघ, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 2009 वि. सं.

रघुवंश

जर्नल बम्बई नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी

एलिफेंट्स, एस. के. एल्ट्रिंघम, 1982

पारिभाषिक शब्दावली

अंकुश : मुड़ा हुआ लोहे का हथियार जिसके नुकीले सिरे को हाथी के सिर पर चुभाकर उसे काबू में किया जाता है

इक्कड़ : वह हाथी जो झुंड से अलग अकेला रहने लगता है

उद्दंत : मुख से बाहर निकले हुए दो लंबे दांत

उन्मत्त : मदावस्था में मानसिक संतुलन खोकर दूसरों को मारने पर उतारू हाथी

एकदंता : वह हाथी जिसके एक ही उद्दंत हो

कनौती : कान के ऊपर का सिरा

कबरा मोहरा : सफेद-काले निशानों से जो हाथी चितकबरा बन गया हो

कुंजरग्रह : हाथियों को पकड़ने वाले लोग

कुनकी : असम में कुमकी को कुनकी कहते हैं

कुनकीदार : कुनकी का मालिक

कुंड : जलधारा में वह स्थान जहां पानी गहरा और निश्चल हो

कुमकी : सधाया हुआ हाथी या हथिनी जो जंगली हाथियों को पकड़ने और उन्हें प्रशिक्षित करने के काम आते हैं

कुमकीदार : कुमकी का मालिक

खुलीबगल : वह हाथी जिसकी बगलें कंधों से चिपकी न हों

क्राल : मजबूत लकड़ी की दीवार से बनाया 7 मीटर लंबा और 7 मीटर चौड़ा घेरा जिसमें नए पकड़े हाथी रखे जाते हैं

खूनी : वह हाथी जिसने किसी मनुष्य की हत्या की हो

खेदा : हाथियों को खदेड़कर एक घेरे में पकड़ने का तरीका

गजमुक्ता : कवियों की कल्पना का मोती जो किसी किसी हाथी के मस्तक में पैदा होता है

गणेश : वह हाथी जिसका एक ही उद्दंत उगा हो

गल्ला : हाथियों के झुंड (herd) के लिए उत्तर प्रदेश के तराई-वनों में प्रचलित शब्द

चरकटा : हाथी का चारा काटकर लाने वाला व्यक्ति

चारा : शेर के खाने के लिए बांधा गया पशु

चौड़ : जंगल के मध्य में या जंगल के साथ लगा हुआ बड़े वृक्षों से रहित लंबा चौड़ा मैदान जिसमें हाथी और अन्य पशु घास चरने आते हैं

छरेरी : मस्ती की हल्की अवस्था

झड़दुमी : ऐसा हाथी जिसकी पूंछ झब्बेदार हो, असाधारण रूप से इतनी लंबी हो कि पैरों से नीचे लटक जाए और धरती को बुहारती चले

दंतलियां : उद्दंतों सरीखे, परंतु उससे छोटे तकुआकार दो कर्तन (incisor) दांत (tushes) जो मुंह से बाहर निकले हुए दिखाई देते हैं

दंती : उद्दंतों वाला हाथी (tusker)। कालीदास द्वारा प्रयुक्त शब्द

दंतुर : उद्दंतों वाला हाथी (tusker)

दुमदंराजी : वह हाथी जिसकी पूंछ बड़ी हो और सिरे पर बालों का गुच्छा हो

घुई : बच्चे वाली हथिनी

नागवन : हाथियों के चरने के लिए छोड़े गए जंगल

निचगरदना : वह हाथी जिसकी गरदन नीचे झुकी रहती है

पट्ठा : किशोर हाथी जिसका मद बहना शुरू न हुआ हो

पड्डा : भैंस का छोटा बच्चा

पलकदंता : वह हाथी जिसके उद्दंत उठे हुए हों

पाठा : देखिये *पट्ठा*

पातालदंता : वह हाथी जिसके उद्दंत जमीन की ओर जा रहे हों

पीतवान : वह हाथी जिसका मत्था उभरा हुआ हो

पीलखाना : प्रशिक्षण शिविर

पीलवान : पीलखाने का अध्यक्ष

फंदी : रस्सों के फंदों की सहायता से जंगली हाथियों को पकड़ने वाले लोग

बसेलों : बांस काटने वाले व्यक्ति

बौकार : सूंड के सिरे को खोलकर अजनबी की गंध लेना

भगोड़ा : सधाया हुआ पालतू हाथी जो फिर जंगल में भाग जाए

मखना : उद्दंत रहित नर हाथी

मझोड़ा : जल धाराओं के मध्य छोटा जंगल

मद : गहरे रंग का, गाढ़ा, तैलीय, सुगंधित स्राव जो युवावस्था प्राप्त होने के बाद हाथियों के दानों में से कभी कभी रिसता है

मदावस्था : मद बहते रहने की अवधि जिसमें हाथी के स्वभाव में परिवर्तन आ जाता है

मद्दी : पैंतालीस साल से ऊपर उम्र वाला वह हाथी जिसका मद बह रहा हो

मस्त : मदावस्था में आया हुआ हाथी

महलदार : वह व्यक्ति जिसके पास जंगली हाथियों को पकड़ने के क्षेत्र का पट्टा है
मेला-शिकार : पालतू हाथियों की पीठ पर बैठकर जंगली हाथियों को फंदे में फंसाना
मैल : हथिनियों के दानों से बहने वाला गंधमय मैला स्राव
लागू : वह हाथी जो अकारण ही लोगों पर हमला करता हो (rogue)
लूणी : लेह भूमि
लेह भूमि : खनिज लवण युक्त भूमि (salt-licks) जिसकी मिट्टी को हाथी फांकता है
लौल : कान का निचला सिरा
शेरगरदना : वह हाथी जिसकी गरदन शेर की तरह तनी हुई रहती है
सखना : नर हाथी जिसके उद्दंत छोटे और ऊपर की ओर मुड़े हुए हों
सखनी : उद्दंतों वाली हथिनी
संदला : वह हाथी या हथिनी जिसमें उद्दंत या दंतलियां जड़ से न निकलें
सरीन : तरुण हथिनी जिसने अब तक संतान न पैदा की हो
साम्भर : हिरण की एक बड़ी किस्म (*Cervus unicolor* Kerr)
सैन्धव शिला : वह स्थान जहां प्राकृतिक रूप में भूमि की सतह पर नमक पाया जाता है (रघुवंश)
हस्तिबंधक : रामायण में प्रयुक्त हुए शब्द के लिए आधुनिक शब्द फंदी है
हाथी पुथी : अगरु (*Aquilaria agallocha* Roxb.) वृक्ष की छाल पर लिखी हाथियों के संबंध में एक पुरानी पुस्तक

मैसर्स श्रीराम ग्राफिक्स, सी4ए/5ए, जनकपुरी, नई दिल्ली-110058 द्वारा लेजर कंपोज
मुद्रक : कपूर आर्ट प्रेस, ए ३८/३ मायापुरी फेज़ १, नई दिल्ली ११००६४